Impact Factor 2022
6.994

Year 13 (02), Vol. XXV
August.2022

ISSN-0976-8149
U.G.C. List No. 48216
ISO 9001-2015

Manglam

Half Yearly Journal of Humanities & Social Sciences

मङ्गलम्

मानविकी एवं समाज विज्ञान की अर्द्धवार्षिक शोध-पत्रिका

A Peer Reviewed 'Refereed'Journal

Editor
Dr. Dinkar Tripathi

Manglam Sewa Samiti, Prayagraj (U.P.) India
(Regd. Under Society Registration Act 21, 1860)

सम्पादक, मुद्रक व स्वामी

डॉ० दिनकर त्रिपाठी
एसोसिएट प्रोफेसर, स्नातकोत्तर राजनीति विभाग विभाग
फीरोज़ गाँधी कालेज, रायबरेली–229001 (उ०प्र०) भारत
मो० +91-7398180008
Email- drdinkartripathi@gmail.com
https://www/.facebook.com/dinkar.tripathi.i-
https://twitter.com/DinkarManglam?t=rFxFgyDITso89Cm5-vudSA&s=08

प्रकाशक

***मङ्गलम्* प्रकाशक**
463/359–2 जी शिवम् अपार्टमन्ट
नया ममफोर्डगंज, प्रयागराज–211002 (उ०प्र०) भारत
फोन नं०–+91-9196002888
Website- www.manglamallahabad.com
Email- drdinkartripathi@gmail.com
https://www.facebook.com/manglam.joural

कम्प्यूटर ग्रॉफिक्स

संजीव कम्प्यूटर एवं प्रिन्टर्स, प्रयागराज,(उ०प्र०) भारत
फोन नं०–91-8004422059
Email- computerallahabad@gmail.com

तकनीकि सहयोग

डॉ० (श्रीमती)वंदना त्रिपाठी
मो० +91-7398180009
Email- tripathivandana01@gmail.com

आवृत्ति

प्रथम अंक– फरवरी 29

द्वितीय अंक– अगस्त 31

मूल्य

* विदेश में–**$ 80**

** देश में – ₹ 600

मङ्गलम् (अर्द्धवार्षिक द्विभाषीय) शोध पत्रिका में प्रकाशित सामग्री में दृष्टि, विचार और अभिमत लेखकों के अपने हैं, सम्पादक के नहीं। इनमें सम्पादक की सहमति अनिवार्य नहीं है। अतः पत्रिका के सम्पाक एवं प्रकाशक पर इसकी कोई जिम्मेदारी नहीं है। विवाद माननीय न्यायालय, इलाहाबाद में ही विचारणीय होंगे।

सम्पादकीय

विश्व के सम्पूर्ण धर्मों के अन्तर्गत जहाँ एक ओर ''स्वधर्म'' श्रेयस्कर होने की मान्यता प्राप्त है, वहीं दूसरी ओर ''राष्ट्रधर्म'' सभी धर्मों में श्रेष्ठतर धर्म की स्थिति प्राप्त है। यही कारण है कि वैदिक आर्ष परम्परा में राष्ट्र रक्षण की अवधारणा का अद्वितीय उद्घोष हुआ है। ''वयं राष्ट्रे जागृयाम पुरोहिताः'' की उद्भावना का समादर हमारे राष्ट्र में सदा से हेाता रहा है। भारतीय राजनीतिक क्षितिज पर राजतन्त्रात्मक सरकारों ने भी इस उदान्त भावना का स्वागत पूर्ण परिपालन कराया था। आज भारतीय लोकतन्त्रात्मक गणराज्य के लिए तो यह भावना और भी अधिक आदरणीय और उपादेय बन गयी है। यही कारण की अब भारत की अस्मिता और अवधारण के प्रतीक के रूप में हमारा तिरंगा ध्वज परम आदरणीय बन गया है। जिसका लहरता स्वरूप भला किस भारतीय नागरिक के चित्त का आकर्षण नहीं है ? किस नागरिक का मन देश प्रेम की उत्सर्गमयी पवित्र भावना से भर नहीं जाता ? किसका ह्रदय राष्ट्रीयता की लहरों से ओतप्रोत नहीं हो जाता ? तिरंगा ध्वज लहराता हुआ भला किस भारतीय का नितान्त निजी ध्वज नहीं लगता ? अर्थात् जन जन का मन भारत राष्ट्र के प्रति समर्पण तथा उत्सर्ग करने को उद्यत होकर वीररस में सराबोर हो जाता है। लहराते ध्वज को सदैव लहरते रहने के लिए सभी का मन लालायित होता रहता है। इसीलिए आबालवृद्ध जन तिरंगे के लिए ध्वनिमय हो ''झंडा ऊँचा रहे हमारा'' को गुनगुनाने लगता है।

हमारे आदरणीय प्रधानमंत्री श्री दामोदर दास मोदी जी की सत्प्रेरणा से समग्र भारत राष्ट्र के जन जन के घर पर, राष्ट्रीय एवं राज्य स्तरीय संस्थाओं पर तथा सम्पूर्ण निजी संस्थानों और विभागों के भवनों पर दिनाङ्क 13 अगस्त 2022 से 15 अगस्त 2022 तक तिरंगा फहराते रहने का एक राष्ट्र व्यापक कार्यक्रम अमृत महोत्सव के प्रतीक के रूप में मनाये जाने की व्यवस्था का अनुपालन समूचे राष्ट्र द्वारा सुनिश्चित किया गया; जो देश की अखण्डता एवं प्रियता की व्यापक

भावना का पवित्र अनुष्ठान बन गया। ऐसी उदात्त राष्ट्रीय भावना की स्थापना और विकास के जागरण के लिए माननीय प्रधानमंत्री जी बधाई के परमपात्र हैं।

मङ्गलम् सेवा समिति का परिवार घर घर झण्डा उत्तोलन के कार्यक्रम में अपनी पूर्ण सहभागिता सुनिश्चित कर राष्ट्र के प्रतिनमन करता है।

मङ्गलम् शोध जर्नल का यह पच्चीसवाँ पुष्प अपने शोधकर्त्ताओं अध्येताओं तथा समीक्षकों के समक्ष प्रस्तुत है; साथ ही सुधीजनों से सुझावों की सादर सतत अपेक्षा करता है।

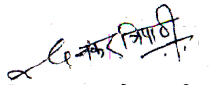

दिनकर त्रिपाठी

सम्पादक

मङ्गलम् -वर्ष 13(02) भाग-XXV,अगस्त 2022
ISSN-0976-8149

विषयानुक्रम

सम्पादकीय

क्र0सं0	शोधपत्र / लेखक	पृष्ठ
1.	**India's Foreign Policy Towards Afghanistan After Taliban's Takeover** *-Dr. Hari Mohan Sharma*	01-10
2.	**Children's Rights: Global Perspectives, Challenges and Issues of the 21st Century** *-Dr. Savya Sanchi*	11-23
3.	**The Role of Indian Women in Indian Politics and Sports: An Overview** *-Dr Ashok Kumar*	24-27
4.	**Buddhism Popularity In The Sixth Century BCE** *-Dr. R.K. Rajouria*	28-34
5.	**Problem Of Age Dtermination Of The Child : It's Remedial Measure** *-Dr. Amit Kumar Srivastava*	35-45
6.	**A Study On Importance of Yoga For Learners At Adolescent Stage** *-Dr. Sarita Kanaujiya*	46-52
7.	**Social Impact Of Population Growth** *-Dr. Barkha Agrawal*	53-60
8.	**How Needful Is The Practice Of Zero Budget Natural Farming For Rural Marsinalised Farmer** *-Dr. Hani Misra* *-Suman Lata*	61-67
9.	**Relationship Between Family Envtronment And Psychoglcal Well-Being** *-Ms. Jyoti Shukla* *-Dr.Shailendra Prasad Pandey*	68-74
10.	**The United Nation And Human Rights (Creating a Culture of Human Rights)** *-Shalini Mishra*	75-81
11.	प्राचीन राज्य मे कोष *-डॉ० रीतू पाण्डेय*	82-89
12.	दलित साहित्य की सामाजिकता *-डॉ० अंशुमान कुशवाहा*	90-98
13.	पर्यावरण : संरक्षण और कर्त्तव्य *-डॉ० राजीव कुमार*	99-105
14.	भू–राष्ट्रवाद : एक विमर्श *-डॉ० ब्रह्मदत्त अवस्थी*	106-114
15.	भारतीय संविधान डॉ० अम्बेडकर तथा पिछड़ों का आरक्षण *-डॉ० वृजेश स्वरूप सोनकर*	115-119
16.	अनन्य कोटि के नेता बाबा साहेब डॉ० अंबेडकर के जीवन का अवलोकन *-दीपक कुमार*	120-124
17.	कविता के बदले तेवर : शमशेर बहादुर सिंह की कविता में बिम्ब *-डॉ०पी.के.जयलक्ष्मी*	125-129

18. कोरोना महामारी के सन्दर्भ में सोशल मीडिया की भूमिका : एक विश्लेषण-*चेतना मिश्रा* 130-136
19. ब्रिटिश उपनिवेशवाद और मुंशी प्रेमचन्द 137-142
-डॉ० अजय सिंह चौहान
20. कानपुर नगर की मलिन बस्तियों में प्राथमिक शिक्षा सम्बन्धी अवरोधों का अध्ययन 143-149
-डॉ० गीता श्रीवास्तव
21. अशोक वाजपेई की काव्य–दृष्टि 150-156
-डॉ० संतोष कुमार पांडेय
22. मध्य हिमालय की लघु परम्पराओं का ऐतिहासिक अध्ययन (टौंस घाटी में धार्मिक परम्पराओं के परिपेक्ष्य में) 157-169
-डॉ० सुशील कुमार कगड़ियाल
23. कोविड–19 और ''सर्वेभवन्तुसुखिनः के भाव को साकार करती लोककला संस्कृति 170-175
-पूजा श्रीवास्तव
24. विष्णु प्रभाकर का कहानी संसार 176-180
-डॉ० मनोज कुमार सिंह
25. हिन्दी खण्ड काव्य परम्परा में डॉ० जयसिंह ''व्यथित'' रचित ''राघवेन्द्र'' 181-186
-डॉ० वन्दना त्रिपाठी
26. श्री अरविन्द का सामाजिक अनुचिन्तन 187-191
-डॉ० ऋतेश त्रिपाठी
27. औपनिवेशिक काल में जनजातियों में सामाजिक परिवर्तन 192-195
-डॉ० धीरज कुमार चौधरी
-सुरेश कुमार
28. प्राचीन सिल्क रोड एवं बेल्ट एंड रोड परियोजना का भारत के साथ संबंध 196-202
-डॉ० सुभाष शुक्ला
-उमा पाण्डेय
29. नगरीय प्रशासन एवं सतत् विकास लक्ष्य 203-208
-डॉ०ममता शर्मा
-कु० सपना
30. आपातकाल के दौरान स्वतंत्रता का अधिकार : आलोचनात्मक मूल्यांकन 209-216
-सुधाकर कुमार मिश्र
-प्रो० प्रवीण गर्ग
31. भारतीय संस्कृति में गृहस्थाश्रम का आधार दाम्पत्य– जीवन (स्वप्नवासवदत्तम् के परिप्रेक्ष्य में) 217-223
-रचना गुप्ता
-डॉ० दीप्ति विष्णु
32. दल–बदल कानून की प्रासंगिकता ? 224-230
-शताक्षी शर्मा
-डॉ० ऋचा बजाज
33. बंदियों के अधिकारों की रक्षा में राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग की भूमिका 231-238
-डॉ० अखिलेश्वर शुक्ला
-राज शेखर शुक्ला

Manglam-*Year 13(02),Vol.XXV,August 2022*
ISSN-0976-8149 , P-01-10

India's Foreign Policy Towards Afghanistan After Taliban's Takeover

Dr. Hari Mohan Sharma *

Abstract

Despite being a landlocked country, Afghanistan has always remained a crucial territory due to its geopolitical and strategic location. Afghanistan was at the center to the great game[1] played out between the British Empire and the Russian Empire during the 19th and early 20th century. There were two significant events that have transformed the role and importance of Afghanistan in Asia- first; the withdrawal of Soviet forces from the Afghan civil war in 1989 and second; the ouster of the Taliban regime from Afghanistan in 2001 by the US lead forces. Undeniably, its role as a breeding ground for Islamist Jihadis helped in reigniting great powers interest in the state. Afghanistan's crucial geopolitical location has made it a zone of competition, conflict and cooperation between various powers and groups. Owing to its history and geographical proximity Afghanistan always hold a lot of significance for India. Its various ruling regimes and frequently changing position has affected its relations with India dramatically. The dynamics have again changed drastically after the resurgence of the Taliban. The present study explores the relationship of the two countries in the changing scenario after Taliban's takeover of Afghanistan.

Key Words

India, Afghanistan, Taliban, Foreign Policy, Relations

Introduction: Afghanistan's Contemporary Political History

In order to understand the present situation of Afghanistan and India's foreign policy towards it, a quick run-through of its contemporaryhistory seems necessary.Afghanistan's political regimes in contemporary times can be broadly divided into four phases: First; being the Taliban regime from 1996 to 2001. India's foreign relations with Afghanistan during this phase were negligible as India was critical to Taliban rule in Afghanistan and also didn't recognize the Taliban lead government as a legitimate ruling power. Only three countries, Pakistan, Saudi Arabia and the United Arab Emirates, gave recognition to the Taliban regime. Taliban being a Pakistan-backed Islamic militant group threatened the basic tenets of democracy during their first stint to power. Moreover, its close association with Pakistan's Army and the ISI made the Indian security and military experts suspicious of its intentions concerning India. The notable occasion when the two briefly

****Associate Professor, Satyawati College , University of Delhi,Delhi***

interacted was during the hijacking of the Indian Airlines plane on 24 December 1999, which was forced to land in Kandahar by the Pakistan-based militants. The ensuing eight-day hostage crisis of Indian Airlines ended with Indian Foreign Minister Jaswant Singh personally delivering the three militants held in Indian prisons in exchange for the passengers to the Taliban.

The second phase of its relations began from 2001 onwards when the US overthrown the Taliban regime, as a response to the 9/11 attacks, and established a new government under the tutelage of Hamid Karzai. A complete shift was witnessed during this period as Afghanistan's policies turned out to be pro-India. Being the largest democracy of the world and in the region India could definitely play an important role in stabilizing the new political regime in Afghanistan. Afghanistan and India signed their first Strategic Partnership Agreement in 2011 in which India reaffirmed its commitment of assistance and formalized a framework for cooperation in various areas: political & security cooperation; trade & economic cooperation; education and capacity development; and cultural, social, civil society & people-to-people relations etc.[2]

India, being one of the top 5 bilateral donors to Afghanistan, spent USD$1 billion in development funds as of 2012[3].It also provided extensive financial aid for the construction of the new $90 million Afghan parliament building in 2005 under Prime Minister Manmohan Singh, which was later inaugurated by Prime Minister Narendra Modi in December 2015.

The third phase began from September 2014 to August 2021 under the Presidency of Ashraf Ghani. During this phase relations between the two entered in a new era of cooperation and assistance in various sectors including health, education, agriculture, disaster management, power sector and electoral management. In 2015, during the first visit of Indian Prime Minister Narendra Modi to Afghanistan both sides expressed "determination to work together, along with the international community, to combat and defeat the scourge of terrorism in all its forms and manifestations."[4] In June 2016, Modi made another trip to Afghanistan and inaugurated Salma Dam in Herat.[5] Ashraf Ghani was keen to reduce Afghanistan's reliance on Pakistani territory for trade and in diminishing the latter's influence over Afghan affairs by improving ties with India. In the wake of Islamabad denying New Delhi transit access for trade with Afghanistan and Iranboth sides agreed to improve connectivity through Iran's strategically located Chabahar port.

In October 2017, President Ashraf Ghani described relations with neighbouring Pakistan akin to a catholic marriage where "the neighbour cannot be changed; but its behaviour could change." He went on to the extent of threatening Islamabad that Afghanistan would block Pakistan's access to Central Asia,[6] if Afghanistan was not permitted to trade with India via Wagah-Attari border. He said that"We want peace with Pakistan and create a win-win situation. But if Pakistan stops our access to Wagah-Attari to reach India, our biggest trade partner, we can also stop Pakistan's access to Central Asia,"The bilateral exchanges between Kabul and New Delhi have also increased since December 2015 as Ashraf Ghani and Narendra Modi met more than five times. In terms of security cooperation, India "delivered four Mi-25 helicopters and three HAL Cheetah light utility helicopters to the Afghan Air Force (AAF) in December 2016 and even signed deals for future supply of arms and ammunition".[7]

The fourth/present phase of relations: It is marked by the re-emergence of Taliban and hasty withdrawal of US forces from Afghanistan. Just few days after the U.S. military's shameful exit, a move being claimed as a poorly managed withdrawal strategy by the Biden administration, the Taliban took control of all the major cities of Afghanistan.[8] Uncertainty prevailed as President Ashraf Ghani fled from the country, creating panic among the Afghan citizens thereby making them desperate to leave the nation as well. Amid the deteriorating security condition since August 15, many countries including the United States, Britain, Germany, France, India, Australia etc. to name a few, ramped up the evacuation of their citizens from Afghanistan. While the remaining people gathered at the Kabul International Airport in the hopes of getting out of the country.

How Taliban Won Afghanistan?

US intelligence experts claimed that it would take the Taliban 3 to 4 months to gain control over the entire country. Joe Biden, the current President of the United States of America, upon being asked about the inevitability of the Taliban takeover, answered by saying: "No, it is not. Because the Afghan troops have 300,000 well-equipped — as well-equipped as any army in the world — and an air force against something like 75,000 Taliban. It is not inevitable."[9] Despite the US and NATO pouring a trillion dollars over the last 2 decades to build up the Afghan National Security and Defense Forces, the Taliban seized nearly all of Afghanistan in just over a week's time.

The army which was claimed by Biden to be "well-equipped" showed

little or no resistance against the Taliban. According to Former western military officials and independent academics, the reason was the widespread public disillusionment with President the Ashraf Ghani's government, mismanagement within the armed forces, chronic corruption, and a sheer lack of confidence among the soldiers that they could win against the Taliban without the support of US military and intelligence.[10] A study by mint revealed how the Taliban propagated a narrative of inevitable Taliban victory in order to demoralise the troops of Afghanistan.[11] Individual soldiers and low-level government officials, of some areas, were bombarded with text messages urging them to either cooperate with the Taliban or surrender in order to avoid a worse fate. Taliban has also changed it combat strategy and the insurgents that once relied on high-value attacks using vehicle-borne IEDs to terrorize the population and strike at the government have shifted their focus in the last two years and employed covert assassination campaign to target civil-society leaders and key military personnel such as pilots. It has been argued that Taliban stuck down the physically isolated Afghan security forces through a sophisticated psychological-warfare campaign[12] It can be said that the Taliban won the war psychologically, before winning it physically.

The new Taliban government was announced on September 7, 2021 known as the Islamic Emirate of Afghanistan, headed by the acting Prime Minister Mohammad Hassan Akhund. While no country has formally recognized the Taliban regime, nations such as China, Pakistan, Russia, Iran and Qatar have kept their embassies in Kabul open and engaged in dialogues with the new government.[13] The Taliban, since recapturing the country, has taken actions which have been reminiscent of their barbaric rule of late 1990s. Shots have been fired in the air as an attempt to disperse protesters, several journalists have been detained and beaten while two people were reportedly shot dead and eight wounded in a protest in the western Afghan city of Herat.[14] According to eyewitness testimony gathered by Amnesty International, the Taliban extra judicially executed nine of the ANDSF (Afghan National Defence Security Forces) members after they had surrendered, killings that appear to be war crimes.[15] The Ministry for Propagation of Virtue and Prevention of Vice has been re-established, which under previous rule enforced prohibitions on behaviour deemed to be un-Islamic.

All the development and gains made by Afghans' in standard of living since the US invasion are now threatened under the rule of the Taliban.

UN officials have warned that Afghanistan is facing collapse, as the poverty rate is climbing, hunger is soaring, and the economy is tanking. According to UNDP (United Nations Development Programme), 97 percent of the population is at risk of sinking below the poverty line by mid-2022, unless a response to the country's political and economic crises is urgently launched. It further indicated that the GDP could contract by as much as 13.2 percent, leading to an increase in the poverty rate of up to 25 percentage points.[16] Making the situation worse is the pause in aid by several countries and international organizations which had been the lifeline of Afghanistan's public health sector and the economy. All of this is taking place while the country is in the midst of the COVID-19 pandemic.

Indian Foreign Policy towards Afghanistan- Post 2001

Indiahas pursued a soft power strategy towards Afghanistan after 2001 that was contrary to its hard power approach in late 1990's. India has huge stakes in Afghan geopolitics and has several security threats to contain. Some of India's major concerns are- the renewed strategic interests of great powers in the region, China's increasing influence, terrorism and radicalization, Pakistan's active interest in Afghanistan's internal affairs and deep ties of its military with Taliban leadership, geopolitical ramifications of Taliban's success in the Afghanistan etc. Apart from that, development, reconstruction, human rights and political stability of Afghanistan are also some of the emerging challenges for Indian establishment. India is also working with like- minded countries to pursue some of the common objectives in the region and applying multiple strategies to ensure peace and stability in Afghanistan.

India's soft power policy approach towards Afghanistan has been guided by several interests such as:

1. Containing religious extremism, terrorism and Pakistan's influence in Afghanistan: India is actively engaged in preventing Afghanistan under Taliban from being used as a base by Pakistan for training anti-Indian extremists and to launch terrorist strikes in India. India's long term strategic and political interests lies in to establishing a stable, independent and democratic government in Afghanistan that enjoys legitimacy and exercise authority over the whole of its territory, maintain peace, contain radicalization and focus on development.
2. Increasing its access to Central Asia: Afghanistan being situated at the crossroads of West, South and Central Asia makes it a gateway for

India to expand its influence in the Central Asian region. Additionally, India needs new energy resources to fuel its economy. The proposed, $7.6 billion Turkmenistan-Afghanistan-Pakistan-India (TAPI) pipeline project, of 1,814 km, would carry 33 billion cubic metres of gas and India would receive 14 bcm/y, representing 1.5 percent of India's total annual energy consumption.[17] The smooth transportation of Central Asian energy resources to India requires stability in Afghanistan, whose territory the TAPI pipeline must cross, giving India strong incentives to promote stability there. Central Asia also has a geopolitical significance as currently major powers such the US, China and Russia have started competing with each other to enhance their role and influence in the region. In this regard the 'Connect Central Asia' policy framework which is based on pro-active political, economic and people-to-people engagement with Central Asian countries, both individually and collectively is of immense important for India.[18] This approach can be seen as an extension of India's 'extended neighbourhood' policy.

3. Expanding regional influence: India has always showcased its willingness of becoming a regional power followed by a potential global power in the long run. Expanding its goodwill and influence are major factors behind India's proactive policy towards Afghanistan. By being one of the major donors for Afghanistan, India has tried to portray itself as an economic power that can provide necessary aid to the needy states in its neighborhood.
4. Strategic balance: India has always tried not to allow the region being used as grand by major powers of the world to compete for their global geopolitical interests. Instability attracts intervention and creates scope for outside players to intervene in the internal affairs of different states in the region.

India's Development Initiatives and Foreign Policy after the Fall of Kabul

India has initiated multiple infrastructural projects,Small Development Projects (SDP's) and Humanitarian Assistance programmes in Afghanistan. Two of the prominent large-scale infrastructural projects include Zaranj-Delaram Highway and Salma Dam. By assisting in SDPs India aimed to provide basic facilities (like building health clinics, schools, public toilets, bridges, bore wells etc.) to the people of Afghanistan and help in the reconstruction and infrastructural development of Afghanistan. Humanitarian

assistance has been provided in the areas of education, health, food and aviation. India has donated aircrafts to the state-run Ariana Afghan airline in addition to military vehicles and military helicopters, has gifted 400 buses and 200 mini-buses for bolstering urban transportation, and has built health clinics and reconstructed hospitals besides donating ambulances and building Sulabh toilets in Kabul.[19] Addressing the Afghanistan Conference in Geneva in November 2020, External Affairs Minister S Jaishankar said that, "no part of Afghanistan today is untouched by the 400-plus projects that India has undertaken in all 34 of Afghanistan's provinces."[20] Most of these assets have now been captured by the Taliban as they regained control of the capital and most of the country on 15th August, 2021.

The sudden collapse of the western-backed government in Kabul has put India in a vulnerable position. On August 16, a day after the Taliban seized control of the Afghan capital city, India initiated Operation Devi Shakti, a mission to evacuate its citizens and Afghan partners from Kabul. More than 550 people were evacuated via six flights.[21] Out of the 550 people, 260 were Indians, while others included embassy personnel, Afghan Sikhs and Hindus.

The power shift in Afghanistan has made India wary of its neighbours. For India, the possibility of losing a key strategic ally in South Asia may surpass the concerns related to its $3 billion investment in Afghanistan. A major reason for India's assistance to Afghanistan was to prevent the Taliban from conducting anti-Indian activities in the region, but now, contrary to India's interests, the Taliban itself has regained control over the entire nation. Expanding its regional influence, as stated above, was another reason behind India's cordial relations, which seems to have gone in vain as Afghanistan will now have a pro-Pakistan government which will in turn benefit China, Pakistan's all weather friend and India's key rival.

India has chosen to pursue a 'wait and watch' approach, carefully monitoring the evolving situation and waiting for opportunities for new engagements. Wendy Sherman, the US Deputy Secretary of State has stated on October 6, 2021that "both India and the US have a similar approach on the way forward in Afghanistan that included the Taliban ensuring an inclusive government and that Afghanistan must not become a safe haven for terrorists".[22]

On August 31, 2021, the first official meeting between India and Afghanistan took place between Deepak Mittal, the Ambassador of India

to Qatar, and Sher Mohammad Abbas Stanekzai, the Head of Taliban's Political Office in Doha. Discussions focused on safety, security and early return of Indian nationals stranded in Afghanistan. The travel of Afghan nationals, especially minorities, who wish to visit India, also came up. Ambassador Mittal raised India's concern that Afghanistan's soil should not be used for anti-Indian activities and terrorism in any manner. The Taliban Representative assured the Ambassador that these issues would be positively addressed.[23] Sher Mohammad Abbas Standkzai conveyed that India is "very important for this subcontinent" and that his group wants to continue Afghanistan's cultural, economic, political and trade ties with India like in the past.[24] Despite the meeting between Mittal and Abbas Standzai, India has remained non-committal on the question of recognising the Taliban as the legitimate government in Afghanistan.

Road Ahead for Indo-Afghan Relations

Now with the resurgence of the Taliban, the threat of terrorism is escalated, not only for the nations of the region like India but for European countries and the United States as well. It is time to constitute a greater counterterrorism force and intelligence-sharing body with partners and allies to face the potential threat of radical and fundamentalist ideology of the Taliban and its supporters. United Nations Secretary-General Antonio Guterres called on the world to work together to "suppress the global terrorist threat in Afghanistan". "The international community must unite to make sure that Afghanistan is never again used as a platform or safe haven for terrorist organizations,"[25] Guterres told an emergency UN Security Council meeting on Afghanistan.

India is in no hurry to recognize the Taliban immediately especially at a time when no other country has established official relations with the country. But if at all Afghanistan chooses to have an inclusive government and not use Afghan soil for terrorism against India. India can engage with the country economically as it seems to have a way ahead. Afghanistan, despite being under the control of the Taliban, is in the midst of a crippling economy, making them increasingly dependent on Pakistan, China, and Iran. Yet, for the sake of greater strategic autonomy, the Taliban are likely to search for new development partners. These economic compulsions open up an opportunity for India to fill in – and it already has a head-start over everybody else.

However, it is very difficult to trust the Taliban looking back on its

past support to al-Qaeda and its abysmal record of human rights violations. Additionally, the manner in which the Taliban seized control at gunpoint and is killing innocent civilians does not illustrate any distinct change in the organization's character. The international community needs to monitor the activity and the pledges made by the Taliban leaders for the basic rights and security of the Afghan people. It is the collective responsibility of the international community that the Taliban must be made to act, and not just speak words in terms of adhering to international norms and laws.

References

1. *The term Great Game was used to describe the rivalry that occurred between Great Britain and Russia as their spheres of influence in Mughal India, Turkestan and Persia (Iran) moved the two powers closer to one another in South-Central Asia. For more details refer to: "Story Map Cascade." Www.loc.gov, www.loc.gov/ghe/cascade/index.html?appid=a0930b1f4e424987ba68c28880f088ea.*
2. *India -Afghanistan Relations. www.mea.gov.in/Portal/ForeignRelation/afghanistan-aug-2012.pdf.*
3. *Mitton, John. "The India–Pakistan Rivalry and Failure in Afghanistan." International Journal: Canada's Journal of Global Policy Analysis, vol. 69, no. 3, 9 July 2014, pp. 353–376, 10.1177/0020702014540281.*
4. *Kaura, Vinay. "India-Afghanistan Relations in the Modi-Ghani Era." Indian Journal of Asian Affairs, vol. no 30, (2017, June 1). pp. 29–46.*
5. *"At Afghan Dam Inauguration, PM Promises: India Will Not Forget You." The Indian Express, 5 June 2016, indianexpress.com/article/india/india-news-india/narendra-modi-afghanistan-salma-dam-inauguration-ashraf-ghani-2834106/.*
6. *Chaudhury, Dipanjan Roy. "Ashraf Ghani Warns Action against Pakistan If Access to India Blocked." The Economic Times, economictimes.indiatimes.com/news/politics-and-nation/ashraf-ghani-warns-action-against-pakistan-if-access-to-india-blocked/articleshow/61209630.cms?utm_source=contentofinterest&utm_medium=text&utm_campaign=cppst. Accessed 29 July 2022.*
7. *"A See-Saw Relationship: An Overview of Afghanistan's Ties with India and Pakistan." E-International Relations, 6 Aug. 2020, www.e-ir.info/2020/08/06/a-see-saw-relationship-an-overview-of-afghanistans-ties-with-india-and-pakistan/.*
8. *Livemint. "Afghanistan Crisis: Over 1 Lakh People Evacuated so Far. Check Full Detail." Mint, 28 Aug. 2021, www.livemint.com/news/india/afghanistan-crisis-over-1-lakh-people-evacuated-so-far-check-full-detail-11630134826649.html.*
9. *The White House. "Remarks by President Biden on the Drawdown of U.S. Forces in Afghanistan." The White House, 8 July 2021, www.whitehouse.gov/briefing-room/speeches-remarks/2021/07/08/remarks-by-president-biden-on-the-drawdown-of-u-s-forces-in-afghanistan/.*
10. *Kazmin, Amy, et al. "Low Morale, No Support and Bad Politics: Why the Afghan Army Folded." Financial Times, 15 Aug. 2021, www.ft.com/content/b1d2b06d-f938-4443-ba56-242f18da22c3.*
11. *"How Did the Taliban Take over Afghanistan so Quickly?" Mint, 16 Aug. 2021, www.livemint.com/news/world/how-did-the-taliban-take-over-afghanistan-so-quickly-11629107483285.html.*
12. *Jensen, Benjamin. "How the Taliban Did It: Inside the 'Operational Art' of Its Military Victory." Atlantic Council, 16 Aug. 2021, www.atlanticcouncil.org/blogs/new-atlanticist/*

how-the-taliban-did-it-inside-the-operational-art-of-its-military-victory/.

13. *"Who Are the Taliban and What's next for Afghanistan?" Mint, 28 Sept. 2021, www.livemint.com/politics/news/who-are-the-taliban-and-what-s-next-for-afghanistan-11632751216348.html.*
14. *"Taliban Disperse Protesters in Kabul; Two Killed in Herat." Hindustan Times, 8 Sept. 2021, www.hindustantimes.com/world-news/taliban-disperse-protesters-in-kabul-two-killed-in-herat-101631050885067.html.*
15. *The Taliban extra judicially executed nine of the ANDSF (Afghan National Defence Security Forces) members after they had surrendered, killings that appear to be war crimes.*
16. *97 percent of Afghans could plunge into poverty by mid 2022, says UNDP: United Nations Development Programme. UNDP. (n.d.). Retrieved July 29, 2022, from https://www.undp.org/press-releases/97-percent-afghans-could-plunge-poverty-mid-2022-says-undp?utm_source=EN&utm_medium=GSR&utm_content=US_UNDP_PressRelease_Brand_English&utm_campaign=CENTRAL&utm_source=EN&utm_medium=GSR&utm_content=US_UNDP_PressRelease_Brand_English&utm_campaign=CENTRAL&utm_source=EN&utm_medium=GSR&utm_content=US_UNDP_PressRelease_Brand_English&utm_campaign=CENTRAL&c_src=CENTRAL&c_src2=GSR&gclid=Cj0KCQjwio6XBhCMARIsAC0u9aFZ_AePtlsEQ3BrnOGbq3G3N1PIiutsrcy5-XHV7l-7JMgCsTi6Lw0aAjTKEALw_wcB*
17. *International Programs at RAND CENTER for ASIA PACIFIC POLICY for More Information Explore the RAND Center for Asia Pacific Policy View Document Details. www.rand.org/content/dam/rand/pubs/occasional_papers/2012/RAND_OP387.pdf.*
18. *"Keynote Address by MOS Shri E. Ahamed at First India-Central Asia Dialogue." Www.mea.gov.in, www.mea.gov.in/Speeches-Statements.htm?dtl/19791/. Accessed 29 July 2022.*
19. *Delhi August 17, Koustav Das New, et al. "Decoded | India's Investments in Afghanistan as Taliban Return." India Today, www.indiatoday.in/business/story/decoding-india-investments-in-afghanistan-return-of-taliban-impact-1841897-2021-08-17.*
20. *"Explained: What Are India's Investments in Afghanistan?" The Indian Express, 24 Aug. 2021, indianexpress.com/article/explained/explained-indias-afghan-investment-7406795/*
21. *"Over 550 People, Including over 260 Indians, Evacuated from Afghanistan: Govt." Hindustan Times, 27 Aug. 2021, www.hindustantimes.com/india-news/over-550-people-including-over-260-indians-evacuated-from-afghanistan-govt-101630064820414.html#:~:text=Click%20here%20X-.*
22. *https://www.theweek.in/news/india/2021/10/06/india-and-us-have-one-mind-and-one-approach-sherman-on-afghanistan.html?fbclid=IwAR2r2L878WDxFFVdcDDxyAH-3S2plceGqQLrdP7APgDc4ReI6rAGsXC9dto*
23. *"Meeting in Doha." Mea.gov.in, mea.gov.in/press-releases.htm?dtl/34208/Meeting_in_Doha. Accessed 29 July 2022.*
24. *"Could the Taliban Get India and Pakistan to Cooperate?" Thediplomat.com, thediplomat.com/2021/11/could-the-taliban-get-india-and-pakistan-to-co-operate/. Accessed 29 July 2022.*
25. *"World Must Unite to Combat 'Global Terrorist Threat' in Afghanistan: UN Chief." NDTV.com, www.ndtv.com/world-news/un-chief-antonio-guterres-world-must-unite-to-combat-global-terrorist-threat-in-afghanistan-2511840. Accessed 29 July 2022.*

Manglam-Year 13(02),Vol.XXV,August 2022
ISSN-0976-8149 , P-11-23

Children's Rights: Global Perspectives, Challenges and Issues of the 21st Century

*Dr. Savya Sanchi**

Children and childhood across the world, have broadly been construed in terms of a 'golden age' that is synonymous with innocence, freedom, joy, play and the like. It is the time when, spared the rigours of adult life, one hardly shoulders any kind of responsibility or obligations. But, then, it is also true that children are vulnerable, especially when very young. The fact that children are vulnerable, they need to be cared for and protected from the harshness of the world outside and around. In a civilised society, the importance of child welfare cannot be underestimated because the welfare of entire community, its growth and development, depends on the health and well-beings of its children and the future well-being of the nation depends on how its children grow and develop. However, these wishful and optimistic sayings look shallow and no more than a rigmarole when one encounters the reality of child labour and exploitation in the unorganized and organized sector of the country. Realizing the deprived and vulnerable condition of children, the law makers of the country have accorded a privileged status to children. Yet there have been gross violation of children's rights since independence and serious gaps in the delivery of services for children. There is a need therefore to understand the core principles for delivering services to children and an adherence to a rights based perspective.

For the protection of rights of children several initiatives have been taken at international level as well as national level. India has adopted all most every international initiative in its laws. Part-II of the paper examines the international instruments for the protection of rights of children. Part-III deals with the national instruments for the protection of rights of children which includes constitutional and legislative provision, child welfare scheme and institutional framework for welfare of children. Part-IV concludes the work.

Children Rights in International Perspective

The movement for the rights of the child has long history. The first impression of international concern over the situation of children came in 1923 when the council of the newly-established non-governmental organization "Save the Children International Union" adopted a five-point

Assistant Professor Department of Sociology Arya Kanya PG College (University of Allahabad) Prayagraj (U.P.)

declaration on the rights of the child which described the basic conditions a society should meet in order to provide adequate protection and care for its children. The next year, the Union persuaded the League of Nations to adopt the same declaration. Since the League of Nations held its meeting in Geneva, this 1924. Declaration of the Rights of the Child came to be known as the "Declaration of Geneva". Recognizing that 'mankind owes to the child the best that it has to give', the five simple principles are as: first-Child must be given the means needed for its normal development, both materially and spiritually. Second-Hungry child should be fed; sick child should be helped; erring child should be reclaimed; and the orphan and the homeless child should be sheltered and succoured. Third-Child must be first to receive relief in times of distress. Fourth-Child must be put in a position to earn a livelihood and must be protected against every form of exploitation. Fifth-Child must be brought up in the consciousness that its best qualities are to be used in the service of its fellow men.

These principles established the basis of child rights in terms of both protection of the weak and vulnerable and promotion of the child's development. The Declaration also made it clear that the care and protection of children was no longer the exclusive responsibility of families or communities or even individual countries; the world as a whole had a legitimate interest in the welfare of all children. In 1946, the Economic and Social Council of the United Nations recommended that the Geneva Declaration be reaffirmed as a sign of commitment to the cause of children. The same year, the United Nations established a specialized agency-UNICEF with a mandate to care for the world's children. In 1948, the General Assembly of the United Nations approved an expanded version of that text under the Universal Declaration of Human Rights (UDHR). The UDHR contains three specific references about children and their rights.

Article 25(2) of the UDHR says that: "Motherhood and childhood are entitled to special care and assistance. All children whether born in. or out of, wedlock shall enjoy the same social protection."

Article 26 of UDHR contemplates that everyone has the right to education. This article says that "Parents have right to choose the kind of education that shall be given to their children."

Thus, when the UDHR was adopted, it was assumed that children's right had been taken care of on the whole. But this was, however, not found to be fully adequate to the situation of children. It was in this background

that the General Assembly adopted the Declaration of the Rights of the Children on 20 November 1959.

The 1959 Declaration expanded the five basic principles of the Geneva Declaration to ten basic principles. The General Assembly proclaims this Declaration of the Right of the Child to the end that he may have a happy childhood and enjoy for his own good and for the good of society the rights and freedom herein set forth, and calls upon parents, upon men and women as individuals, and upon voluntary organization, local authorities and national government to recognize these rights and strive for their observance, through legislative and other measure progressively taken in accordance with these ten principles.?

These ten principles are as

1. Non-discrimination.

2. Special protection, opportunities and facilities to develop physically, mentally, morally, spiritually and socially in a healthy manner and in conditions of freedom and dignity.

3. The right to a name and nationality.

4. The right to social security, adequate nutrition, housing, recreation and medical services.

5. The differently-abled child to be given special treatment, education and care.

6. The need for love and understanding so that the child grows in the care and responsibility of his/her parents, and in an atmosphere of affection and moral and material security.

7. Entitlement to education, which should be free and compulsory, at least in the elementary stages.

8. The child should be among the first to receive protection and relief in all circumstances.

9. Protection against all form of neglect, cruelty and exploitation, including that association with employment.

10. Protection from practices that may foster racial, religious and other form of discrimination.

However the responsibility of the family, which is the natural and fundamental group unit of society for the care and education of dependent children, has been recognized by virtue of article 10(1) of the International Covenant on Economic, Social and Cultural Rights, 1966. **Article 10(3)**

of the ICESCR provides that:

"Special measures of protection and assistance should be taken on behalf of children and young person without any discrimination for reasons of parentage and other conditions. Children and young person should be protected from economic and social exploitation. Their employment in work harmful to their morals, or health, or dangerous to life or likely to hamper their moral development, should be punishable by law. States should also set age limits below which the paid employment of child labour should be prohibited and punishable by law."

Article 24 of International Covenant on Civil and Political Rights, 1966 provides:

1) Every child shall have, without any discrimination as to race, colour, sex, language, religion, national o social origin, property or birth, the right to such measures of protection as are required by his status of a minor on part of his family, society and the state;
2) Every child shall be registered immediately after birth and shall have name;
3) Every child has the right to acquire nationality."

Article 13 of the ICESCR provides that state parties to this covenant recognize the right of everyone to education. It is necessary for the full development of the human personality and the sense of their dignity. Article 18(4) of the ICCPR says the same thing in relation to moral and religious education.

The United Nations General Assembly adopted another Declaration on Social Progress and Development in 1969. Part I of the Declaration, while discussing the concept of family as a basic unit of society, observed that the growth and well-being of its members, particularly children and youth, should be assisted and protected.' Part II provides for the protection of the rights of children.

Another Declaration on Protection of Women and Children in Emergency and Armed Conflict was adopted by United Nations General Assembly in 1974. This provide for prohibition of attacks and bombings on civil population inflicting incalculable suffering especially on women and children who are the most vulnerable members of the population. It was further provided that measure such as prosecution, torture, inflicting heavy losses on civilian population including children shall be condemned, and that states should ensure that in military operation punitive measures,

degrading treatment and violence against children is also prohibited.

The year 1979 holds great significance in the history of child welfare and development. Being designated as the International Year of the Child by the United Nations General Assembly, number of activities and programmes were undertaken throughout the world in this year. The year also saw the United Nations Commission on Human Rights starting work on the drafting of the Convention on the Rights of the Child. The Convention on Rights of the Child was adopted by the General Assembly of the United Nations on 20 November, 1989 (the thirties anniversary of the adoption of the Declaration of the Rights of the Child). This Convention was formally opened for signature and ratification on 26 January 1990. The CRC had behind it the full resources of UNICEF which, having decided that the Convention was in the best interest of the child. The net outcome was that, by 2 September 1990, the twentieth ratification has been received and the Convention came into effect-more quickly than any other human rights treaty. To monitor progress achieved in the realization of rights, the CRC has established an international expert body, the Committee on the Rights of the Child, which provides awareness and understanding of the principles and provision of this treaty.

The CRC is "the most complete statement of child rights ever made". It takes the ten principles of the 1959 Declaration of the Right of the Child, and expands them to 54 articles, of which 41 relate specifically to the rights of children, covering almost every aspect of a child's life. The Convention draws attention to four sets of civil, political, social, economic and cultural rights of every child. 14 These rights are as:

- The Right to Survival: This right includes the right to life, the highest attainable standards of health, nutrition and adequate standards of living. It also includes the right to a name and nationality.
- The Right to Protection: This includes freedom from all forms of exploitation, abuse inhuman or degrading treatment and neglect, including the right to special protection in situation of emergency and armed conflicts.
- The Right to Development: It contains the right to education, support for early childhood development and care, social security, and the right to leisure, recreation and cultural activities.
- The Right to Participation: it includes respect for the view of the child, freedom of expression, access to appropriate information, and freedom

of thoughts, conscience and religion.

It is indeed an innovative document in overall human rights theory and practice. In fact, it is the first UN human rights instrument since the UDHR which brings together as inextricable elements of the life of an individual human being the full range civil and political rights and economic, social and cultural rights. It can do this because it treats children as complete individuals, rather than as elements in an economic or sociopolitical system. The Convention aims to create a balance between the rights of children and those of the parents or adults responsible for their survival, development and protection. This is achieved by according children the right to participate in decision concerning them and their future. It is, thus, a holistic document for each article is intertwined with the others. The rights defined in the Convention are interdependent, as none of the article can be dealt in isolation. They have to be applied an implemented simultaneously if at all the rights of every child is to be respected.

There are several other international documents which talk about the interest of children. The World Summit for Children, 1990 was a follow up action to the Convention of 1989. Which enable national leaders to focus exclusively on issues affecting the future of children. The UN Conference on Environment and Development, 1992 reinforce the commitments made at the World Summit for Children. In the World Conference on Human Rights, 1993 considerable urgency was expressed for the protection and implementation of the rights of the child. The ILO has been instrumental in protecting the rights of children and laying down conditions and standards regarding wages and welfare of working children.

Protection of Children's Rights- India at a Glance

In India, the early legal statements were conspicuously silent on children's rights. In the British ruled India the plight of its children were certainly gloomy. It was a time of great uncertainty for India and this inevitably affected its children too. Independent of India ushered in a new era for children. Further, it determined the nature of the relationship between the child, the family and the state and thus created the essential foundations of a national childhood for all children. The framers of the constitution of India recognized the importance of secure childhood and protection of childhood and protection of children's right as crucial components for laying the foundation of India's democracy. Correspondingly, the Constitution of India, 1950 contain provision for survival, development and protection of children. In spite of Constitutional provisions there are some legislation which

protect the rights of children directly or indirectly, some child welfare scheme and some institutional framework for welfare of child.

Constitutional Rights in India

There are several constitutional provisions which protect the interest of children. Article 15(1) and 15(3) provide that the state shall prohibit discrimination against any citizen on the grounds of religion, race, caste, sex, place of birth, Nothing in this article prevents the state from making any special provision for women and children. Article 21(A) provides that the state shall provide free and compulsory education to all children to the age of 6-14 years in such manner as the state may, by law, determine. Article 24 provides that no child below the age of 14 years shall be employed to work in any factory or mine engaged in any other hazardous employment.

Article 39(f) provides that the state shall secure that children are given opportunities and facilities to develop in a healthy manner and in conditions of freedom and dignity and that the childhood and youth are protected against exploitation and against moral and material abandonment. Article 45 provides that the state endeavour to provide early childhood care and education for all children until they complete the age of 6 years.

Legal Provisions in India

There are several legislations which directly or indirectly protect the interest of children. In 1955, Government of India passed the Protection of Civil Rights Act, 1955 and ratified the International Labour Organization Convention No. 5 of 1919 on minimum age of work in industry. 18 The Immoral Trafficking (Prevention) Act, 1956 prohibits commercial sexual exploitation and all cases relating to prostitution registered under the Act. This Act defines a minor as a person between 16-18 years of age. The Act also says that if any person over the age of 18 years knowingly lives wholly or in part on the earning of the prostitution of any other person shall be punishable with imprisonment up to 2 years or with fine up to Rs 1000 or both. Where such earning relate to the prostitution of a child or a minor, shall be punishable with imprisonment for 7-10 years. 19 Some of the other legislations enacted in the year 1956 were the Hindu Adoption and Maintenance Act, Hindu Minority and Guardianship Act. In 1957, the National Bravery Award Scheme was instituted and 14 November was declared as Children's day. The Central and State Governments also stepped in to share the responsibility of implementing the schemes and programme for destitute and delinquents under the Children's Act, 1960.

The Child Labour (Prohibition and Regulation) Act, 1986 prohibits the engagement of children in certain employments and regulates the condition of work of children in certain other employments. Section 5 of the Act makes provision for setting up of Child Labour Technical Advisory Committee which is authorized to give advice to the Central Government in the matter relating to child labour in occupation and process. Section 13 deals with the health and safety measure of the child employment in occupation or in processes. The Act also proclaims that if an accused employer is unable to provide that children employed were not below 14 years, he can be convicted for offence of employing child labour.

Section 3 of the Prohibition of Child Marriage Act, 2006 declares that if a male above 18 years of age contracts a child marriage shall be liable to be punished. The marriage performed in violation of the Child Marriage Restrain Act is an unlawful marriage. Section 5 of the Act punishes a person who performs conducts or directs any child marriage, unless the he proves that to the best of his knowledge the marriage in question was not a child marriage. According to section 6(1) of the Act when a child marriage is contracted person having charge of such child is liable to be punished.

The Juvenile Justice Act, 2000 formulates laws relating to juvenile in conflict with law and provide proper care and protection for children in need. The Act adopts childfriendly approach by catering to the development needs of the children and their rehabilitation in institutions established under law. The Act bring juvenile law and prescribed set of standards to be adhered by all state parties for securing the best interests of the child and provides alternatives such as adoption, sponsorship, foster care and institutional care This Act has been amended in 2006 to set up Juvenile Justice Board and Child Welfare Committee and compulsory registration of Child Care Institution. The Act has been further amended in 2011 to remove discriminatory references to children affected by diseases like leprosy, tuberculosis, and hepatitis-B etc.

Recent enactments, such as the Right to Education Act, 2009 and Protection of Children from Sexual Offences Act, 2012 have child centric clearly emphasizing the rights of children. After enactment of RTE Act, education is now guaranteed as a legal right to all children in the 6-14 years age group up to elementary school level. By making it mandatory for the state to "ensure compulsory admission, attendance and completion of

elementary education of every child of 6-14 years by implication, the state is violating the law if any child is out of school, or is a school dropout. Further, it explicitly addresses discrimination on the basis of caste, gender, disability, ill health and other grounds providing that "no child shall be subject to physical punishment or mental harassment." The Act also promotes a child friendly pedagogy. The Protection of Children from Sexual offences Act, 2012 has several features that are child centered. The Act incorporates child friendly procedures for reporting, recording of evidence, investigation and trial of offences. These include recording the statement of the child at the residence of the child or at the place of his/her choice, preferably by a women police officer, non-detention of children in the police station in the night for any reason and police officer not to be in uniform while recording the statement.

Government Framework for the Children Rights

Under institutional frameworks for child welfare the National Institute of Public Cooperation and Child Development is a premier organization which acts as an autonomous body under the Ministry of Women and Child Development Department, Government of India to promote voluntary action, research, training and documentation on women and child development was setup in the year 1966. The thrust areas of the institution relates to child care interventions relates to maternal and child health and nutrition, early childhood care and education childhood disabilities, positive mental health in children and child care support services.

The Central Adoption Resource Authority is an autonomous body under Ministry of Women and Child Development, Government of India. CARA primarily deals with adoption of orphan, abandoned and surrendered children through recognized agencies.

The National Commission for the Protection of Child Rights was set up as a statutory body under Ministry of Women and Child Development in 2007 under the Commission for Protection of Child Rights Act, 2005 to protect, promote and defend child rights in the country. The prime objectives of the Commission are 'to review the safeguard provided for protection of child rights and recommends measure for effective implementation, spread child literacy, enquire into violation of rights of child, look into the matters relating to distressed, marginalized and disadvantaged children without family, children of prisoners, inspect juvenile home and recommend appropriate measure. The Commission undertakes periodic

review of existing laws, policies and programmes on child rights and makes recommendations for their effective implementation in the best interest of the children.

Welfare Policies

In 1974, the National Policy for Children was adopted. The Policy resolution recognized children as important national asset and declared that it is the responsibility of the state to "provide adequate service to children, both before and after birth and through the period of growth to ensure their full physical, mental and social development." And that the "state shall progressively increase the scope of such services to that within a reasonable time; all children in the country enjoy optimum conditions for their balanced growth." The Integrated Child Development Schemes is a centrally Sponsored Scheme of Government of India for early childhood care and development. The prime objective of the programme is to lay foundation for proper psychological, physical and social development of the child, improve health and nutritional status of children below six years of age, reduce infant mortality, morbidity, malnutrition and school dropouts, achieve effective policy implementation to promote child development and enhance capability of the mother to look after health and nutrition, education and other needs of her child. There has been significant improvement in the implementation of ICDS Scheme in 10th and 11th Plans in term of increasing number of projects, Aganwadi Centres and coverage of beneficiaries, infrastructure development and training programme for field staffs. Many states have introduced state specific initiatives and good practices for effective implementation of ICDS scheme.

A National Nutrition Mission has also been set up to enable policy direction to the concerned Departments of the Government for addressing the problem of malnutrition of children. The Nutrition component of Prime Minister Gramodya Yojana and Nutrition Programme for Adolescent Girls is implemented with additional central assistance from planning Commission to promote nutrition of children. The Pulse Polio Immunisation Programme implemented by the Ministry of Health and Family Welfare covers all children below five years of age. The Reproductive and Child Health Programme is being implemented by the Ministry of Health and Family Welfare which provides effective maternal and child health care.

The National Rural Health Mission Scheme implemented under Ministry of Health and Family welfare seeks to provide effective health

care service to rural population including large population of children in the country. There are several schemes for the education of children. The Sarve Shiksha Abhiyan Scheme aims to provide free and compulsory elementary education to all children in 614. The scheme provides school infrastructure and quality improvement in education of the children. The Mid-day meal scheme is being implemented under Sarva Siksha Abhiyan Scheme which aims at universal enrolment and retention of children:

The Integrated Programme for Street Children by the Ministry of Social Justice and Empowerment seeks to prevent destitution of children who are without homes and family ties and are vulnerable to abuse and exploitation. The programme rehabilitates these children and facilitates their withdrawal from life on the streets. The Integrated Programme for Juvenile Justice seeks to provide care and protection to the children in difficult circumstances and in conflict with law. The Elimination Child Labour Programme implemented by the Ministry of Labour, Government of India sanctions rehabilitation of working children and elimination of child labour. The National Child Labour Projects have been set up in different areas to rehabilitate child labour. The Child helpline is a toll free telephone service which is run with the support of Women and Child Development Ministry and is working in 72 cities across the country. Anyone can call for assistance for the interest of children. The Scheme for Welfare of Orphan and Destitute Children is a centrally sponsored scheme under Ministry of Women and Child Development. The main objective of the programme is to provide shelter, health care and nutrition, education and vocational guidance to orphaned and destitute children within age group up to 18 years for boys and up to 25 years for girls. The Shishu Greh Scheme is being implemented by the Ministry of Women and Child Welfare to promote adoption of abandoned/orphan/destitute children within the country and ensure minimum standards of care for children.

Conclusion

Whether children come into contact with the law as victims, witnesses, offenders or complainants, it is equally important that they are met with a system that understands and respects both their rights and their unique vulnerability. The children of today are future of tomorrow, this powerful statement assumes special significance in our context as children comprises one third of total population in the country. Every child, on provision of a conducive and an enabling environment, may blossom into an ever .fragrant

flower, to shine in all spheres of life. This reminds us of the onerous responsibility that we have to mould and shape their present conditions in the best possible way. There is unanimity on the importance of protecting children and their right to freedom and dignity. The main problems relating to children are basically a gift of poverty and illiteracy but there are certain other causative dimensions of the problem, including, at some places, the social structure. The numbers of rights and privileges given by the Indian constitution and duly supported by legal protection bears a testimony to this. On the policy side, the Government of India is committed to promote the survival, protection; development and participation of children in a holistic manner and a series of measures cutting across gender, caste, ethnicity or region have been initiated to realize all inclusive growth. It is needless to mention that, though India has a comprehensive legal regime and policy framework to protect the rights and interests of the children, greater momentum is required for effective implementation of these policies and programme for well-being of the children by improving their level of education, health and nutrition etc.

Despite various initiatives both on legal as well as policy and programme levels the condition of children remains a cause of concern that needs to be addressed urgently. A just and fair environment is desirable for all children at home, school or any other place, with growing mind and body to see a shining tomorrow and ultimately to become responsible citizens of India. Recent enactments, such as the Right to Education Act, 2009 and the Protection of Children from Sexual Offences, 2012 have been child centric clearly emphasizing the right of children. Some policies like the Integrated Child Development Scheme and Integrated Child Protection Scheme have also shown that decentralization and involvement of the community ahd civil society as equal partners with the government are important components for effective realization of children's rights.

We must take special care with children whose lives have become intertwined in the legal system. Legal system is the backbone of child-friendly justice, a movement that calls for a dramatic shift in the ways that our justice systems interact with children. Child-friendly justice embraces the idea that courts can be a powerful tool to positively shape children's lives and at the same time recognises the reality that contact with the legal system is all too often more a source of additional trauma than a remedy for children.

Building on international children's rights obligations, child-friendly justice introduces principles that empower children to enforce their rights

and encourages government, court, and law enforcement officials to develop policies that address children's precarious situation in the justice system. Child friendly justice asks us to appreciate and minimise the challenges that children face at each step in each aspect of a legal proceeding, building confidence in the view of the justice system as a solution to children's legal issues rather than another of an already long list of problems. Respecting child-friendly justice principles will not only eliminate many of the traumatic experiences children face in the legal system, it will foster greater respect for their rights by providing children the full access to justice they need to bring violations of these rights forward.

References

1. *M. Rao, Law Relating to Women and Children, Second Edition, Eastern Book Company, Lucknow, 2008, at 415.*
2. *The Universal Declaration of Human Rights, 1948; Article 25(2).*
3. *The International Covenant on Economic, Social and Cultural Rights, 1966; Article (10(3).*
4. *The Declaration on Social Progress and Development, 1969; Article 4.*
5. *The Declaration on the Protection of Women and Children in Emergency and Armed Conflict, 1974, Preamble (Para-I).*
6. *See the Constituion of India, 190; Part III, Articles 15, 21, 21(A)&24.*
7. *Id. Part IV, Articles 39&45.*
8. *C. Satpathy, Child Welfare Policies and Programmes in India, Yojana, November 2019 at 24.*
9. *S. Sinha, "Rights of Child", Yojana, November 2012. at 4.*

Manglam-Year 13(02),Vol.XXV,August 2022
ISSN-0976-8149 , P-24-27

The Role of Indian Women in Indian Politics and Sports: An Overview

*Dr Ashok Kumar**

Abstract

Women have an important position in the society. The society/nation can not make progress without the women. Women have great respect all over the world. Indian women have effective and positive role in various field. In politics and sports sectors, women have gained respective position. In this paper, an attempt has been made to analysis the role of Indian women in politics and sports field.

Introduction

India is a great countryand a great respect is given to women and Indian women have been remained in powerful position also since many decades. The roleof womenin many movements before and after independence, have been very effective for gaining some power in politics also. After independence of India, the Indian women have achieved an unprecedented political gain. The role of women in national, local and community leadership has become an important focus on global development policy. Many women have become political leaders, elected policymakers, or civil society activists. Women's participation in politics helps advance gender equality and affects both the range of policy issues that get considered and the types of solutions that are proposed. There is also strong evidence that as more women are elected to office, there is a corollary increase in policy making that emphasizes quality of life and reflects the priorities of families, women, and ethnic and racial minorities. Women play an important role in campaigning and mobilizing support for their parties, yet they, rarely, occupy decision-making positions. Women are often put in a party list, in order that, they not be elected, if their party wins insufficient votes in an election.

Role and Contribution of Women on Various Political Posts

Indian women have achieved or gained a distinction and reputedposts in many fields. These are as:Vijay Laxmi Pandit became UNO Secretary. Many women have worked as Chief Minister of the States. These are as Sucheta Kriplani, Jayalalitha, Uma Bharati, Mayawati and Vasundhara Raje. Sitaraman has worked as finance minister.There are many women are MPs.

**Assistant Professor Department of Law, BPSMVKK, Sonepat, Haryana*

Some are as Sonia Gandhi, Menaka Gandhi, Uma Bharti, Hema Malini, Jay Parada, Jay Bachan, At State Levels, there are many women those have been MLAs and ministers of different-different portfolios in states.In the State Assemblies and Parliament there are about 26 women in upper house—Rajya Sabha consisting of 245 members and 59 women in lower house—Lok Sabha consisting of 543 members. There are only 8 women ministers out of total 75 in the government of Dr Manmohan Singh. The role and contribution of women is briefly discussed as under:

- **Role of Woman as Prime Minister:—**Smt. Indira Gandhi has worked as Prime Minister of India. She was the first women Prime Minister of India. She was very strong and prominent lady. She was also very famous in the world. She was called as iron lady. Her working system was strong and she almost finished the problem of terrorism of Punjab state.
- **Role of Woman as President:—**Smt. Partibha Davi Patil has worked as President of India. She was also first woman as President of India. Her role was very prominent in India politics.
- **Role of Women as Chief Minister:—**Many women have played an effective role as chief minister of the states. These are as Sucheta Kriplani, Jayalalitha, Mayawati, Vasundhara Raje, Mamta Bernerji, Mehaboobu Mufti Saheed, Anandi Bhen.
- **Role of Woman as Foreign Minister:—** Many women have played an effective role as foreign minister such as Sushma Swaraj.
- **Role of Women as DefenceMinister:—**Many women have played an effective role as defence minister such as Sitaraman.
- **Role of Women as Finance Minister:—**Presently Sitaraman is finance minister of India and working very job.
- **Role of Women as Lok Sabha/ Rajya Sabha Speaker:—** Many women have played an effective role as Lok Sabha Speaker such as Mira Kumar and Sumitra Mahajan.
- **Role of Women as HRD Minister:—** Many women have played an effective role as HRD Minister such as Samriti Irani.
- **Role of Women as Chairperson of Party:—**Sonia Gandhi has been chairperson of Congress Party and UPA Government since many years. Mayawati is also chairperson/Supremo of the BSP.

Current Position and Contribution of Women in 17th Lok Sabha:—In 17th Lok Sabha, there seventyeight (78) women have been

elected to as Members of Parliament. In Uttar Pradesh and West Bengal, the highest number of women Members of Parliament candidates each has elected, there are eleven. These states include prominent women leaders like Bahujan Samaj Party's chief Mayawati and West Bengal's chief minister Mamata Banerjee. UP and Bengal are followed by eight women MPs out of the total 29 states, women MPs were elected from 22, leaving seven states with no female representation in the Parliament. The seven states are Arunachal Pradesh, Himachal Pradesh, Jammu & Kashmir, Manipur, Mizoram, Nagaland and Sikkim.

Current Position of Women in Different States as MLAs and MPs:—Women elected from Statesare as seven in Odisha and six in Gujarat. Uttar Pradesh and West Bengal each had 11 women elected—the highest number among all states. In Uttar Pradesh, eight women were from the BJP and one each from the Congress (INC), BSP and Apna Dal. Banerjee's TMC had 40 percent women representation and nine of them have been elected to the Parliament. Apart from these, two BJP women candidates were also elected from West Bengal.Maharashtra came in third, with five women candidates from the BJP elected from the state, and one each from the Congress, Shiv Sena an independent. Odisha elected seven women candidates, five of whom were from the Biju Janata Dal, a state political party. The other two candidates are members of the BJP.The six women MPs elected from Gujarat are all from the BJP. The four women MPs each are Andhra Pradesh and Madhya Pradesh elected. In the former, all four women are from the YSR Congress party. The four women parliamentarians from Madhya Pradesh are from the BJP.Three women candidates each were elected from Bihar, Chhattisgarh, Rajasthan and Tamil Nadu.

Role of Indian Women in Field of Sports:— In India, there has been energetic attitude towards sports since many years. But due to lack of encouragement, support, finance help/assistance toward sports-oriented programme from the side of Govt, the women could not do good role in the games. In present time, we observe the role of women in sports has been quite appreciable and we celebrate it as well. They have combated all odds and conquered challenges to play for the nation. There are women who have taken firmed pathways, struggled hard and stood for the country internationally. Some got noticed and well recognized like P.T. Usha, Saina Nehwal, Mary Kom, Sania Mirza. Ishita Malviya, 1st Indian woman surfer, Mira Erda, the first Indian female formula racer, Archana Sardana, India's

1st, woman BASE (Building Aerial Span Earth) jumper, Koneru Humpy, the World Women Chess Champion, are a few, who are chasing their dreams with vigor and passion and hooked on to their quest of achieving excellence.

These women have achieved or gained a distinction and reputed position in sports. There are a large number of women those have got good position at international and national level. These women are Peeti Usha, Mery Kom, Deepika Kumari, Tania Shachdeva, Deepa Karmakar, Mitali Raj, Shaifali Verma, Jhulan Goshwami, Geeta Phogat, Ritu Phogat, Hima Dass, Saniwali Nehwal, P.V. Sindhu, Shakshi Malik, Ranirampal, Nikee, Dutti Chand, Vinesh Phogat, Karnam Maleshwari. Sania Mirza etc. These women have won gold medal, silver medal, brozone medal in the OlympicAsian, Commonwealth Game, and reginal games and other games, these games are wrestling, kabbadi, Kushti, cricket, shooting, hockey, badminton, boxing, football, zudo, raceetc. There are a large number of women those have got reputed position at national and regional level also.

Conclusion:—No doubt, the women have great position and reputation in the India politics and sports. They are also playing an important role in otherfields and their contributions are also very important in the politics and sports. In the world, Indian women are very strong and powerful in decision making also.

References

1. *www.wikipedia,com*
2. *www.womendeliver.org › why-women-in-politics*
3. *www.knowledge.wharton.upenn.edu/article/what-is-the-role-of-women-in-indian-politics-growing-stronger/*
4. */www.quora.com/What-is-the-role-of-women-in-Indian-sports*
5. *www.stylesatlife.com/articles/famous-indian-sports-women-list*
6. *www.olympics.com/ioc/women-in-sport-commission*

Manglam-Year 13(02),Vol.XXV,August 2022
ISSN-0976-8149 , P-28-34

Buddhism Popularity In The Sixth Century BCE

*Dr. R.K. Rajouria**

During 6th century BCE the world was witnessing the emergence of various new thought processes. New philosophies with their own and distinct notions regarding the right path to living were coming to light and the older ones were being questioned. This age as Thapar quotes was the " Age of curiosity". Among these many unfolding ideas , there was one which gradually expanded it's influence among the masses as well to the rulersof the middle Ganga Valley and stood the test of time , particularly in the South Asian world. This was the philosophyof Buddhism which later subsequently established itself as a religion and got manifested in the material culture of this time period. However, in tracing the development or the decline of any religion , philosophy or sect the answers to questions regarding emergence and popularity i.e. 'why and how' assume paramount importance. Though the arguments related to both these questions are often linked. Partly because there are not enough justificationsto satisfy the "emergence" and partly because any emergence becomes relevant only when it assumes popularity among masses , nonetheless they disappear as being unknown.

The question of emergence is debatable at many levels and is answerable only tosome extent which is largely attributed to academic speculation.Due to its explicit defiance of the Vedic rituals , it is argued that it emerged as a response to the ritual ridden Vedic religion. RichardGombrich in his book on Theravada Buddhism argues that Buddha or Buddha's teachings formulated as a response to the social and intellectual conditions around him. The environment of 6th c. BCE was socially interactive in the sense that Buddha's truths along with the philosophies of other sects such as Charavaks, Ajivikas and Lokayats which buddha term as 'eel-wrigglers'(inconsistent in their teaching) were debated along with the existing Vedic religion. These debatestook place in Kutuhala-Shalas where audiences gathered around these new philosophers.Buddhas teaching could also be read as a response to the earlier Upanishads where though he accepted certain teachings but at the same time explicitly denied the existence of the 'atman' is in the Alagadupama Sutta.

The simultaneous emergence of so many differentsects with their

** Assistant Professor, L.Y.D. College, Kayamganj, Farrukahabad (UP.)*

varied philosophy in eastern ganga valley indicate there must have been something dissatisfying about the older doctrines. Hereby, it is plausible that Buddhismmight have been an outcome of these discussions when buddha was reacting tothe "composed" Vedic texts and their ritualistic culture.

Within the ongoing debates happening in the multi-philosophical context of that time period , the factor of spatio-temporal historicity might have been of considerable influence on the Buddha. According to the Jaina tradition Buddha's counterpart Mahavira was twenty-fourth in the line of tirthankaras. Whereas, It is suggested that Jaina philosophy was in existence before with claims of an ancestral ongoing teaching by the precedingtirthankaras and that later Mahaviragave shape to these ideas in 6th c. BCEwhich led to the spread of the Jaina sect which was earlier called 'Nirgrantha'. If believed to be true then there is a possibility that Buddha might have been influenced by this pre-existingheterodox sect.

Gombrich has attempted to elaborate on this influence and the interactions through which it took place which resulted both in similarities and dissimilarities between the two traditions.The superficial one being both traditions are alike in claiming that the figures whom modern scholars have considered to be founders of their respective religions were actually re-founders. Mahavira was twenty-fourth in the sequence offord-makers, and the Buddhists held that the Buddha was twenty-fifth in their series. Gombrich suggests the doctrine to be originated with the Jains and later to be copied by the Buddhists.

However, at the same time there are well established differences as well which can be attributed to the factors of human agency and also that Buddhism sought to resolve the issues in their formations which Jains might have faced such as preserving their texts.The Buddha strongly disapproved of the lifestyle of Jaina monks and wanted to be sure that his monks were not taken for Jains or similar groups. Besides all these debates , the most explicit similarity is that both Buddhists and Jains were alike in their defiance of the older existing tradition and wereopposed the animal sacrifice which was integral to the same.

While speculating emergence it is important to underline that one cannot really point out the initiation of a thought which is individualistic and yet dynamic in every sense. On the contrary it is essential to underline that these thoughts , per say the Buddhist philosophy was not propagated or preached by the Buddha with an aim of their institutionalisation. Thus , it can be said that what we consider Buddha preached was more of an

alternative way of life for people which as argued by Thapar was more compatible to the contemporary changes and reflected a more sensitive approach especially to the people who didn't fit in the Brahminical framework.Later on , Buddhism grew from a sect to establish itself as a separate religion whereas the other sects disappeared over time. It's growth can be assigned to the popularity that it attracted over the course of time. To reason why Buddhism became popular has three facets ; Philosophical, Material and social,all diametrical in every sense yet inter-related and affecting each other.

Marxist scholars like D.D Kosambhi and R.S Sharma have very meticulously elaborated on the growth of Buddhismas a response to an evolving material milieu. Kosambhi goes on to an extent to state that religion is a phenomenon of material life in which iron usage in its second phase has been assigned a central role. The advent of iron in eastern U.P and Bihar can be traced back to 700BCE evident through the presence of iron slag in Rajghat. Iron played a role of a catalyst in radicalising the material milieu , particularly a shift from pastoral to a agricultural society. Iron implements aided the clearance of forests which were earlier done through burning. The clearance of land made it suitable for cultivation in which again iron ploughshare had begun to be used. Literary sources of pre Mauryan times and even the later texts such as Vinaya Pitaka gives specific terms referring to iron implements. These changes however were not met without confrontation because the ideological makeup of the spatio temporal context did not resonate with these advancing changes.

Before the advent of iron , neo – chalcolithic agricultural produce was based on hoe agriculture and were independent of cattle usage. On the other hand cattle was used to meet their dietary needs indicated by the cut marks present of the finds of bone. Cattle slaughter was also in a way sanctioned by the Vedic ritualism indicated in the Satapatha Brahmana. Rituals were performed by the brahmans to ensure victory in war and in these sacrifices cattle wealth was killed at a large scale. These sacrifices were performed by and performed for only the upper two varnas i.e. the brahmans and the kshatriyas respectively but it is important to underline that the cattle which was sacrificed was owned mostly by the third varna- 'Vaishyas' .

Later Vedic texts mentions the sacrifice of cattle in the performance of rituals such as 'vrasbha' or bull to Indra. Sacrifices like 'Ashvamedha' included killing of 600 different kinds of animals and at the endof the ritual

21 sterile cows were killed. Also meat of the cow was considered a delicacy and was served to the guests which were then known as 'Goghna' Hence, the slaughter of cattle was an established and existing practice.

However , as the society transformed towards agriculture , cattle became an individual property for the agriculturalistand were of paramount importance for this kind of economic base. It was here that the existing ideology became irrelevant and to some extent a threat to the demands of its context. Kosambhi identifies the problem as "exploitation without compensation of the Vaishyas".

It was in this backdrop where the budding Buddhist philosophy of 'ahimsa' resonated with the grievances of this Varna (Vaishyas) and gained significance. The earliest Buddhist text 'Suttanipata' considers non-violence as the greatest virtue to which all 'upasakas' should abide by. Though many of the Buddhist followers were traders, it is astonishing and ironical to note that the Jataka Nidankatha mentions the 'pancavargiya Bhiksu' or the first five converts to have been brahmans which according to me reflects more of a deliberate attempt by the Buddhists to reinforce their popularity over Vedic religion by citing 'ideological conversion'

The moral contrast between Brahminism and Buddhism were explicit , As opposed to the Brahminical system who drew emphasis on establishing close links with god, Buddhism insisted on establishing close links with people and little was attributed to divine intervention. The most explicit defiance by the Buddha on the Brahmanical systemin the Tevijja Sutta where he criticises brahmins who preach the path leading to the union with brahma, which is unknown and unseen. The brahmans here are considered to be 'Tevijja' meaning 'having three Knowledges' i.e. knowledge of only the three text which they considered to be true (the Vedas). Buddha terms them as blind leading the blind. On the other hand , Buddha had a very clear vision of what he considered to be the truth andsince he was propagating it to the masses with different inclinations and presuppositions. He expressed his message in various means for instance, in the Kalama Sutta , he advises the Kalama clan not to accept any teaching merely on the basis of a teachers authority but to work things out for themselves.

Buddhism propagates'yajna' without violence and charity to be the greatest yajna. He emphasised on karma which was as an idea prevalent in the Brahminical religion as well as other existing heterodox sects. however , what made karmatic Buddhism different was that buddha held that karma

was not a ritual act but an ethical view.'It is intention that I call karma' is Buddha's answer to brahmin ritualism.

The concept of ahimsa however did not prohibitBuddhists from meat eating , there are two instances in which buddha himself has been mentioned to have consumed 'pork'. However , the preferenceassigned to pork eating over beef might have been because Buddhists were vigilant to their environment and aware of their growing popularity among the agriculturalists and hence restricted themselves from confronting them with the problems which theirBrahminical counterparts did. Hence , it would not be totally incorrect to state that Buddhist morality did kept in mind the practical advantages , a example what I may term as 'classic Buddhist pragmatism'.

Considering their stand on cattle being totally opposite to the Vedic ideology , it is clear that the Buddhist as a consequence must have assigned importance to agriculture. The Suttanipata equates agriculture and cow-keeping , it also refers the cattle rearer as a cultivator. Moreover , Buddha is suggested to have given religious discourse to a farmer 'Bharadvaja' in which he creates a model for the monks to replicate.

As argued by R.S Sharma iron tipped ploughshare revolutionised agriculture , it led to the emergence of large settlements. These large towns acquired some urban features such as trade which were facilitated by the minting of the punch marked coins. Dharam shastrashowever prohibit brahmans to trade in the commodities like men , liquids , perfumes , cloth , leather , food grains etc and those who did were looked down upon. Apart from this brahmans also condemned 'samudra-samyana' or sea voyage , favourable for trade. On the other hand , Buddhists had no such objection. Moreover , Buddhists supported trade. In the later phases of Buddhism monasteries are believed to have acquired wealth from large scale donations and even from their own involvement in long distance trade. Buddhist monasteries which went to China were associated with overland merchants.

An inevitable aspect of trade is moneylending and usuary , there is no mention of interests in the Vedic texts and the Vedic religion did not favour the charging of interests. Apasthambha directs brahmans not to accept food from a person who charges interests. On the other hand the list of 'Samma Ajiva' (right living) and 'Samma Kammanta'(right action) which lists a lot of things from which one should prohibit in order to live on the right path does not mention usuary. On the contrary, monks are advised

to replicate the behaviour of an ideal traderof course while following the renunciatory life in order to understand the nature of dukkha which also includes the repayment of the debt as 'ananyasukham' and the monk who does not follow thedhamma is mentioned as one who is indebted.

Another factor which might have favoured Buddhism was the fact that they argued the need for a political authority i.e. kingship, which I find to be ironical because of the fact that Buddha himself belonged to a Gana-Sangha and if closely observed then even the working of the Buddhist sangha is a replica of the Gana Sangha. It might have been possible that the Buddhist texts were later subjected to the interpretations by the Buddhist followers who argued the need of a universal monarch – "Mahasammata"in order to maintain social order , which I think seems more of a deliberate attempt by the Buddhist to expand their influence as the milieu was witnessing the rise of kingship over chiefdom-ship especially Magadha where Buddhism flourished. Hence, as stated before Buddhism might have went on with the changes to mould itself and become relevant to the changing context.

Apart from the legitimisation which Buddhism provided to contemporary economic practices , it also addressed to some extent the grievances of the marginalised sections of the society. Varna was a very strongly established aspect of the society to an extent that I would suggest it as an "inseparable part of one's identity and being". The varna was designed in a way to favour the so called upper classes. On the other hand, Buddhism took what one may suggest a safe stand on the issue of varna , it suggested this to be an interchangeable social distinction and not a natural order which cannot be reversed which is opposite to the Brahminical position. Alongside that , Buddhist emphasis on karma and the significance attached to it with respect to rebirth acted as an appeal to the people who were subjugated by the orthodox Brahminical setup. Hence , maybe for them the "right path" which buddha preached was a way to be reborn in a higher varna.

However , in context to the position of women in the society , I believe it was more or less the same, irrespective to whichever varna they belong. They were too like the Shudras not part of Vedic ritualistic framework. Buddhism , not initially but later did permit women entry into the sangha but what was even more interesting is Buddhist position on prostitution. Prostitution was a feature of the growing urban settlements and the Brahmins held it in contempt and not even accepted food from them. However, Buddhism on the other hand adopted a liberal or what

one may call a "progressive" approach towards the same. It not only accepted alms from them but even allowed their entry to the sangha. Buddha himself is stated to have been accepting food from Amrapali.

Hence , it can be concluded that 'in order to persist , one needs to adapt'. It is certain that Buddhism owes it's popularity to it's ideology which reflects strong rational undertone, propagating ideas that were practical and were able to provide the best response to the changing milieu. Whereas , on the other hand the older Vedic ritualistic religion was orthodox enough not to radicalise itself alongside the context. Thus , The open defiance of the orthodox i.e. Vedic ritualism and it's separation from extremism did encourage Buddhismto gather support by attracting the dissatisfied sections of the society who sought it as a way to opt out of the social obligations which Vedic religion subjected them to.

References

1. *Sharma, Ram S. Material Culture and Social Formations in Ancient India. New Delhi: Macmillan India, 2007. (Chapter 7).*
2. *Gombrich, Richard, F. How Buddhism Began: The Conditioned Genesis of Early Teachings, London: Routledge, 1996.*
3. *Chakrabarti, Kunal. The Lily and the Mud: D.D Kosambhi on Religion.*
4. *Gombrich, Richard, F. What the Buddha thought , London , 2013.*
5. *Thapar, Romila. Early India: From the Origins to AD 1300, University of California Press, 2004.*

Manglam-Year 13(02),Vol.XXV,August 2022
ISSN-0976-8149 , P-35-45

Problem Of Age Dtermination Of The Child : It's Remedial Measure

*Dr. Amit Kumar Srivastava**

Abstract

Juvenile justice in India has very big object to protect the children from exploitation of any kind and develop them in the society. Government is taking various efforts for protection of children and their developments.Yet some of the childreninvolve themselves in various crimes and save from the punishment on the grab of juvenility. Therefore juvenile crimes have been continuously increasing day by day. It is seen that adult offenders also try to take the shelter of juvenility in order to delay the trial by instituting proceeding fordetermination of their age. It is also one of the reasons to delay the justice, and to defeat the object of the Juvenile Justice system.

The research paper addresses the difficulty in determination of age of the 'child' under Juvenile Justice (Care and Protection of Children) Act 2015, and attempt to search the waysin which the problem of determination of age be resolved.

Introduction

Age of children varies from place to place and for purpose to purpose. Our country has adopted the United Nations Convention on the Rights of the Child – 1989, came in to force on September 02, 1990. Apart from other things, the Convention has defined the 'Child' which means every human being below the age of eighteen years, unless under the law applicable to the child majority is attained earlier.[1] It provides that the child shall be registered immediately after birth and he/she has right from birth to his name, the right to acquire a nationality, right to know and right to be cared for by his or her parents,[2] every child has the inherent right to life and maximum extent possible, the survival and development,[3] safeguard to the children in conflict with law.[4]

In India before 1986, there were number of Children Acts providing the age of child between sixteen to eighteen years. *The Juvenile Justice Act, 1986(Bill No. 103 of 1986)* in short "Act of 1986" was enacted defines the *'juvenile' and says that a* male child who has not attained the age for sixteen years and female child who has not attained her age of eighteen years, is a juvenile.[5] The Juvenile Justice (Care and Protection of Children) Act, 2000– in short 'Act of 2000'covers all the male and female children who have not completed their eighteen years of age under the

Assistant Professor, Department of Law, BabuShivnathAgarwal, Post Graduate College, Mathura (U.P.).

conception of 'juvenile' or 'child'.[6] The Nirbhaya incident on 16 December, 2012 (Delhi Gang Rape Case) has persuaded the Indian Parliament to enact a new legislation. Therefore "the Juvenile Justice (Care and Protection of Children) Act, 2015" in short "At of 2015" was enacted and came into force from 15th January, 2016.The Central Government also made "the Juvenile Justice (Care and Protection of Children) Model Rules in 2016".Act of 2015 defines the child as well as the juvenile separately. The "child" means a person who has not completed eighteen years of age,[7] while "juvenile" means a child below the age of eighteen years.[8] In general both the term has the same meaning. However the difference is in their implications in the eyes of law.A 'child' in conflict with law and an accused of crime is not tried as an adult and is sent to Child Care Centre, while person between the age of 16 to 18 years is a 'juvenile', if he is accused of crime. He is tried as adult in court proceedings.

In another development,the Parliament enacted "The Juvenile Justice (Care and Protection of Children) Amendment Act, 2021 (No. 23 of 2021),in short as-"Amendment Act of 2021"-to amend the Act of 2015 in compliance of this judgment as well as other necessary requirements. It has been notified in the official gazette of Government of India on 9 Aug, 2021. However it has not made any change in Section 94 with respect to the presumption and determination of age.

Provisions For Age Determination Of Child

The provision for determination of agehas now been united and provided in section 94 of Act of 2015 itself which is applicable throughout the India. Prior to it,various State Governments had notified their own rules under the provisions of Act of 2000, in which the provision for age determination of juveniles was also inserted. The procedure for age determination varies from State to State according to their rules. The provisions were incorporated in Rule 12 of the Uttar Pradesh Juvenile Justice (Care and Protection of Children) Rules, 2007, in short "Rules of 2007".The old provision provided in Rule 12 (3)(b) of the Rules of 2007 for the benefit of margin of one year in age to the child or juvenile by considering his or her age on lower side, is now absent in section 94.Section 94 of Act of 2015 isas under:

"(1) Where, it is obvious to the Committee or the Board, based on the appearance of the person brought before it under any of the provisions of this Act (other than for the purpose of giving evidence) that the said

person is a child, the Committee or the Board shall record such observation stating the age of the child as nearly as may be and proceed with the inquiry under section 14 or section 36, as the case may be, without waiting for further confirmation of the age.

(2) In case, the Committee or the Board has reasonable grounds for doubt regarding whether the person brought before it is a child or not, the Committee or the Board, as the case may be, shall undertake the process of age determination, by seeking evidence by obtaining-

(i) the date of birth certificate from the school, or the matriculation or equivalent certificate from the concerned examination Board, if available; and in the absence thereof;

(ii) the birth certificate given by a corporation or municipal authority or a Panchayat;

(iii) and only in the absence of (i) and (ii) above, age shall be determined by a ossification test or any other latest medical age determination test conducted on the orders of the Committee or the Board;

Provided such age determination test conducted on the order of the Committee or the Board shall be completed within fifteen days from the date of such order.

(3) The age recorded by the Committee or the Board to be the age of person so brought before it shall, for the purpose of this Act, be deemed to be true age of that person."

Here it is important that before the enforcement of the Act of 2015, the provisions of Rule 12 of Rules of 2007 were applicable for procedure to be followed in determination of age. These rules were applicable in the proceedings before the Court, or the Board or, as the case may be, the Committee for determination of age of juvenile or child, while provision for presumption and determination of age incorporated in section 94 of Act of 2015 is only applicable to the proceedings before the Board or Committee, and the word 'court' or 'Children's Court' is missing in the provisions. For Courts, the procedure is provided under section 9, which"provides that in case a person alleged to have committed an offence claims before a Court other than a Board, that the person is a child or was a child on the date of commission of the offence, or if the court itself is of the opinion that the person was a child on the date of commission of the offence, the said court shall make an inquiry, take such evidence as may be necessary (but not an affidavit) to determine the age of such person, and shall record a finding on

the matter, stating the age of the person as nearly as may be"[9]. Therefore the provisions of section 94 of the Act of 2015 are not mandatory on the court. The relevant provisions of Evidence Act, 1872 are also applicable in determination of age of child.

Like Act of 2000, the provision is also available in the Act of 2015 that in case a person alleged to have committed an offence andhe claims he is a child or was a child on the date of commission of the offence, then such claim may be raised before any court and it shall be recognized at any stage, even after final disposal of the case, and such a claim shall be determined inaccordance with the provisions contained in this Act and the rules made thereunder even ifthe person has ceased to be a child on or before the date of commencement of this Act.[10] The 'court' has been defined and the 'Children's Court' have been provided for trial of the juvenile offenders in the Act of 2015. "Court" means a civil court, which has jurisdiction in matters of adoption and guardianship and may include the District Court, Family Court and City Civil Courts;[11] while "Children's Court" means a court established under the Commissions for Protection of Child Rights Act, 2005 or a Special Court under the Protection of Children from Sexual Offences Act, 2012, wherever existing and where such courts have not been designated, the Court of Sessions having jurisdiction to try offences under the Act.[12]

Difficulties In Determination Of Age of Child

In spite of all efforts in the new legislation, the difficulties in determination of age are still there. It has failed to provide clear-cut basis for the determination of age. It has reproduced the same things i.e. matriculation certificate, school certificate at first stage, while birth certificate issued by corporation, municipal authority or panchayat as the second stage, and in the lastossification test or any other latest medical age determination test, as was provided in the rules of various States.The provision of determination of age is still customary and no new technics have been provided in the Act of 2015.

The Supreme Court also finds "that the procedure prescribed in Rule 12 is not materially different than the provisions of section 94 of the Act to determine the age of a person. There are minor variations as the Rule 12(3) (a) (i) and (ii) have been clubbed together with slight change in the language. Section 94 of the Act does not contain the provisions regarding benefit of margin of age to be given to the child or juvenile as was provided in Rule

12(3) (b) of the Rules. The importance of ossification test has not undergone change with the enactment of Section 94 of the Act. The reliability of the ossification test remains vulnerable as was under Rule 12 of the Rules."[13]

It is a matter of common experience that the parents reduce or enhance the age of the juvenile at the time of admission to school for various reasons and the correct date of birth is seldom recorded. In actual life it often happens that persons give false age of the boy at time of his admission to a school so that later in life he may have an advantage while seeking public service.[14]

In this vast country with varied latitudes, heights, environment, vegetation and nutrition the height and weight cannot be expected to be uniform. A child of less than 16 years of age may be appeared as 20 or 25 years of age, and an adult of 25 years of age may be appeared as 16 years. Genuineness of any document including the birth certificates from the school, or the matriculation or equivalent certificate from the concerned Board or the birth certificate issued by corporation, or a municipal authority or a panchayat is big problem, if they are not '*public document'* within the meaning of section 74 of Evidence Act, 1872.There are several cases[15] where the courts have faced the problem and held that if there is any doubt or a contradictory stand is being taken by the accused which raises a doubt on the correctness of the date of birth then an enquiry for determination of the age of the accused is permissible. It consumes more time.

Moreover the ossification test cannot be regarded as conclusive when it comes to ascertaining the age of a person. The medical evidence as to the age of a person, though a very useful guiding factor, is not conclusive and has to be considered along with other cogent evidence. Person with the age of 30 to 32 years would also find the same fusion as found in a person who has crossed the age of 22 years. At the stage, when a person is around 18 years of age, the ossification test can be said to be relevant for determining the approximate age of a person in conflict with law. However when the person is around 40-55 years of age, the structure of bones cannot be helpful in determining the age.[16] Supreme Court held that "…An X-Ray ossification test may provide a surer basis for determining the age of an individual than the opinion of a medical expert but it can by no means be so infallible and accurate a test as to indicate the exact date of birth of the person concerned. Too much reliance cannot be placed upon text books, on medical jurisprudence and toxicology while determining the age of an accused. In this vast country with varied latitudes, heights, environment,

vegetation and nutrition, the height and weight cannot be expected to be uniform.[17] The method of radiological examination for determination of age defeats the provisions of the Criminal Law providing punishment for various offences. If the medical officer gives his opinion on such examination that the age of a particular person is twenty years, the accused can take shelter of the various dictum of the Supreme Court that margin of error in the age ascertainment by radiological examination may be of two years.[18] Moreover, the basic principle of the jurisprudence is that the penal law should be interpreted in favour of the person to be punished and whenever there is doubt regarding the interpretation of any law, or where two views are possible on the same evidence or set of circumstances, the view beneficial in favour of culprit should be taken and court should lean in favour of holding the accused to be juvenile in border-line cases.[19] Therefore in view of the accepted provisions of the ascertainment of age and criminal jurisprudence, a person up to nineteen or twenty years of age may safely get declared as child, which causes injustice and defeats the provisions of the Criminal Law providing punishment for various offences.

A claim of juvenility may be raised before any court and it shall be recognized at any stage, even after final disposal of the case. These provisions are in the interest of innocent child. However the accused persons often misuse these provisions to escape themselves from the criminal liability. The person accused raises their claim of juvenility at their will even after finalisation of the proceeding.It has been revealed from series of cases[20] that inquiry for determination of age of juvenile was initiated during the juvenility of the accused and the determination of age is finalised when the juvenile ceased to be juvenile and become 25 to 55 years of age.Consequently the purpose of laws of juvenile justice becomes futile and resulted to quash the sentences in spite of conviction.

Moreover Act of 2015 on one place provides that the age recorded by the Committee or the Board to be the age of person so brought before it shall, for the purpose of this Act, *be deemed to be true age of that person*,[21] while on other place there is also provisionfor Appeals to the Children's court[22] as well as Revision before the High Court.[23] Moreover the remedy before Supreme Court is always available by way Special Leave to Appeals.[24] Therefore the purpose of Section 94 (3) with regards to finality in determination age by Board or Committee may become futile.

Now the Supreme Court in *Rishipal Singh Solanki Vs. State of Uttar Pradesh and others,*[25] after cumulative consideration of the catena

of judgments[26] has now finally settled the controversy of the determination of age of child and held as follows:

"(i) A claim of juvenility may be raised at any stage of a criminal proceeding, even after a final disposal of the case. A delay in raising the claim of juvenility cannot be a ground for rejection of such claim. It can also be raised for the first time before this Court.

(ii) An application claiming juvenility could be made either before the Court or the JJ Board.(iia) When the issue of juvenility arises before a Court, it would be under sub-section (2) and (3) of section 9 of the JJ Act, 2015 but when a person is brought before a Committee or JJ Board, section 94 of the JJ Act, 2015 applies.

(iib) If an application is filed before the Court claiming juvenility, the provision of sub-section (2) of section 94 of the JJ Act, 2015 would have to be applied or read along with sub-section (2) of section 9 soas to seek evidence for the purpose of recording a finding stating the age of the person as nearly as may be.

(iic) When an application claiming juvenility is made under section 94 of the JJ Act, 2015 before the JJ Board when the matter regarding the alleged commission of offence is pending before a Court, then the procedure contemplated under section 94 of the JJ Act, 2015 would apply. Under the said provision if the JJ Board has reasonable grounds for doubt regarding whether the person brought before it is a child or not, the Board shall undertake the process of age determination by seeking evidence and the age recorded by the JJ Board to be the age of the person so brought before it shall, for the purpose of the JJ Act, 2015, be deemed to be true age of that person. Hence the degree of proof required in such a proceeding before the JJ Board, when an application is filed seeking a claim of juvenility when the trial is before the concerned criminal court, is higher than when an inquiry is made by a court before which the case regarding the commission of the offence is pending (vide section 9 of the JJ Act, 2015).

(iii) That when a claim for juvenility is raised, the burden is on the person raising the claim to satisfy the Court to discharge the initial burden. However, the documents mentioned in Rule 12(3) (a) (i), (ii), and (iii) of the JJ Rules 2007 made under the JJ Act, 2000 or sub-section (2) of section 94 of JJ Act, 2015, shall be sufficient for prima facie satisfaction of the Court. On the basis of the aforesaid documents a presumption of juvenility may be raised.

(iv) The said presumption is however not conclusive proof of the age of juvenility and the same may be rebutted by contra evidence let in by the opposite side.

(v) That the procedure of an inquiry by a Court is not the same thing as declaring the age of the person as a juvenile sought before the JJ Board when the case is pending for trial before the concerned criminal court. In case of an inquiry, the Court records a prima facie conclusion but when there is a determination of age as per sub-section (2) of section 94 of 2015 Act, a declaration is made on the basis of evidence. Also the age recorded by the JJ Board shall be deemed to be the true age of the person brought before it. Thus, the standard of proof in an inquiry is different from that required in a proceeding where the determination and declaration of the age of a person has to be made on the basis of evidence scrutinized and accepted only if worthy of such acceptance.

(vi) That it is neither feasible nor desirable to lay down an abstract formula todetermine the age of a person. It has to be on the basis of the material on record and on appreciation of evidence adduced by the parties in each case.

(vii) This Court has observed that a hypertechnical approach should not be adopted when evidence is adduced on behalf of the accused in support of the plea that he was a juvenile.

(viii) If two views are possible on the same evidence, the court should lean in favour of holding the accused to be a juvenile in borderline cases. This is in order to ensure that the benefit of the JJ Act, 2015 is made applicable to the juvenile in conflict with law. At the same time, the Court should ensure that the JJ Act, 2015 is not misused by persons to escape punishment after having committed serious offences.

(ix) That when the determination of age is on the basis of evidence such as school records, it is necessary that the same would have to be considered as per Section 35 of the Indian Evidence Act, inasmuch as any public or official document maintained in the discharge of official duty would have greater credibility than private documents.

(x) Any document which is in consonance with public documents, such as matriculation certificate, could be accepted by the Court or the JJ Board provided such public document is credible and authentic as per the provisions of the Indian Evidence Act viz., section 35 and other provisions.

(xi) Ossification Test cannot be the sole criterion for age determination

and a mechanical view regarding the age of a person cannot be adopted solely on the basis of medical opinion by radiological examination. Such evidence is not conclusive evidence but only a very useful guiding factor to be considered in the absence of documents mentioned in Section 94(2) of the JJ Act, 2015."

Conclusion & Suggestions

In the last few decades, crimes rates by children and juveniles are increasing because the accused go unpunished in the grab of the juvenility. The crime rate by the children under the age of 16 years has also been increased. The reasons may be upbringing environment of the child, economic conditions, and the parental care. The Children in the age group of five to seven years are used as a tool for committing crime as in this stage the minds of children is very innocent and can easily manipulated.

Act of 2015 provide that a claim of juvenility may be raised before any court and it shall be recognized at any stage, even after final disposal of the case,[27] and" the age recorded by the Committee or the Board to be the age of person so brought before it shall, for the purpose of this Act, be deemed to be true age of that person".[27] Though all they are in the interest of innocent child, yet they should be restricted. Moreover deeming true age of the person recorded by the Committee or Board, there is a provision of appeal and revision both. As such it is suggested that a 'specified period' may be provided to claim of juvenility before the Court or Board from the date the juvenile offender first time appearing or having knowledge about the case orpresenting any document before it. Moreover the provision of 'appeal' is sufficient and remedy of 'revision' is not necessary against the appellate order for the determination of age.

The existing law relating to *registration of marriages* as well as the *Registration of Birth and Deaths Act, 1969* is to be implemented strictly.They should be made compulsory for all to register their marriages and births of childrenbefore the statutory authority concerned immediately or within *specified period* after marriages or births take place, and certificate of registration to this effect should be issued accordingly.Such registration certificate should not be mixed with any other documents having any other details, like family register etc.

Non registration of marriages or births is to be declared '*misconduct*' on the part of the '*servant*' or *'person'* responsible for registration, for which a suitable punishment is to be provided in the law. It should be declared

offence on the part of the *'parent or guardian or other responsible person, as the case may be'*, for which suitable sentence and fine should be provided and offence should be made cognizable and bailable, because it relates for protection of the rights of innocent children.Other certificates like matriculation, other school certificates or other documents like voter card, adhar card, family register etc. relating to date of birth should be in conformity with the birth certificate issued by such independent registration authority, otherwise they should be ignored for determination of the age. Such marriage orbirth certificates should declared *'public documents'* within the meaning of section 74 of Evidence Act, 1872, and conclusive proof of age of the child, leaving the others, to avoid uncertainty, ambiguity and confusion and to avoid undue litigations for the determination of age. An independent mechanism is to be created for this exercise.

The existing requirement provided in sub-clause (i), (ii), and (iii) of clause (2) of section 94 (2) Act of 2015, relating to determination of age, is to be modified to the extent that only the birth certificate issued from the independent registration authority shall be admissible for determination of age of the child.

Determination of the fact that particular person is child or not, is still a big problem, though the Government has enacted the Act of 2015 and mentioned the provisions for determination of age of the child in the Act itself. However these provisions are not sufficient. The present juvenile laws are not creating a deterrent effect on the juveniles and therefore the results are not fruitful and legislative intent is not achieving, rather provisions of juvenile justice are misused by juvenile delinquents.

References

1. *Article 1 of the Convention.*
2. *Ibid Article 7.*
3. *Ibid Article 6.*
4. *Ibid Article 40.*
6. *Section 2(h).*
7. *Section 2(k)*
8. *Section 2 (12).*
9. *Section 2 (35).*
10. *Section 9 (2).*
11. *Proviso to Section 9 (2).*
12. *Section 2 (23).*
13. *Section 2(20).*
14. *Para 12 of judgment in Criminal Appeal No 175 of 2021 (Arising*

out of SLP (Crl) No 2898 of 2020) Ram Vijay Singh Vs. State of Uttar Pradesh.

15. *Brij Mohan v. PriyaVart 1965 SC 282.*
16. *Ram Deo Chauhan alias Rajnath Chauhan V. State of Assam (2001) 5 SCC714; 2001 Cr. L.J.2002; Ashwani Kumar Saxena V State of Madhya Pradesh (2012) 9SCC750; Abuzar Hossain alias Gulam Hossain Vs State of West Bengal (2012) 10 SCC 489: (2013) 1 SCC (Cri.) 83; Prag Bhati V State of Uttar Pradesh (2016) 12 SCC 744; and Sanjeev Kumar Gupat V. The State of U.P. Criminal Appeal No. 1081 of 2019 decided on July 25, 2019.*
17. *Mukarab and others Vs. State of Uttar Pradesh(2017) 2 SCC 210;ArjunPanditraoKhotkar vs. Kailash KushanraoGorantyal and others(2020) 7 SCC 1;BablooPasi Vs. State of Jharkhand and another(2008) 13 SCC 133;*
18. *Abuzar Hossain Vs. State of West Bengal (2012) 10 SCC 489; Parag Bhati Vs. State of Uttar Pradesh (2016) 12 SCC 744 and Ramdeo Chauhan Vs State of Assam(2001) 5 SCC 714 : 2000 Cr.L.J. 2002.*
19. *Jai Mala v. Home Secretary A.I.R. 1982 SC 1279.*
20. *Rajender Chandra v. State 2002 A.I.R. SCW 385 (SC).*
21. *Bhoop Ram vs State of Uttar Pradesh A.I.R. 1989 SC 1329;Krishna Kant v. State of Utta Pradesh A.I.R. 1994 SC 104; Upendra Kumar v. State of Bihar(2005) 3 SCC 592*
22. *Section 94 (3).*
23. *Section 101 (1).*
24. *Section 102.*
25. *Article 136 of the Constitution of India.*
26. *Para 29 of of judgment in Criminal Appeal No 1240 of 2021 (Arising out of SLP(Crl) No 6263 of 2021, decided on18th November 2021.*
27. *Ashwani Kumar Saxena v. State of Madhya Pradesh - (2012) 9 SCC 750; Abuzar Hossain alias Gulam Hossain v. State of West Bengal - (2012) 10 SCC 489; Arnit Das v. State of Bihar - (2000) 5 SCC 488; Jitendra Ram v. State of Jharkhand - (2006) 9 SCC 428; Bhola Bhagat & others v. State of Bihar - (1997) 8 SCC 720; Jabar Singh v. Dinesh and another - (2010) 3 SCC 757; Babloo Pasi Vs. State of Jharkhand and another - (2008) 13 SCC 133; State of Madhya Pradesh v. Anoop*
    Singh - (2015) 7 SCC 733; Sanjeev Kumar Gupta vs. State of Uttar Pradesh and another - (2019) 12 SCC 370; Parag Bhati (Juvenile through Legal Guardian-Mother-Smt. Rajini Bhati v. State of Uttar Pradesh and another – (2016) 12 SCC 744 and Ram Vijay Singh vs. State of Uttar Pradesh – 2021 CriLJ 2805.
28. *Proviso to section 9(2).*
29. *Section 94 (3).*

Manglam-Year 13(02),Vol.XXV,August 2022
ISSN-0976-8149 , P-46-52

A Study On Importance of Yoga For Learners At Adolescent Stage

*Dr. Sarita Kanaujiya**

Abstract

Yoga is a way of living a happy and healthy life. It is a control over what goes inside. The Bhagavad Geeta says that Yoga is a journey of the self, through the self, to the self . It is a technique to help you bring attention over your own karma or self-realization .The aim of Yoga is the attainment of the physical, mental and spiritual health. It improves mood and reduce stress. As we know that Adolescence is a stage of stress and storm. Adolescents suffer from psychosocial problem at one hand or other during their development. Hormonal changes often disturbed their mood. So there is an immense need to find a way to balance the personality of adolescent. In this paper researcher's aim to find the effect of yoga on adolescents for balancing their life.

Keywords: Healthy, Journey, Self-realization, Adolescence, Hormonal, Balancing.

Introduction

Adolescence is an important stage of human life but it is also known as a very difficult stage. According to G. S. Hall's (1904) it is a period of great stress, storm and strike. The word 'Storm' refers to a decreased level of self-control, and '**stress**' refers to an increased level of sensitivity. Adolescence is a phase of life of a person when he is no more a child and not yet adult. The word adolescence is derived from Latin word "adolescere" meaning "to grow up" or "to mature." It is a period of transition between childhood and adulthood that involves a number of changes in body and mind. At this stage adolescents face a range of developmental issues. They experience a variety of biological changes, cognitive changes social changes and encounters a number of emotions. These changes cause confusion, fear ,curiosity ,anger and other emotion among adolescents. The adolescents during this stage finds themself in a confusing state of mind as sometimes they consider themselves as an adult and consider themselves capable of thinking and doing everything and sometimes consider themselves mere as a child and depend on other for their necessities.

Problems OF Adolescents

1. Self-Esteem and Body Image.
2. Peer-Pressure and Competition.

Assistant Professor, B.Ed. Dept., Navyug Kanya Mahavidyalaya,Lucknow (U.P.)

3. Mood swings.
4. Conflict with Moral values.
5. Social adjustment.
6. Personal health issues
7. Stress.
8. Bullying
9. Depression.
10. Cyber Addiction.
11. Eating Disorders
12. Drinking and Smoking.
13. Underage Sex
14. Day dreaming and fantasizing
15. Attention-seeking behavior to feel wanted.

These above-mentioned problems are often faced by every adolescent. In general, all of these problems are connected to each other. As when the adolescents face self-esteem and body image problems, they become confuse and frustrated. After sometime this frustration turned in to stress. To overcome from stress they start eating continuously, resulting in eating disorders. One another reason of stress is when they are exposed to peer-pressure and competition at school, many teens start to drink and smoke in order to relieve their stress, some of them run away from home, play computer games, and start chatting online with strangers. Computer games and online chatting can result in cyber addiction. Many teens feel further stress when they get bullied online. Others may become easy targets of online predators and once treated badly, they turn to more harmful practices. Those who cannot find love at home or support at schools start to build relationships with friends in school or local areas, resulting in unsafe or underage sex, and possible teen pregnancy. Many become addicted to drugs and harm themselves when they cannot get results. Many teens resort to crimes once they feel they cannot get any help or support. So, these problems one by one entered in the life of teens and they have to struggle with them. Due to generation gap they find themselves fail to get the help from their elders. Here Yoga and meditation can help them to adjust their personality.

Meaning of Yoga

The practice of yoga involves stretching the body and forming different poses, while keeping breathing slow and controlled. The body becomes relaxed and energized at the same time Yoga is about 3,000-year-old practice. The word "yoga" derived from the Sanskrit word "yuj", which means to "join" or in union. So it's literally means "to unite", it is a state of unity, balance and equilibrium between body and brain, brain and mind, mind and spirit. .

Objectives of the study

The objectives of the paper are:-

- To Know the effect of yoga on body, mind and soul.
- To examine How Yoga Enhances the Quality of life of Adolescents.

Research Methodology

An exploratory research technique has been selected for the purpose of study. The research design is descriptive in nature. This study is based on mainly secondary sources. It includes past literature from respective journals, newspapers, magazines and research papers covering wide collection of literature.

The effects of yoga on body, mind and soul.

In Indian context the yoga is designed to bring balance to the physical, mental and spiritual dimensions of the individual.According to BhagwatGita "Evenness of mind is yoga" it means a peace that is ever the same. It works upon conscious, sub- conscious as well as on unconscious mind of individual. Yoga makes an excellent alternative or complementary treatment for issues that require medication and therapy, as it is natural, accessible for all, and relatively easy to engage in. Yoga builds confidence. It helps individual to learn proper way to breathe. It makes individual more aware of his posture at all times, It makes him more mindful, It boosts his strength and endurance and most important It helps to relieve stress and depression.

Yoga Improves the Quality of life of Adolescents

Adolescences is the age of biological, cognitive, and emotional changes and yoga help adolescents to cope, accept and adjust themselves with these changes. Yoga enhances self-awareness, self-management, and self-efficacy, helping students at this age to build essential life skillsand draw connections to their everyday life in a way that team sports may not. In other words, yoga helps students develop concrete tools that empower them to take

charge of their own health. Scientific Research studies, all over the world, have revealed that disciplined yoga practices can play important role in the life of adolescent. It can help young people in developing and integrating their cognitive, affective, and psychomotor abilities. And thereby they can develop healthy social interaction with others and the environment.

Literature Review

Lilly, M. & Hedlund, J. (2010) implemented an 8-week (90 minutes, one time per week) yoga course, called Street Yoga for adolescent. The Street Yoga program was focused on youth and families struggling with homelessness, poverty, abuse, addiction, trauma and behavioral challenges. Program evaluations demonstrated that 85% of girls (ages 13-18) participating in one 8-week course reported that yoga made them feel more energetic, happier, more focused, and less nervous and tense .

Jennifer L. Frank ,Bidyut Bose & Alex Schrobenhauser-Clonan (2014) found significant and meaningful reductions in youth reports of anxiety, depression, and global psychological distress. This study provides additional support to previous research suggesting that yoga may be an effective approach for reducing emotional distress and promoting prosocial behavior in youth.

Lindy Lee Weaver (2015) in her study indicated that yoga has the potential to produce results such as anxiety reduction and improved adaptive skills At the present time, yoga interventions for anxiety reduction are feasible, well received, and may positively impact psychosocial health among children and adolescents.

Schulte, Erin Curran (2015) state that The qualitative data revealed that yoga helped students to relax and feel less anxious. This study supports the idea that in lowering anxiety and increasing relaxation, depressive symptoms may lower overall. This study also supports the idea that yoga can help increase some aspects of flourishing in high school students. they used techniques learned in yoga class to help them calm down during disagreements with family members. Their sense of accomplishment was improved by practicing yoga. Students reported that the class was difficult but that they enjoyed being able to try the poses and work up to the full form of the poses. They also described feeling better about their bodies through increased strength and balance.

Sing Bhupinder and Others (2017) Through his study clearly indicate

that wellness of the participants enhanced significantly after doing yogic practices which included Suryanamaskar, pranayam and meditation for twenty days. The pattern of result indicated that the physical and spiritual wellness of the participants increased significantly after yogic intervention. The present study also evidenced that a positive change was realized amongst the adolescents in relation to their physical wellness after their involvement in yogic practices. Result support that in the post session the adolescent students were sincere towards their physical health accordingly they showed interest in physical exercise, having nutritious diet and internalizing positive health habits Contrary to this it was observed that students showed decreased preference towards smoking.

Mohan Reema and Kumari Sony (2018) Conducted a study on male tribal adolescents between the age of 10 years and 18 years. A one-month residential yoga program showed significant change in reducing negative attitude and improvement in positive attitude in healthy volunteers. It showed significant improvement in positive affect and attitude towards violence. Yoga intervention increased self-esteem, life satisfaction, and enthusiasm for a better life, scores of interpersonal anxiety and perfectionism dropped. Yoga enhanced self-esteem and attention abilities of high school children.

Naik (Prof)Pramod Kumar and others (2018) It means yoga practice significantly influence the stress among adolescent boys and girls. So it is essential that our schools should provide facilities and encourage the adolescent boys and girls to practice yoga regularly at school. Though Yoga practice has an effective role in reducing stress that can be considered as complementary medicine and reduce the medical cost per treatment by reducing the use of drugs. The findings of the study will also help the teachers, parents, students and school administration to understand the role of yoga practice to reduce stress among adolescent.

Jessica Herms (2020) Worked upon the topic The Effect of yoga on Self-Esteem of the Developing Adolescent. This study was a qualitative systematic literature review that describes the effects that yoga may have on adolescent self-esteem. This study answers the research question by analyzing 17 articles that fit the researcher's criteria. Factors such as time, location, sample size, age and benefits of yoga where examined to determine what direct and indirect benefits yoga has on adolescent self-esteem. Results conclude that yoga has been seen to have many benefits to adolescents who practice. Yoga has been found to increase self-esteem in all participants

who practice, regardless of age. Yoga has also been seen to improve indirect benefits to self-esteem such as body image and emotional intelligence.

Conclusion

Adolescent is the stage of character building but due to transition between childhood and adulthood it involves a number of changes in body and mind that causes emotional, behavioral and developmental disorders which result increase in rates of suicide, leaving home at an early age, vulnerability to addiction and psychological illness. Above mention studies shows that Yoga improves adolescents' mood and is highly beneficial for students. Researches proved that Yoga is the art and science of living. It is concerned with the evolution of the mind body and soul. Yoga is a discipline of body, mind and soul. It begins with disciplining the body by asana or physical postures. Asana makes the spine, muscles, and joints healthy and flexible. Internal organs are getting subtle massage and they balance the physiological abnormalities, faulty insulin secretions and hormonal imbalances. Pranayama or breathing techniques strengthen the lungs, increase the supply of fresh oxygen and have a direct effect on brain and emotions. By emotional stability, mental and creative energies are directed in a constructive way and child become more self-confident, self-aware and self-control. By emotional stability a child gets peace of mind and peace of mind strengthen his soul.

References

1. *Herms Jessica (2020) Benefitsthat Flow: The Effect of Yoga On Selt-Esteem Of The Doeveloping Adolescent, A Thesis Submitted to the School of Graduate and Professional Studies In Partial ,Southern Connecticut, State University New Haven, Published by ProQuest LLC, http://search.proquest.com*
2. *Jennifer L. Frank ,Bidyut Bose & Alex Schrobenhauser-Clonan (2014) Effectiveness of a School-Based Yoga Program on Adolescent Mental Health, Stress Coping Strategies, and Attitudes Toward Violence: Findings From a High-Risk Sample, Journal of Applied SchoolPsychology, www.http://dx.doi.org/10.1080/15377903.2013.863259*
3. *Lilly, M. & Hedlund, J. (2010). Healing childhood sexual abuse with yoga. International Journal of Yoga Therapy, 20, 120-130*
4. *Lindy Lee Weaver (2015) Yoga for Anxiety Reduction in Children*

and Adolescents: A Mixed Methods Effectiveness Study, Dissertation. MOT, OTR/L Graduate Program in Health and Rehabilitation Sciences The Ohio State University, https://etd.ohiolink.edu/apexprod/rws_etd/send_file/send?accession=osu1437737562&disposition=inline

5. *http://www.casirj.com*
6. *www.irl.umsl.edu/dissertation/173*
7. *Mohan Reema and Kumari Sony (2018) Effect of yoga on positive–Negative affect and self-esteem on tribal male adolescents- A randomizedcontrol study. Indian J Psychiatry,*

Manglam-Year 13(02),Vol.XXV,August 2022
ISSN-0976-8149 , P-53-60

Social Impact Of Population Growth

Dr. Barkha Agrawal *

Abstract

Population typically refers to the number of people in a single area, whether it be a city or town, region, country, continent, or the world. It is one of the most important factors in determining the economic and social development of a country. It could either lead to dependency on the country and cause widespread misery or act as an invaluable human resource and lead to great prosperity. This paper looks at the excessive population growth of India using data from the United Nations - World Population Prospects 2022 and its negative impacts. It provides insights on the reasons for this growth and what we could do to put a check on it at an individual level and institutionally.

Keywords: Carrying Capacity, Population Explosion, Birth rate, Death Rate, Underemployment, Family Planning.

Introduction

Population is both the "means" and the "end" of economic activities. It is therefore the most important factor in economic and social development.

The Earth's "carrying capacity," or the number of people it can safely sustain in terms of food, water, and resources, is a finite and specific number. While we don't know exactly what the number is, technology and other advances or the development of new resources can raise it. We can safely assume the world population is growing faster than the carrying capacity. Population growth, in other words, increases competition for those resources. At some point, excessive population growth leads to widespread misery and the death of some of the population, until the population is back under the carrying capacity threshold again.

India's population increased rapidly in the post-independence period. Between 1951 and 1961, it increased by more than 7.82 crores, or by nearly 21.6%, which exceeded its growth rate of the previous 40 years. And now India's population, according to the census of 2021, is 139.34 crores. This excessive rise in the population is called a "population explosion."

The main cause of the increase in the population is the substantial decline in the death rate compared to the birth rate.

The recent increase in the world population has been caused mainly for three reasons:

Head of Department, Economics, B.S.A. College, Mathura (U.P.)

1.High Birth Rate, 2.Reduced Death Rate, 3.Immigration

Therefore, to understand the nature of India's population problem, we must examine the reasons why the birth rate continues to be high.

Birth Rate

The birth rate in India is high compared to most countries in the world. The birth rate refers to the number of children born per thousand people in a year. The death rate refers to the number of people dying per thousand people in a year. When the birth rate in India is stated to be 22 per thousand, it means that, on average, 22 children are born per thousand people each year. The birth rate and death rate situation in India for the last 120 years is shown in the table:

Period	Birth Rate (Per 1000 per year)	Death Rate (Per 1000 per year)	Growth Rate
1911	49.2	42.6	6.6
1931	46.4	36.3	10.1
1951	44.0	27.6	16.4
1961	41.8	21.9	19.9
1971	39.0	17.0	22.0
1981	36.0	13.2	22.8
1991	31.2	10.7	20.5
2001	26.2	8.7	17.5
2011	20.9	7.5	13.4
2021	17.4	7.3	10.1

(Source: United Nations - World Population Prospects)

Thus, in the last 120 years, from 1901 to 2021, where the birth rate has fallen marginally, the death rate has shrunk to one-fifth. Because of it, the situation of a population explosion has arisen. In the first twenty years of this century, i.e., from 1901 to 1921, the population remained stable because both the birth rate and the death rate were almost equal. Due to the improvement in health and medical facilities post-1921, epidemics like the plague, cholera, influenza, malaria, etc. were brought under control. Consequently, there was a sharp decline in the death rate. Proper distribution of food grains in the country also brought down the rate of starvation deaths. Thus, the death rate has been on the decline since 1921, but no appreciable fall in the birth rate has occurred. Some decline in the birth rate is visible under the impact of family planning programs pursued after 1961. As a result, the birth rate came down to 36 per thousand in 1981, 32.5 per

thousand in 1991, and 22.5 per thousand in 2009, and 17.4 per thousand in 2021. The birth rate is higher than the death rate, therefore, growth rate is positive. This indicates an increasing population in the coming years.

Causes of High Birth Rate in India

The birth rate is still high in India and the expectation that it would decline significantly as a result of family planning programs has been belied.

The main causes of the high birth rate are as below:

Agriculture Occupation

India is an agricultural country. People feel that more people are needed to help them with performing agricultural operations. Even children get some sort of work in agriculture. Thus, they do not prove to be a burden on their family. Accordingly, the rural population in India has the tendency to have large families.

Initial increase in Per Capita Income

In underdeveloped countries, when per capita income increases in the initial stage of economic development, people prefer large family sizes to better living standards. India is in the initial stage of economic development, so India's birth rate is high.

The universality of Marriage & Early Marriage

In India, marriage is a social compulsion. An unmarried person and a married couple without children are looked down upon. Hence, every person gets married and goes in for children, and the result is a high birth rate. Early marriage is a common feature in India. Most girls are married in the age group of 16 to 23 years. Thus, women have a long child-bearing period. Unmarried women under the age of 30 account for 41% of the female population in Europe and 23% in America, respectively.

Poverty and Illiteracy

Another contributory factor to the rising birth rate is the poverty of the people. Poor people spend little on the upbringing of their offspring. Besides, the children supplement the family income by engaging in some odd jobs at an early age. So, having a large family is not considered burdensome. The rate of illiteracy is high in India. Illiterate people fail to understand the significance of family planning. They are not mindful of their living standards and small family norms.

High Infant Mortality rate

In India, the infant mortality rate is very high. It was 28.77 deaths

per 1000 live births in 2021. The fear of their infants dying too soon encourages parents to have more children.

Increase in Expectation of Average Life

The average life expectancy in India has increased from 32 years in 1951 to 69.66 years in 2019. It has also added to the population.

Death Rate

Although poverty has increased and the development of the country continues to be hampered, the improvements in medical facilities have been tremendous. This improvement might be considered positive, but as far as population growth is concerned, it has only been positive in terms of increasing the population further. The crude death rate in India in 1981 was approximately 12.5, and that decreased to approximately 7.3 in 2021. These numbers are a clear indication of the improvements in the medical field.

Immigration

In countries like the United States (U.S.), immigration plays an important role in the population increase. However, in countries like India, immigration plays a very small role in population change. Although people from neighboring countries like Bangladesh, Pakistan, and Nepal migrate to India, at the same time, Indians migrate to other countries like the U.S., Australia, and the U.K. During the 1971 war between India and Pakistan over Bangladesh, the immigration rate increased tremendously. However, migration in India in 2021 was 0.356 per 1000 population, a 3.53 percent decrease from the previous year, and it is expected to continue to fall. This is definitely good for India. This way, the population might eventually come close to being under control and more people may get better job opportunities and further education.

Soclal Impact Of Population Explosion

Presence Of Natural Checks

According to T.R. Malthus, a leading classical economist, a high birth and death rate are the symptoms of an over-populated world. In his opinion, if the country is overpopulated, early deaths due to starvation, disease, or some other natural calamity are inevitable. Man must learn to keep the population within the limits set by nature, or else nature will ruthlessly wipe out the excess population. Nature, however, does not appear to be in action in India in the Malthusian sense.

Starvation deaths and suicides due to poverty continue to occur. These are the facts of life in India, and the neo-Malthusian argues that they should be considered adequate evidence of overpopulation in this country.

Air Pollution

The technological development of India has led not only to medical advancements but also to an increase in the number of factories which has led to air and water pollution. More energy needs to be produced to power these factories. When fossil fuels, the world's primary energy source, are burned, gases are released into the atmosphere. Due to vehicular and industrial emissions, many Indian cities have exceeded the limits for suspended particulate matter, sulfur dioxide, and other pollutants.

Water Pollution

Air pollution is not the only environmental damage being done by the increasing population. Nowadays, water pollution is also one of the increasing problems due to the population explosion. In fact, three sides of the Indian subcontinent are surrounded by water. And there are several rivers, lakes, and other sources of water within the country as well.

One of the classic examples of water pollution in India is the river Ganga. This river is considered sacred and incorruptible. People bathe in it for spiritual renewal and drink water from it. But people do not realize that along with washing off their sins in the river, they are also washing off their body wastes, polluting the holy water of the river. Also, cremated and partially cremated bodies are dumped into the river. Although dumping these bodies is a religious act in India among the Hindus, at what cost? Thus, with the increase in population, pollution in the river Ganga is also increasing. In addition, the nearby factories and human colonies dump sewage directly into the river.

As we can observe, the increased population size is leading to increased pollution, which in turn is leading to a more hostile environment for human beings themselves.

Unemployment And lliteracy

India, being a developing country, has a limited number of jobs available. Due to the increasing number of people, the competition for the most menial jobs is also tremendous.The rapid growth rate of the population causes widespread unemployment in India. From 2012 to 2021, India's unemployment rate averaged 44.36 percent.

India is overpopulated. Therefore, despite the increase in employment opportunities, it is unable to provide employment to all job seekers.

Lack of education leads to even more unemployment. For these reasons, a major part of the population is either illiterate or has the minimum education, leading them to accept minimal work in which they cannot even support themselves.Unemployment, or underemployment, furthers poverty. This starts the vicious cycle of poverty and population explosion discussed above.

Food Resources

Resources are always limited, and in a developing and highly populous country like India, resources are even scarcer. A population explosion results in a shortage of even the most basic resources like food.

India is facing an intense crisis of resources. There is fierce competition for the nation's limited resources, leading to quarrels between states, communities, and even families. Our land and water resources are being exploited to the hilt. The exploitation of mineral resources is threatening forests, nature reserves, and the environment. India imports 46.13% of its total primary energy consumption. Population growth puts constant pressure to export more or face currency depreciation. Overuse of resources is contributing to natural disasters occurring more frequently and with greater devastation. For many Indians, life is a big struggle just to put together the bare essentials for survival, and shortages of resources work most against the poor and underprivileged. Even as sections of India's lower middle-class struggle with scarcities, it is the poor and vulnerable sections of society that suffer the most. It is a well-known fact that the biggest curse on the lives of millions of Indians is poverty.

Remedies For Popilation Explosion

India is facing an intense population outburst problem. People are experiencing crises such as climate change, a shortage of food, and also severe energy crises. Our civilization is being squeezed between rising population densities. It can be said that if such trends continue, there will be a severe shortage of food supply in the very distant future. While in certain places, there is a shortage of drinking water, there are areas that suffer due to devastating floods every year. People should, on their own, restrain themselves from having more children voluntarily to sustain a better quality of life not only for themselves but also for their children, the nation, and future generations. Otherwise, future generations will likely curse their

forefathers for leaving behind an unmanageably large population that must struggle every day to live peacefully and comfortably.

Family Planning

The importance of the family planning program as a device to control population explosion is universally recognized, so much so that even the decision-makers in communist countries have shed their bias against it and have become receptive to the idea of a small family norm. In China, for example, the state has approved the one-child norm and has succeeded in bringing down the birth rate. The factor that has contributed the most to China's success on this front is the widespread use of contraception. Even Sri Lanka has done better than India in this regard, and as a result, its birth rate has come down. It is thus clear that in India, with the exception of the states of Kerala, Tamil Nadu, and Goa, the masses are not presently aware of the need for family planning. The decision-makers in the government, however, recognize its importance at this critical juncture.

Access to Sex Education

Providing access to sex education and having adult education programs is the least the government could do to curb the rise of the population. Another factor contributing to population growth is the issue of child marriage.

Greater Education & Awareness

Greater education, awareness, and a better standard of living among the younger age group population would create the required consciousness among them that smaller families are desirable. If all the felt needs for health and family welfare services are fully met, it will be possible to enable them to attain their reproductive goals, achieve a substantial decline in family size, and improve their quality of life.

But what are we, as the citizens of the country, doing to contain and snub the problem? We have to get up and stand together and fight this predicament, changing it from mode to solution mode.

Problem with Implementing Measures to Control Population

The problem of a large population in India is probably due to the government's inability to implement family planning policies. Successive governments have failed to attach due importance to the issue and tackle this problem, which has resulted in a tremendous rise in the population in the country. Politicians don't seem to be interested in the welfare of the country and more often than not relegate such issues as unimportant while

trying to deal with other issues, scarcely realizing that most of the problems the country faces today are due to the huge population. The lack of sex education in India also has a huge role to play in the population explosion that has followed since independence.

Conclusion

Considering the above factors, it is obvious that in India, the success of family planning programs depends on too many factors, making it a more complex operation than usual. However, this does not change the fact that birth control is extremely important in order to improve the lives of future generations.Finally, the solution lies in the spread of education and enlightenment, and in the empowerment of women. Population control programs are also essential from the environmental and energy crisis points of view.

We need better intergovernmental response and action on a large scale and better urban planning on a small scale. We must plan our cities with the help of strong local and central governments supported by active citizen groups.

References

1. *Puri VK, Mishra SK. Indian Economy: Publication Himalaya publishing house. 2004.*
2. *United Nations. World Population Prospects. 2022.*
3. *StatisticsTime.com. India population. 2021.*
4. *Census of India and Economic Survey.*

Manglam-Year 13(02),Vol.XXV,August 2022
ISSN-0976-8149 , P-61-67

How Needful Is The Practice Of Zero Budget Natural Farming For Rural Marsinalised Farmer

*Dr. Hani Misra**
*Suman Lata***

Abstract

The entire world is fighting against an unprecedented Pandemic COVID-19. India was under complete Lockdown for 54 days till May and thereafter few relaxations were given to resume the economic activities. This has brought in several social and economic disorders leading to conflict, chaos, stigma and inequitable use of resources for survival. The worst sufferers are daily wagers, small vendors / business and small & marginal farmers as their earnings are suddenly stopped or drastically reduced. Rural Uttar Pradesh has witnessed reverse migration on a large scale. There are huge challenges for survival before the returnee migrants and their families. This situation has heightened the risk of malnutrition/undernutrition as the plates of poor households lack diet and nutritional diversity.

The agrarian communities are currently dealing with the onslaught of ecological and economic issues. The farmer is economically doomed because, with the rise in the input cost and low-price realization for their produce. It leads to less income and migration in order to sustain their living. India is one of the largest producers of pesticides in Asia ranking thirteenth in the world for pesticide use. The food produced contains pesticide residues which compound the problems of nutritional diseases. The way we are doing farming today is jeopardizing our soil health and water. The chemical fertilizers and pesticides kill the micro-organism that maintains soil health and help plants to get their food. These chemicals are also causing the pollution of ground water sources.

Kanpur Dehat district is located in central Uttar Pradesh and the river Yamuna divides the Kanpur Dehat and Jalaun area, there has a river Isan catches 16Kms. The river Sengaur stretches 63kms, Pandu River covers 30 Kms. and the river Rind reaches 115 kms of Kanpur Dehat district. This used to be the reason of best soil & water and therefore agriculture. The technology promoted in last few decades moved farmers from local resource based zero cost agriculture to market dependent, high investment agriculture. This high external input based, and mechanised farming does not suit small & marginal farmers who form more than 80% of peasant community in the region. As a result of all this migration of youth to metro cities is seen as a necessity. COVID-19 has forced these migrants and their families to find livelihood prospects in the local area, which very few could find and a large part of them have returned from metros again.

***Assistant Professor, Department of Geography, D.A.V College Kanpur (U.P.)**
****Programme Coordinator, Shramik Bharti, Kanpur (U.P.)**

Introduction

A study was conducted using Focus Group Discussions among Farmers, Farmer Groups, Women and youths in particular to understand the current practices and existing level of awareness on Zero Budget Nature Farming, impact on livelihood and nutrition, impact on the environment, constraints and barriers faced, and their level of interest, aspirations and possible participation in Zero Budget Nature Farming. With a view to ensure the active and persistent engagement of community in the study participatory tools that included Timeline and Trend Analysis Tool, Hazard Ranking and Helping and Hindering Exercise, Cost-Benefit Analysis of main crops and Mobility Mapping were used during Focus Group discussions. This narrates the findings of 10 villages of Rasoolabad block under the Kanpur Dehat District. Farmers were found using chemical fertilizers and pesticides in large quantities despite of having informed about the ill effects of such products. The study revealed higher dependence of farmers on market for agri inputs. The traditional farming practice such as use of cow dung manure, storing and preserving indigenous seeds and mixed cropping was not in practice in the study area.

The main objective of the study was to identify opportunities for Zero Budget Natural Farming interventions which can contribute and improved livelihoods and socio-economic conditions of marginalized farmers and rural households.

Problem Identtfied

It is observed that farmers are highly dependent on market for agri inputs. They are purchasing each and every agri input such as seeds, fertilizers, pesticides, weedicides, growth promoters and agriculture tools from the market. Sometimes they are also duped by agri input sellers and get low quality seeds, fertilizers, pesticides etc. 60 to 70% farmers are using High Yielding Variety (HYV) seeds and they purchase it from research centres and use of indigenous and local seed varieties is almost vanished.

The chemical fertilizers, pesticides, nutrients, and growth promoters are simply available in every nook and corner of the villages today. The discussion revealed that there is no authentic source of information available to farmers regarding use of required quantities of chemical fertilizers, pesticides/weedicides, nutrients, and growth promoters on specific crops. The local retailer and/or peer farmers serve as consultants. There is also lack of awareness about government schemes such as soil health card etc.

to avail benefit of the same for improving the soil health by using appropriate quantities of chemical fertilizers and nutrients.

There also exists practice of applying a mix of cow dung/organic manure and chemical fertilizers on crops. Although there is good level of awareness about organic farming among villagers yet farmers do not solely rely on this package of practices with the fear of low production. The farmers are also concerned about the quality of manure as it lacks branding and certification.

Thus, the greater dependency of farmers on market for agri inputs has emerged as the main reason of increasing cost of farming ultimately making farming a loss-making occupation to small and marginal farmers.

Information and access of improved small farm tools, that make farming operations easier and more efficient, is lacking among farming community. Farmers are found using large farming equipment's such as Tractor and Thrasher for farming.

It is observed that villagers are selling their produce soon after harvesting. They are not even performing the basic processing activities such as cleaning, sorting, and grading in some crops like Pulses and Paddy to add value to Agri produce. They do not even have storage facilities. Therefore, they sell their produce as immediately. It is also seen that transportation costs for the Mandi and other market out of the block are very expensive, so they prefer to sell to local merchants and suppliers. Those who can buy produce from the villages directly.

Tubewells, Pumpsets and Submersible Pumps were emerged as major means of irrigation in study area. Undoubtedly, this has made the farming operation easy for farmers, but input cost of farming has increased. This has also led to increased water extraction which is reflected in reduction in groundwater table, and it will further deplete in future. Farmers mentioned stray and other animals as the biggest challenge/hazard for their growth. The animals like ox, pigs, monkeys, Nilgai and grasshopper etc. destroy the crops leaving farming community in distress.

Other key barriers cited by farmers were high input cost in farming, low/lack of understanding about farming technology, lack of storage facility, lack of knowledge and facilities for value addition, lack of access to forward linkages (marketing) and fear/lack of trust on organic farming.

Environment / climate change, causing flood, dried/polluted pond and rivers, land and soil erosion and soil infertility, was found affecting the lives

and livelihoods of residents of the study area, adversely.

Here is the hazard ranking for these challenges and priorities this in ascending order:

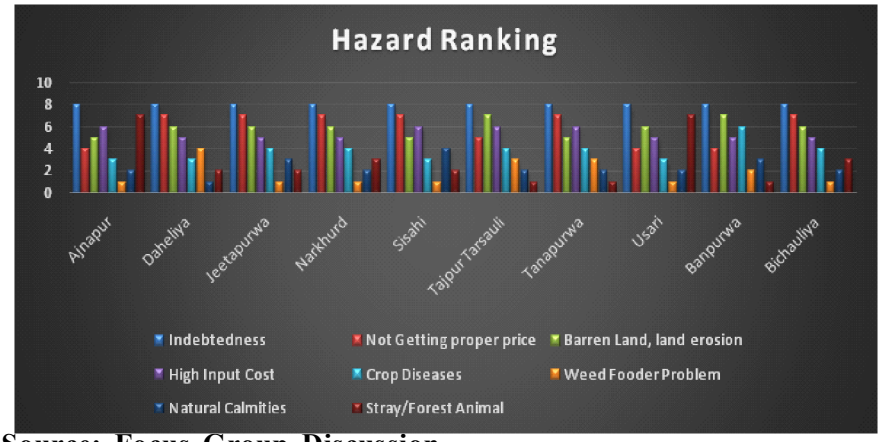

Source: Focus Group Discussion

Below the graph clearly depicts the economics of major crops in study villages. Majority of farmers in all villages of Rasoolabad block are small and marginal farmers who grow Wheat and Paddy

In the villages Tanapurwa and Tajpur Tarsauli of Rasoolabad block have gone through the problem of wasteland outbreak and the other constraints were lack of storage facility and equipment to remove husk, milling and other processes for Paddy crop, due to which they were forced to sell the produce to traders at skimpy price and suffered losses, which is 6% for Tajpur Tarsauli and Rs 10% for Tanapurwa village for Paddy Crop.Whereas they getbenefits in wheat crop due to low processing cost and availability of fodder in additional yield.

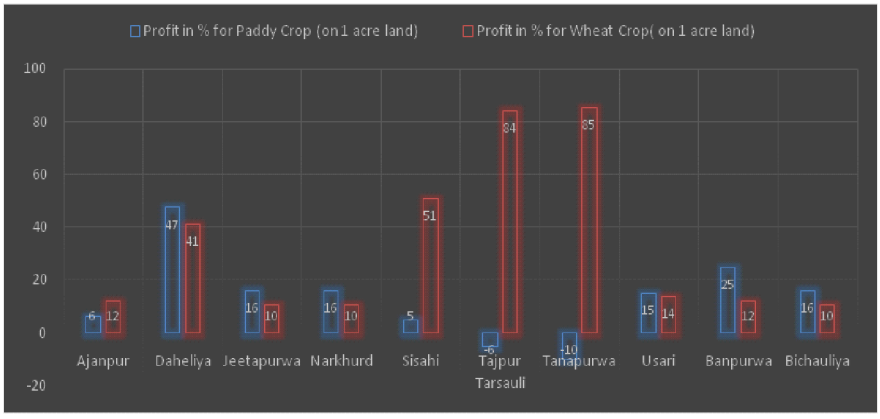

Source: Focus Group Discussion

Solution

The key activities suggested by the study for promotion of Zero Budget Natural Farming Practices and other livelihood practices include disseminating the technical knowledge and technique to farmers and youths, promotion of small agri implements, exposure to model farms, collectivizing the farmers such as FPOs, value addition activities and establishing linkages with marketing system.There emerged good possibility of promoting environment friendly, sustainable, Climate Smart Agri practices, nature farming among farmers, women and youths in the study area if it gives them good production and fair price to sustain their living.

Women were found largely engaged in farming followed by livestock rearing. The study revealed that despite of hard work women put in agricultural field they are not recognized as farmers. Also, women have little or no say in marketing of agri produce. They aspire to have better livelihood opportunities in their vicinity. It can be a food processing unit, dairy, cold storage, mill or factory. There is good potential for value addition or food processing activity for better income and women are keen to learn and practice the same if they are provided technical and handholding support.Youths of the study area have lost faith and interest in farming and consider it a loss-making business. Allied agriculture activities such as Poultry Farming, Fish Farming, Food Processing, manufacturing units etc. emerged as possible livelihood interventions among youths.

Organic Kitchen Garden is also a simple and affordable solution to address the issue of nutritional security and improves the livelihood by providing an additional income to marginalized households by the sale of surplus vegetables. This activity can be done by the women of the household along with other household chores. Growing vegetables and fruits without using chemical fertilizers and pesticides helps in providing nutritious food and also maintain the surrounding environment; Water, soil and air leading to safe, healthy life.

Conclusion

The discussion with small and marginal farmers gave valuable insights into the opportunities towards long term sustainability of Zero Budget Nature Farming in study district. Participants mentioned about Indian Philosophy that does not consider farming as an occupation. It is India's cultural heritage. To learn Zero Budget Nature Farming, one has to understand the interrelationship between nature and human being. Though Globalization has commercialized farming in India yet efforts are being made to return

back to India's age-old culture. It contains the development of humanity through co-relationship of human being and nature. Organic Farming upholds this balance. Nature has the answer of problems in farming. So, farmers return back to their roots, understand the ecology and practice nature farming. Need to take up collectivized efforts by farmers, market for selling organic produce and value addition was highly recommended by the forum.

Study also reveals that promotion of Climate Smart Agriculture technique was recommended as the need of the time. The need of strengthening existing farmers training centers and demand to maximize its reach to farmers was emphasized. At the same time encouraging and mobilizing farmers to avail services of training centers for updated information was stressed upon. Organizing farmers as collectives / Farmer Producer Organization for better gains was highly recommended by the forum. Use of Small Agri Implements was suggested specially by the small & marginal farmers. Importance of Exposure to Model Farms and Farmers was discussed and recommended based on the principle of seeing is believing.

Another important suggestion was Strengthening Linkages with local markets (Mandis). Participants mentioned that Digital Market or E - Marketing System started by government will take time in reaching to the majority of farming community. It would be more effective and productive to make efforts to build linkages with local markets whereas the storage and transportation facility at village level / GP level needs to be created / improved. Capacity Building of Farmers in food processing technique, packaging etc. should be done so that they can get better value of their produce in the market.

References

1. *Sarma, P. (2016, May 28), Campaign to Reduce Use of Chemical Fertilizers, Pesticides,The Hindu.*
2. *Statistical Patrika Statistical Patrika, Kanpur Dehat District, 2018 Link: http://updes.up.nic.in/spiderreports/intialisePage.action*
3. *Link:https://censusindia.gov.in/2011census*
4. *Tewari, A., & Khurana, A. (2017, October 4). A Certified Problem. Down To Earth.*
5. *United Nations, (2014),The world survey on the role of women in development 2014. UN Women.*
6. *Zaman, A., & Maitra, S. (2010). Organic Agriculture: Prospects, Problems and Constraints.*

7. *https://encheminverslaterre.wordpress.com/2015/02/08/natueco-science-a-new-way-of-farming/*
8. *https://www.downtoearth.org.in/blog/agriculture/permaculture-is-growing-rapidly-in-india*
9. *www.Iosrjournals.Org) Status of pesticides use by country, link:*
10. *https://www.worldometers.info/food-agriculture/pesticides-by-country/*

Manglam-Year 13(02),Vol.XXV,August 2022
ISSN-0976-8149 , 68-74

Relationship Between Family Envtronment And Psychoglcal Well-Being

*Ms. Jyoti Shukla**

*Dr.Shailendra Prasad Pandey***

Abstract

Family environment defines the overall functioning of an individual as it is the first sphere of social influence through the lifespan. It has its influence across the social, physical, and psychological dimensions. It tends to define the psychological well-being and level of distress among the individuals. College students are predisposed to various forms of stress factors, making it crucial for family environment to be cordial. This study aimed to explore the relationship between family environment and psychological well-being among college students.The Participants selected for the present study are 500 college students (Males=250 & Females=250), who were randomly selected from various U.G. and P.G. colleges from Lucknow. The findings of the study reported that significant difference was found on the cohesion and expressiveness dimension of family environment score (p=.002, p=.020). No significant difference was found in psychological well-being and Total Family environment of college students. Positive relationship was found between psychological well-being and cohesion dimension of Total Family Environment (r=.108, p>0.01). Negative relationship was found between psychological well-being and expressiveness dimension of Total Family Environment (r=-.105, p>0.01). Negative relationship was found between psychological well-being and Total Family Environment (r=-.038, p>0.01).

Introduction

Family environment is the most proximal and enduring context for growth of an individual. It tends to lay the foundation in identifying the principles, accepting values, playing out family roles, developing affection, and eventually distinguishing one's own values and goals from those held by other family members. The family interactions play an important role in the development of an individual. The effectiveness of family functioning in conditioning the children's personality and social development has an outstanding importance. The central part of life post childhood is discovering all those motives, values and beliefs that were not accepted within the boundaries of one's family (Newman & Newman, 1981). The family environment is the nucleus of all other social institutions. The healthy

***Research Scholar, Department of Psychology, SantTulsidas P.G.* College Kadipur, Sultanpur (U.P.)**

****Department of Psychology, Sant Tulsidas P.G. College Kadipur, Sultanpur* (U.P.)**

functioning of these interaction patterns enhances the mental well-being of an individua (Kaur et al., 2015).

Different family environments vary in various aspects as parents' level of education, economic status, occupational status, religious background, attitudes, values, interests, parents' expectation for their children, and family size. The term "Family Environment" refers to all the entities, forces and conditions in the home which influence the child physically, intellectually, and emotionally. Late adolescence is a phase wherein students face many psychological and social complications especially due to the family and/ or peer pressure of acceptance and academic stress (Singh & Singh, 2021). They also feel confused with the values of the family as well as the values followed by the peer group. The plight of coping with the stress leads to anxiety and a feeling of insecurity.

Well-being is one of the most important goals which individuals as well as societies strive for. The term denotes that something is in a "*good state*". The Psychological Well-being (Ryff& Keyes, 1995) is based on the premise that "*being well*" encompasses a range of characteristics and perceptions pressing on the context that positive functioning constitutes much more than one's current level of happiness.According to Huppert (2009) psychological well-being is about lives going well. It is the combination of feeling good and functioning effectively. Individuals with high psychological well-being report feeling happy, capable, well-supported and satisfied with their life. Family environment is a key position rests on its multiple functions in relation to overall development of its members, their protection and overall well-being.

The present study aimed to explore the relationship between family environment and psychological well-being among college students.

Methods And Materials

Aim

The present study aims to explore the relationship between family environment and psychological well-being among college students**.**

Objectives

- To assessFamily Environment of college students.
- To assessPsychological Well-Being of college students.
- To study relationship between Family environment and Psychological

Well-beingamong college students.

Hypotheses

- There will be a significant difference in Family Environment of college students.
- There will be a significant difference in Psychological Well-being of college students.
- There will be a relationship between Family environment and Psychological Well-beingamong college students.

Sample

The Participants selected for the present study are 500 college students (Males=250&Females=250), who were randomly selected from various U.G. and P.G. colleges from Lucknow. The age of the participants was ranged between 20 to 25 years, with the mean age being 22 years.

Tools of the Study

A. Family Environment Scale (FES) by Dr.HarpreetBhatia and Dr.N. K. Chadha is a standardized and reliable scale to measure the family environment of the participants. It consists of 69 items which were taken under three major dimensions. These are: (1) *Relationship Dimensions* (Cohesion, Expressiveness, Conflict, and Acceptance and Caring As such), (2) *Personal Growth Dimensions* (Independence and Active Recreational Orientation), and (3) *System Maintenance Dimensions* (Organization and Control). Items range from strongly agree to strongly disagree.The reliability coefficient of the entire scale was estimated using the Spearman–Brown Prophecy formula and the Reliability Coefficient of the FES was 0.92.

B. The PsychologicalWell-Being Scale by Dr.Devendra Singh Sisodia and Ms. Pooja Choudhary in 2012. It consists of 50 items bifurcated within five dimensions viz. *Satisfaction, Efficiency, Sociability, Mental Health and Interpersonal Relations*. The scale has high reliability (0.86) and validity (0.70).

Procedure

The purpose of the study was briefed, and rapport was established for ease of study conduction. Socio-demographic details were collected in the data sheet prepared and was followed by the instructions separately to answer the two questionnaires. The participantswere thanked for their co-operative participation. Analyses of Results was done using appropriate statistical tools.

Analyses of Results

The obtained scores were analysed using SPSS to compute descriptive statistics and correlations to study the differences and interactive effects of Psychological Well-being and different areas of Family Environment.

Results And Interpretaion						
	Gender	**N**	**Mean**	**Std. Deviation**	**p-value**	**t-value**
Psychological Wellbeing	Male	250	184.2560	47.68949	594	-.534
	Female	250	186.5120	46.78089		
Cohesion	Male	250	19.8800	6.06140	.002	3.169
	Female	250	18.2240	5.61533		
Expressiveness	Male	250	19.4160	5.83740	.020	-2.339
	Female	250	20.7160	6.57024		
Conflict	Female	250	21.0440	6.78011	.682	.410
	Male	250	20.8000	6.51165		
Acceptance and caring	Female	250	24.0360	6.20554	.466	.730
	Male	250	23.6200	6.53409		
Independence	Female	250	20.1600	6.53492	.210	-1.254
	Female	250	20.8960	6.58686		
Active Recreational Orientation	Male	250	18.7720	6.44345	.442	.770
	Female	250	18.3360	6.22141		
Organization	Male	250	18.6200	5.35971	.363	-.910
	Female	250	19.0640	5.54897		
Control	Female	250	21.0080	5.93674	.799	.255
	Male	250	20.8720	6.00198		
Total Family Environment Score	Male	250	162.9360	15.30873	.768	.295
	Female	250	162.5280	15.60408		

Table 1: Mean and Standard Deviation (SD) in Psychological Well-Being and Family Environment among College Students

Table-1 depicts the mean score and standard deviation in psychological well-being and Family Environment among college students. Significant difference was found on the cohesion and expressiveness dimension of family environment score (p=.002, p=.020). No significant difference was found in psychological well-being and Total Family environment of college students.

		Psychological Well being	Total Family	Cohesion		Conflict	Acceptance and				Control
Psychological	N=500	1	-.038	.108*	-.105*	.082	-.055	.038	-.067	-.058	-.011
	Sig.(2-tailed)		.401	.016	.019	.067	.219	855	.136	.195	.801
	N=500		1	.369**	.361**	.435**	334**	233**	.192**	.187**	.373**
	Sig(2-tailed)			.000	.000	.000	.000	.000	.000	.000	.000
Cohesion	N=500			1	-.056	.072	-.022	-.002	.018	-.044	-.006
	Sig.(2-tailed)				.208	.108	.620	.964	.684	.321	.885
Expressiveness	N=500				1	-.022	-.080	.030	-.040	-.042	.101*
	Sig.(2-tailed)					.625	.073	.500	.378	.352	.024
Conflict	N=500					1	-.009	-.036	-.059	.094*	-.006
	Sig.(2-tailed)						.834	.421	.187	.036	.902
Acceptance and caring	N=500						1	-.093*	.007	-.041	.047
	Sig.(2-tailed)							.037	.877	.357	.295
Independence	N=500							1	-.236**	-.112*	-.036
	Sig.(2-tailed)								.000	.012	.428
Active Recreational IO rientation	N=500								1	-.183**	-.055
	Sig.(2-tailed)									.000	.221
Organization	N=500									1	-.086
	Sig.(2-tailed)										.055
Control	N=500										1
	Sig.(2-tailed)										

Being and Family Environment among College Students

Table-2 depicts the relationship between Psychological Well-Being and Family Environment of College Students. Positive relationship was found between psychological well-being and cohesion dimension of Total Family Environment (r=.108, p>0.01). Negative relationship was found between psychological well-being and expressiveness dimension of Total Family Environment (r=-.105, p>0.01). Negative relationship was found between psychological well-being and Total Family Environment (r=-.038, p>0.01)

Discussion

The study was conducted with the aim of assessing the psychological well-being and Total Family Environment among college students. Findings of the study reported that no significant difference was found in psychological well-being and Total Family environment of college students. It has been reported that secure emotional base is essential for the positive development of students (Maheshwari et al., 2020). The findings suggested that various dimensions of the family environment were significantly correlated with each other.It is reflected by a study done by Punam& Kumar, 2014 that family environment affects mental health of an individual. A significant positive relationship has been reported through the findings which suggest that various dimensions of family environment supports for better psychological well-being among students(Sathyabama&Eljo, 2014).

Positive relationship was found between psychological well-being and cohesion dimension of Total Family Environment. It is in line with the suggestions of findings by Aufseeser et al., 2006 that family environment can be a strong source of support for developing adolescents, providing close relationships, strong parenting skills, good communication, and modelling positive behaviours.

Conclusion

Positive family environment is crucial for sustaining better psychological well-being of college students as they transition through the adolescent to the adulthood. The upsurge in the emotional states of an individuals make them prone to mental health crisis during this phase. Cordial family environment which supports and encourages active communication, cohesion, interaction, and conflict resolution enhances their psychological well-being. The health and other achievements of an individual are directly related to the physical and intellectual conditions of the present states. If the conditions at home are congenial, then their mental distress are alleviated, making it crucial for implementing measures that can surface such accommodations.

References

1. *Aufseeser, D., Jekielek, S., & Brown, B. (2006). The Family Environment and Adolescent Well-Being: Exposure to Positive and Negative Family Influences. Child trends.*
2. *Huppert, F. A. (2009). Psychological well?being: Evidence regarding its causes and consequences. Applied psychology: health and well?being, 1(2), 137-164.*
3. *Kaur, M., Dhillon, S. S., & Kaur, R. (2015). A study of relationship of family environment with Mental Health of adolescents of Sirsa District. Int J Appl Res. 1(9):472-475.*
4. *Maheshwari SK, Chaturvedi R, Gupta S. Impact of family environment on mental well-being of adolescent girls: A cross-sectional survey. Indian Journal of Psychiatric Nursing. 2020;17:24-8*
5. *Newman, B. M., & Newman, P. R. (2015). Theories of human development. Psychology Press.*
6. *Punam, B. D., & Kumar, M. (2014). Relationship between family environment and wellbeing: A study of adolescents. Int J Inform Futuristic Res, 29, 271-6.*
7. *Ryff, C. D., & Keyes, C. L. M. (1995). The structure of psychological well-being revisited. Journal of personality and social psychology, 69(4), 719.*
8. *Sathyabama, B., &Eljo, J. J. G. (2014). Family environment and mental health of adolescent girls. system, 66, 34-0.*
9. *Singh, G., & Singh, A. (2021). Academic Stress and Its Management: A Hurdle in Education 4.0. Education, 4.*

Manglam-Year 13(02),Vol.XXV,August 2022
ISSN-0976-8149 , P-75-81

The United Nation And Human Rights

(Creating a Culture of Human Rights)

*Shalini Mishra**

Promotion and encouragement of respect for and observance of human rights and fundamental freedoms is one of the purposes of the United Nations. The Charter of United Nations mentions the term human rights seven times, but makes no reference to "protection" of "human rights". A question arises how this purpose is achieved by the United Nations ? It is to be noted that the role and scope of U.N. action in promoting and protecting human rights have tremendously increased in the last fifty five years. It has been able to promote and protect human rights by a number of ways which are as follows:

(1) The first and the most important role which the United Nations has played is that it has made the people and the States conscious about the human rights and fundamental freedoms. It has set a pace in establishing minimum standards of acceptable behaviour by States. The proclamation of the Universal Declaration of Human Rights containing the universal code of human rights may be regarded as the first step towards the promotion and protection of human rights.

(2) The United Nations has codified the different rights and freedoms by making Treaties for all sections of the people such as women, child, migrant workers, refugees and stateless persons. In addition to the above, the prohibition on the commission of inhuman acts such as genocide, apartheid, racial discrimination and torture have been brought within the international rule of law.

(3) Treaty bodies. Special Rapporteurs and Working Groups of the Commission on Human Rights have procedure and mechanism to monitor compliance with conventions and investigate allegations of human rights abuses.

(4) A number of expert committees have been established under particular treaties. They are not subsidiary organs of the United Nations, but are autonomous. The Committees are termed U.N. Treaty Organs. Their resolutions on specific cases carry a moral weight that few Governments are willing to defy-In the past, U.N. Human Rights monitors have been

Research Scholar, Department of Sociology, T.D.P.G. College, V.B.S.Purvanchal University, Jaunpur (U.P.)

sent to many countries including El Slavador and Cambodia. Human Rights monitors have also worked as part of peace-keeping operations in Haiti, Rwanda, Guatemala and the former Yugoslavia. 4. A number of human rights treaties permit individuals to make petition before the appropriate bodies. For instance, the First Optional Protocol to the International Covenant on Civil and Political Rights, the International Convention on the Elimination of All Forms of Racial Discrimination and Convention Against Torture, have permitted individuals to make petitions against their States that have accepted relevant international legal procedures. Also, under procedures established by the Commission on Human Rights, the Commission, its Sub-Commission on Prevention of Discrimination and Protection of Minorities and their Working Groups, hear numerous complaints annually submitted by individuals as well as by non-governmental organisations (NGO).

The Commission on Human Rights is authorized to discuss human ights situations anywhere in the World and examine information from individuals, NGOs and other sources.

The Economic and Social Council in 1970 adopted Resolution 1503 en titled 'Procedure for Dealing with Communications Relating to Violations of Human Rights and Fundamental Freedoms commonly known as '1503 Resolution' wherein individuals and non-governmental organisations (NGO) were allowed to make a communication to the Commission concerning "situations which appear to reveal a consistent pattern of gross and reliably attested violations of human rights. A communication i.e., a complaint is sent to the Office of the UN High Commissioner for Human Rights in Geneva

(5)The original mandate of the Commission on Human Rights to examine situations where massive violations of rights appear to be taking place has been complemented by a new function, i.e., compiling informations on the incidence of certain kinds of violations, or violation in a specific country. This task is performed by Special Rapporteurs/Representative or Working Groups. They gather facts, keep contacts with local groups and government authorities, conduct on-site visits when Governments permit, and make recommendations on how human rights institutions might be strengthened.

(6) The Commission on Human Rights may ask the Secretary-General to intervene or send an expert to examine a human rights situation in any State with a view to prevent flagrant violations. Such tasks may be performed

by the Secretary-General himself in the exercise of his good offices and may establish the U.N.'s legitimate concern and curb abuses. The Secretary-General or his special representative and the High Commissioner for Human Rights, confidentially raise human rights concerns with member States, including items such as the release of prisoners, commutation of death sentences and other issues.

(7) The post of High Commissioner for Human Rights was created in 1993 with the intention of strengthening the coordination and impact of UN Human Rights activities. He is charged with promoting and protecting the effective enjoyment by all of all human rights and maintains a permanent dialogue with the member States.

(8) The Center for Human Rights provided advisory services to Governments seeking to improve their human rights performance. Assistance may be given to draft a constitution, to improve electoral laws/establish or upgrade human rights institutions, prepare new criminal codes, or overhaul the judiciary.

The Commission, as determined by its terms of reference, was directed to prepare recommendations and reports on the following items;

a. on international bill of rights;
b. international declarations and conventions on civil liberties, the status of women, freedom of information and similar matters;
c. the protection of minorities;\
d. the prevention of discrimination on grounds of race, sex, language or religion.

In order to promote and protect the effective enjoyment by all of all civil, political, economic, social and cultural rights, the General Assembly on December 20, 1993 created the post of the United Nations High Commissioner for Human Rights. The High Commissioner is appointed by the Secretary-General. However, his name is approved by the General Assembly. He shall be a person of high moral standing and personal integrity possessing expertise in the human rights field and an understanding of diverse cultures. Due regard is paid to geographical rotation. The High Commissioner shall serve a four-year term at the rank of the Under-Secretary-General. The office of the High Commissioner shall be located at Geneva with a branch office in New York. Jose Ayala Lasso of Ecuador was nominated by the Secretary-General as the first High Commissioner when his name was confirmed by the General Assembly on February 14, 1994. He assumed

office on April 5, 1994.4

The High Commissioner was given the specific responsibilities by the. General Assembly which included the following:

1. To promote and protect the effective enjoyment by all of all civil, cultural, economic, political and social rights, including the right to development.
2. To provide advisory services, technical and financial assistance in the field of human rights to States that request them.
3. To co-ordinate United Nations education and public information programmes in the field of human rights.
4. To play an active role in removing the obstacles to the full realization of human rights and in preventing the continuation of human rights violations throughout the world
5. To engage in a dialogue with Governments in order to secure respect for human rights.
6. To enhance international co-operation for the promotion and protection of human rights.
7. To co-ordinate human rights promotion and protection activities throughout the United Nations system.
8. To rationalize, adapt, strengthen and streamline the United Nations machinery in the field of human rights in order to improve its efficiency and effectiveness.

The High Commissioner was required to report annually to the Commission on Human Rights and through the Economic and Social Council to the General Assembly. The OHCHR performs the following functions-

(i) The OHCHR promotes universal enjoyment of all human rights by giving practical effect to the will and resolve of the World community as expressed by the United Nations,

(ii) The Office plays the leading role on human rights issues and emphasises the importance of human rights at the international and national levels,

(iii) The Office promotes international cooperation for human rights;

(iv) The Office stimulates and coordinates action for human rights throughout the United Nations system,

(v) The Office promotes universal ratification and implementation of international standards;

(vi) The Office assists in the development of new norms;

(vii) The Office supports human rights organ and treaty monitoring bodies;

(viii) The Office responds to serious violations of human rights;

(ix) The Office undertakes preventive human rights action;

(x) The Office promotes the establishment of national human rights infrastructures;

(xi) The Office undertakes human rights field activities and operations;

(xii) The Office provides education, information, advisory services and technical assistance in the field of human rights.

There cannot be an international protection of human rights unless there is a strong and effective machinery for its implementation. Implementation is key to making the system of international protection of human rights effective. But the protection of human rights in international level is a difficult problem because of a variety of reasons Firstly, the International Court of Justice is open to States only. It implies that individuals have no access to the Court. Thus, it has always refused to entertain the petitions and requests which have often been addressed to it by individuals. Secondly, the jurisdiction of the International Court of Justice depends upon the consent of the States involved, and this has been done by few States to disputes involving human rights. Thirdly, even if the International Court in a few cases is able to render judgments against the State, which violates human rights, there is no international police to enforce the decisions of the Court. No doubt, the Security Council has been empowered to enforce the decisions of the Court against a party to a case which has failed to perform the obligations under a judgment of the Court, if the matter is brought before it by the aggrieved party. But it is regarded as a political body and its recommendations are some times motivated by political considerations. If the barrier of veto is not crossed, the Council becomes incompetent to take any decision against the State which has failed to comply the decision of the Court. Fourthly, although the International Law of Human Rights has fostered a growing political and legal support for the protection of human rights, many States still regard that enforcement of human rights is an interventionist act. Consequently, implementation of International Human Rights Law, depends largely on voluntary compliance by the States. Security Council, of course, can take collective action against a State if it decides that violations of human rights by a State is likely to endanger international peace and security.

The above limitations on the implementation of human rights at international level makes it clear that the most effective way to implement human rights vests within the legal systems of the different States. Domestic law of a State is required to provide an effective system of remedies for violations of international human rights obligations. International Human Rights Law has not become that strong so as to enforce and implement human rights violations committed by a State. However, a variety of international bodies have been monitoring and dealing with the cases of violations of human rights. A number of committees, working groups and special rapporteurs have been set up to monitor the violations of human rights. Monitoring mechanism may broadly be divided into two categories which are as follows:

There are at least six core human rights treaties which have set up committees to perform the task of monitoring State parties compliance with their obligations which are as follows:

a. Human Rights Committee (HRC) by the International Covenant on Civil and Political Rights (ICCPR).
b. Committee on Economic, Social and Cultural Rights (CESCR) by the International Covenant on Economic, Social and Cultural Rights (ICESCR).
c. Committee oh the Elimination of Discrimination Against Women (CEDAW) by the Convention on the Elimination of All Forms of 6 Discrimination Against Women.
d. Committee Against Torture (CAT) by the Convention Against Torture and other Cruel, Inhuman and Degrading Treatment or Punishment.
e. Committee on the Rights of the child (CRC) by the Convention on the Rights of the Child.
f. Committee on the Racial Discrimination (CRD) by the Convention on the Elimination of All Forms of Racial Discrimination.

Resolution 1503 adopted by the Economic and Social Council in 1970 allows individuals and non-governmental agencies such as. non-governmental organisations to make petitions to the Human Rights Commission and its Sub-Commission on the Protection of Human Rights on "situations which appear to reveal a consistent pattern of gross and reliably attested violations of human rights".

The above monitoring mechanisms show that some of them relate

to general situations in a country and others to individual complaints. Some are concerned with the whole field of human rights, others with specific types of violations. Their procedure also varies depending upon their mandate. It is to be noted that the various monitoring procedures adopted by the Commission on Human Rights have not been very successful in curbing the human rights violations which have been taking place in different parts of the World may be due to its inherent weaknesses. It would not be therefore inappropriate to state that while U.N. regime is a strong promotional one but it has a weak monitoring procedures.

References

1. *The Commission, after receipt of the communication, sends it to the government concerned and summarizes it in a monthly confidential list. The government is given twelve weeks time to reply. The Commission considers the situations in closed session. Resolution 1503 empowers the Commission to make a 'thorough study' or institute an investigation by an ad hoc committee.*
2. *Economic and Social Council, Official Records : First Year, First Session (1946), Annexure, p. 148.*
3. *See General Assembly Resolution 48/141, dated December 20, 1993. The mandate of the U.N. High Commissioner for Human Rights derived from Articles 1, 13 and 55 of the Charter of the United Nations and the Vienna Declaration and Programme of Actions of 1993.*
4. *Mis-Mary Robinson of Ireland was appointed the High Commissioner after the resignation of Jose Ayala Lasso on March 15, 1997.*
5. *Mrs. Robinson assumed the office on September 15, 1997. Richard B. Bilder, 'An Overview of International Human Rights Law', in Guide to International Human Rights Practice', edited by Hurst Hannum, Third edition (1999) P. 11.*
6. *Statute of the International Court of Justice under Article 34 lays down that, 'States may be parties in cases before the Court'.*
7. *See Article 94 Para 2 of the Charter of the United Nations.*

मङ्गलम् -वर्ष 13 (02) भाग-XXV,अगस्त 2022
ISSN-0976-8149 पृ.-82-89

प्राचीन राज्य मे कोष

*डॉ० रीतू पाण्डेय**

राज्य की वास्तविक उन्नति उसकी आर्थिक सम्पन्नता एवं विपन्नता कोष पर निर्भर होती है। राजा का यह कर्त्तव्य माना गया था कि वह न्यायपूर्ण विधि से अपने राज्य कोष में वृद्धि करता रहे[1]। इसी दृष्टिकोण को लेकर उस समय प्रजा राजा को कर देती थी क्योंकि अर्थ के होनें पर ही वह प्रजा का भली–भॉति पालन पोषण कर सकता था। यह कर एक प्रकार से राजा का वेतन ही था जो कि उसकी शासनात्मक सेवाओं के बदले प्रजा के द्वारा उसका प्रदान किया जाता था। महा भारत के शान्तिपर्व में इस प्रकार का वर्णन आता है कि अपराधियों से छीना गया धन, शुल्क और जुर्माना आदि सभी राजकोष के अन्दर जमा किये जायेंगे। नारद स्मृति मे भी इस प्रकार का उल्लेख मिलता है, 'निश्चित प्रथाओं के अनुसार और भूमिकर के रूप में राजा को जो धन प्राप्त होता है, वह एक प्रकार से उसका वेतन है और इसको राजकोष के अन्दर जमा किया जाना चाहिए'। प्राचीन भारत के राज्यशास्त्र के मुख्य विचारक आचार्य कौटिल्य ने इसका उल्लेख किया है। उनके अनुसार यह राजा का वेतन है जो कि एक पुरस्कार के रूप मे उसको मिलता है। चूँकि राजा का मुख्य कार्य प्रजा की रक्षा करना माना गया, अतः उसकी रक्षा करने हेतु जो अनिवार्य वस्तु 'धन' वांछनीय थी, उसको प्रजा की ओर से दिया जाता था।

इस प्रकार से यह स्पष्ट हो जाता है कि प्राचीन भारत में राज्यशास्त्र के विचारकों ने इस राज्य कर को एक राज्य का अनिवार्य अंग माना। उनके अनुसार चूँकि यह राजा का वेतन है अतः उसको यह अवश्यमेव प्राप्त होना चाहिए।

कोष एवं कर

कोष की वृद्धि का माध्यम कर है राज्य कर के विषय में निम्नलिखित सिद्धान्तों को महत्व दिया जाता है

कर का धार्मिक सिद्धान्त

इस सिद्धान्त के अनुसार राजा को स्वयं कर का निर्धारण करने वाला नहीं माना जा सकता। धर्म के अनुसार ही राज्य कर का निर्धारण और इस प्रकार से राजा एक निर्ष्दि फल स्वेच्छाचारी नही होना चाहिए।

**सहायक प्रोफ़ेसर प्राचीन इतिहास विभाग, जनता वैदिक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मेंहदावल, संत कबीर नगर (उ०प्र०)*

कर का वैतनिक सिद्धान्त

''महाभारत'' ग्रन्थ में इसका स्पष्ट उल्लेख मिलता है कि राजा को मिलने वाला यह राज कर उसकी सेवाओं का एक पुरस्कार है। राजा को यह पारिश्रमिक धार्मिक–सिद्धान्त के अनुसार निश्चित रूप में मिलता था।

कर का दैवी सिद्धान्त

शुक्रनीति में इस प्रकार का उल्लेख मिलता है कि राजा की निर्मिति ब्रम्हा द्वारा हुई, वह प्रजा का पालक है और उसकी सेवाओं के बदले मे ही उसको यह पारिश्रमिक प्रदान किया जाता है। डॉ जायसवाल ने इस तथ्य को दूसरे शब्दों मे स्पष्ट किया है, ''प्रजा की सेवा करने वाले उस राजा के हेतु यह वेतन स्वयं ब्रम्हा ने निश्चित कर दिया था। राजा किसी भी स्थिति में इस निर्धारित रकम से अधिक वेतन नही ले सकता, क्योकिं अधिक लेने का अधिकार उसको प्राप्त नहीं है।'' प्रजा ने एक प्रकार से यह बचन दिया था कि वह राजा का इस तरह से कर प्रदान करके निर्वाह करती रहेगी। डॉ जायसवाल ने कर निर्धारण के निम्नलिखित सिद्धान्त बतलायें।

1. राजा को चाहिए कि वह अत्यधिक लोभ मे न पड़े क्योंकि इस तरह से वह दूसरों के मूल को नष्ट कर सकता है।
2. राजा को अपनी प्रजा के ऊपर कभी भी आवश्यकता से अधिक कर नहीं लगाना चाहिए क्योकि इससे उसकी कार्यक्षमता नष्ट हो जाती है। एक ओर तो राज्य मे विपन्नता आती है और दूसरी ओर प्रजा के अन्दर विरोधात्मक भावनाओं का विकास होता है।
3. राजा को कर इस प्रकार के लगाने चाहिए कि उसको वसूल करते समय प्रजा को यह कर भार–स्वरूप न मालूम पड़े। जिस प्रकार वृक्षों को बिना कष्ट पहुँचायें उनसे मधु निकाल लिया जाता है ठीक उसी विधि से करों को वसूल किया जाना चाहिए।
4. राजा के द्वारा प्रजा के अभ्युदय के साथ–साथ करें को बढ़ाना चाहिए और इस प्रकार उसके राज्य कोष को उत्तरोत्त सम्पन्न बनाया जाना चाहिए।
5. करों के वसूल करने का ढंग भी सम्यक् होना चाहिए। स्थान, काल एवं रूप के औचित्य को ध्यान मे रखते हुये करों को उचित ढंग से वसूल किया जाना चाहिए। प्रजा को कर संग्रह का ढंग कष्ट दायक नहीं होना चाहिए।
6. शिल्प आदि की वस्तुओं पर कर लगाते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि उस प्रकार का माल कितने समय मे तैयार होता है और उनमे कितने परिश्रम की आवश्यता पड़ती है राजा या कर लगाने वाले अधिकारी को यह ध्यान रखना चाहिए की उस कर के लग जाने के पश्चात् शिल्पकार या वह

कारीगर विशेष कहीं इतना ना दब जाय कि उसका लाभ पूर्ण रूप से समाप्त हो जाय। राजा को उसके लाभ को ध्यान मे रखना चाहिए।

महाभारत मे कहा गया है कि जिस प्रकार किसी गाय से अत्यधिक मात्रा मे दूध दूह लेने से उसका बछड़ा दुर्बल हो जाता है, ठीक उसी प्रकार से यदि कोई राजा प्रजा रूपी गाय से अधिक दूध दूहता है तो सामान्य रूपेण राज्य की स्थिति दूर्बल हो जायेगी। राजा को सूर्य के समान प्रजा के पास से धन खींचना चाहिये क्योंकि सूर्य के द्वारा पृथ्वी के जल का कर्षण किसी प्रकार से किसी को मालूम नहीं पड़ता और इस लिए कष्ट कर भी नहीं होता है।

प्राचीन काल के राजा और उस समय की कर पद्धित दोनो को धर्म के अधीन बतलाया गया है। राजा को चाहिए कि जितना उचित है उससे अधिक कर न लगाये। जिस प्रकार मधु–संचय करते समय मधुमक्खी फूल को कोई हानि नहीं पहुँचाती, जिस प्रकार माली फूलों का चयन करते समय वृक्षों को कोई कष्ट नहीं देता ठीक उसी प्रकार से राजा को भी इस प्रकार कर वसूल करने चाहिए कि उसके द्वारा प्रजा को किसी प्रकार की कठिनाई न हो। राजा यदि शास्त्रोक्त नीति को परित्याग करके कर ग्रहण करता है उसके राज्य का शीघ्र ही पतन हो जाता है। महाभारत तथा अर्थशास्त्र आदि महत्वपूण्र ग्रन्थों मे इस कर को राजा का वेतन बतलाया गया है। शुक्र ने अपने बिचार व्यक्त करते हुये कहा है कि यद्यपि राजा स्वामी के रूप मे शासन करता है तथापि वह प्रजा का पालन करने वाला वास्तव में सेवक ही होता है। इसके बदले मे उपज का छठवा भाग और अनेक प्रकार के जर्माने आदि से प्राप्त होने वाली रकम राजा को वेतन के रूप में प्राप्त होती है। राजा को व्यापार–वाणिज्य के विषय में परम विवेक पूर्ण होना चाहिए। श्री जायसवाल के मतानुसार आयात पर कर लगाते समय राजा को विशेष कर निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए –

1. राजा को भलि–भॉति उस वस्तु के विषय मे पूँछ–ताछ करके यह जान लेना चाहिए कि वस्तु विशेष कितने मूल्य में निर्मित हुई उसका विक्रय क्या है और इसके अतिरिक्त उस वस्तु के निर्माण में अन्य कोई धनराशि तो व्यय नहीं हुई है।
2. राजा को चाहिए कि देशवासियों के लिए अहितकर एवं उनकी कार्यक्षमता घटाने वाली वस्तुओं पर भारी कर लगाये जिससे कि उनका आयात बन्द हो जाये और उनके उपयोग मे कमी आ जाये।
3. राज्य के हित मे जो वस्तुयें हो या जिससे राज्य को अधिक लाभ होता हो उन वस्तुाओं पर कर नहीं लगाना चाहिए या अत्यधिक कम लगाया जाना

चाहिए।

4. यदि को इस प्रकार की अच्छी वस्तु देश मे आती है जिसका कि निर्यात वर्जित है तो उसको निःशुल्क आने देना चाहिए।
5. इसके अतिरिक्त कुछ विशेष कारणों के होने पर राज्यकर को घटया और बढ़ाया भी जा सकता था।

इस प्रकार के करों को लगाते समय राजा को औचित्य का पूरा ध्यान रखना चाहिए। राजाज्ञा और व्यापारी दोनो उन करों से लाभान्वित होने चाहिए कर कभी कष्टदायक नहीं होने चाहिए और उसको लाभ के ऊपर भी लगाया जाना चाहिए।

कुछ विशेष वर्ग कर से मुक्त रखे जाते थे। उनमे असहाय व्यक्ति, अपाहिज, गूंगे, बहरे और स्त्री, बालक, क्षत्रि आदि आते है। कहीं–कहीं ब्राम्हणों को करों से मुक्त होने का उल्लेख मिलता है पर ये ब्राम्हण वे होते है जो कि किसी प्रकार से धनार्जन मे न लगकर जनार्जन मे लगे होते है।

धार्मिक या सामाजिक हित कि लिए यज्ञ आदि को सम्पन्न करने वाली वस्तुये ंकर से मुक्त थी उस प्रकार उस समय एक सुव्यवस्थित कर व्यवस्था थी।

कर का वेतन सम्बन्धी सिद्धान्त

इस सिद्धान्त के अनुसार राजा जो कि प्रजा का सेवक है, कर अपने पारिश्रमिक के रूप में प्राप्त करता है। राजा के द्वारा प्रजा की अनेकानेक सेवायें की जाती है। वह प्रजा की रक्षा करता है। और उसके लिए अनेक प्रकार के सुखों की व्यवस्था करता है। अतः उसको अपने यि (चूँकि वह इस सेवाओं को निर्वाचित रूप में कर सके) कुछ धन की आवश्यकता अवश्य पड़ती है। अतः वह प्रजा उस राजा को उसकी सेवाओं को शाश्वत बनाने के लिए उसके परिश्रम के बदले मे कर प्रदान करती है।

कौटिल्य ने अपने ग्रन्थ अर्थशास्त्र मे लिखा है कि उपज का छठवां भाग तथा अनुचित कार्य करने वालों से अपहृत या दण्ड मे प्राप्त होने वाला धन राजा को उसके वेतन के रूप में दिया जाता है। उसने राजा को उपदिष्ट करते हुये कहा है कि उपर्युक्त साधनों से प्राप्त धन तुम्हारी आय होगी। इसी प्रकार शुक्राचार्य ने भी कहा है कि राजा प्रजा का पालन करता है और उसकी वृद्धि का प्रयास करता है। अतः राजा के द्वारा राज कर के रूप में राजा को उसका वेतन दिया जाता है। यही विचारधारा नारद की भी है।

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि कर का वेतन सिद्धान्त राजा और प्रजा दोनो के कर्तव्यों पर प्रकाश डालता है इसके द्वारा दोनो के एक चेतावनी

दी जाती है कि वे अपने कर्तव्य–पथ पर दृढ बने रहे जिससे कि राज्य का कार्य सुचारू रूप से चलता रहे।

कर मुक्ति का सिद्धान्त

पुरानीतिकारें ने कुछ ऐसी स्थितियों का भी उल्लेख किया है जब राज्य कर मुक्ति भी प्रदान करता था आर्थशास्त्र तथा शुक्रनितिसार मे यह बतलाया गया है कि जब कोई कृषक वंजर भूमि या बेकार भूमि को कृषि–योग्य बनाता था तो उससे नाम मात्र का कर ग्रहण किया जाता था शनैःशनैः 3–4 वर्षों मे उससे सामान्य कर उगाहा जाता था।

जो ग्राम नियमित सैन्य बल मे सहयोग करते थे या जो राजकीय शस्त्रोपजीवी ग्राम थे, उन्हे भी कर–मुक्त रखा गया था।

इसी प्रकार ब्राम्हणों को प्रदत्त भूमिदान भी कर –मुक्त थे किन्तु यह उल्लेखनीय है कि वे ही ब्राम्हण कर मुक्त थे जो सदैव अध्ययनरत, तपरत या वेदरत रहते थे नारद ने स्पष्ट उल्लेख किया है कि वाणिज्य कार्य मे रत ब्राम्हण भी राज्य को कर प्रदान करेंगे।

कर या राजस्व के स्त्रोत

राजकीय कर का स्वरूप काल क्रमानुसार परिवर्तित होता रहा हो वैदिक रू॰ में कर का क्या स्वरूप था निश्चित रूपेण ज्ञात नहीं है। शासक को बलि प्रदान की जाती थी। ब्राम्हण ग्रन्थों मे शासक को ''विशामत्ता'' कहा गया है।

हाप्किन्स की धारणा है कि वैदिक शासक प्रजा को पीड़ित करके कर ग्रहण करता था इस लिए उसे 'प्रजा को खाने वाला' (विशामत्त) कहा गया है किन्तु, डॉ0 अल्तेकर की यह धारणा है कि वैदिक देवताओं से जो यह प्रार्थना की गयी है कि ''प्रजा शासक को बलि प्रदान करे'' से ज्ञात होता है कि वैदिक प्रजा स्वेच्छा से शासक को कर प्रदान करती थी, अधिक सत्य प्रतीत होती है। वास्तव में पूर्व वैदिक युग की अर्थ व्यवस्था मुख्यतः कृषि एवं पशुपालन पर ही आधारित थी उस समय प्रजा शासक को नियमित कर देने के लिए बाध्य नहीं थी उत्तर वैदिक युग में जब राज्य का स्वरूप एवं उसकी आवश्यकतायें बढ़ी तो प्रजा शासक को नियमित कर देने के लिए बाध्य हुई। शासक उन्हे सुरक्षा प्रदान करता था तथा इसके पुरस्कार स्वरूप उसे कर प्राप्त होता था।

रत्नि–मण्डल में भागधुक एवं संग्रहीत के उल्लेख इसी तथ्य के परिचायक हैकि कर उगाहने के लिए नियमित अधिकारियें की नियुक्ति करता था।

छठी शताब्दी ई0पू0 के पश्चात् राजस्व के स्त्रोतों की संख्या में वृद्धि हुई तथा उन्हे अनेक वर्गों मे विभाजित किया गया ।

भूमिकर

प्रारम्भ से ही कृषि भारतीय अर्थ व्यवस्था की नियामिका रही है। शासक को अपनी आय का अधिकांश भाग भूमि कर के रूप में प्राप्त होता था नीतिग्रन्थों में इसे ही 'षडभाग' कहा गया है। महाभारत मे राजा को प्रजा से षडभाग बलि के रूप में ग्रहण करने का आदेश है अन्यत्र यह बतलाया गया है कि जो शासक प्रजा से 'षडभाग' ग्रहण कर उसकी रक्षा नहीं करता वह पाप का भागी होता है। अर्थशास्त्र के अनुसार जो कृषि की सिंचाई की व्यवस्था स्वयं करते थे वे उपज के अनुसार चौथाई या पॉचवा भाग कर के रूप में शासन को प्रदान करते थे । मनु ने कृषिक भूमि की उर्वरता के आधार पर आठवा, बारहवां या सोलहवां भाग कर का उल्लेख किया है।

शुक्र ने तड़ागादिकों से सम्पन्न भूमि से कर ग्रहण का निर्देश इस प्रकार दिया है–तड़ाग, बावड़ी, कूप से सिंचित भू–भाग से तृतीयांश, वर्षा से सिंचित भू–भाग से चतुर्थांश, नदी द्वारा सिंचित भाग से अर्द्धांश तथा बंजर–पथरीली भूमि से आय का षष्ठांश शासक कर के रू‍ में ग्रहण कर सकता है।

मुद्रा के रूप में भी कर ग्रहण करने के अनेक अभिलेखिक साक्ष्य प्राप्त होते है अभिलेखों मे जो सहस्रआय वाले ग्रामों के उल्लेख है उनसे मुद्रा के रूप मे ही कर ग्रहण का संकेत प्राप्त होता है। गुप्त तथा राजपूत युग में भूमि का आय रजत–सिक्कों के रूप में ग्रहण करने के विवरण है एक प्रतिहार लेख में स्पष्ट संकेत है कि एक ग्राम की आय 500 मुदाएं एक मन्दिर को दान दी गयी थी । डॉ अल्तेकर की धारणा है कि मुद्रा के रूप में भूमि कर ग्रहण करने की परम्परा नवी शताब्दी ई0 से प्रचलित प्रतीत होती है।

भूमि पर स्वामित्व के सम्बन्ध में अनेक मत वैभिन्य प्राप्त होते हैं क्यो सम्पूर्ण भूमि पर शासक का अधिकार था? इस सम्बन्ध में कौटिल्य का मत है कि ''राजा भूमि एवं जलाशयों का स्वामी होता था मनु ने भी भूमि एवं भू–निधि ायों का स्वामी शासक को माना है।

समस्त भूमि पर यदि शासक का अधिकार था तो भूमि कर का प्रश्न ही कहां उत्पन्न होता है? व्यावहारिक रूप से यह ज्ञात होता है कि कृषि–योग्य भूमि पर कृषकों का ही अधिकार था। शासक उन्हे कृषि कार्य में सहयोग प्रदान करता था, इस लिए प्रजा उन्हे उस भूमि पर कर देती थी। इनके अतिरिक्त निधि, धातु, वन, जलाशय, एवं समुद्र पर किसी का व्यक्तिगत स्वामित्व न था, वरन् उस पर राजकीय अधिपत्य होता था। कौटिल्य ने इसी अभिप्राय मे राजकीय एवं व्यक्तिगत भूमि का उल्लेख किया है नारद ने भी गृह क्षेत्र मे शासक के हस्तक्षेप का निषेद किया है।

इन उद्धरणों से स्पष्ट होता है कि कृषि योग्य भूमि से इतर भूमि पर शासक का पूर्ण अधिकार था तथा राज्य को उसे पर्याप्त आय होती थी अधि ाकाश निधियों का उत्खनन राजकीय संरक्षण मे होता था किन्तु जो ठेकेदारों से खुदवाये जाते थे उनसे भी राजा को 50 प्रतिशत तक कर प्राप्त होता है। इनके अतिरिक्ति वन से प्राप्त जड़ी–बूटियों से शासक को पर्याप्त आय होती थी शुल्क–शुल्क का अभिप्राय उस कर से था जो क्रय विक्रय से शासक को प्राप्त होता था।

सामन्तों से कर

जब साम्राज्यवादी युग मे सामन्ती प्रथा प्रचलित हुई तो शासक को सामन्तों से वार्षिक कर के रूप में अधिक धन प्राप्त होता था। पराजित शासकों से धन कौटिलीय सिद्धान्त के अनुसार पराक्रमी शासक सदैव अपनी सामाज्य सीमा के विस्तार के लिए प्रयत्नशील रहता था जो शासक पराजित होता था उससे भी विजेता शासक को अपरिमित सम्पत्ति प्राप्त होती थी। इसी प्रकार विजित आक्रमकों से भी शासक को पर्याप्त सम्पत्ति उपलब्ध होती थी।

इस प्रकार प्राचीन राज्य अपने कोष की पूर्ति के लिए विभिन्न प्रकार के करों पर आधारित था। कोष समृद्धि पर ही राज्य–समृद्धि आधृत थी। अतः कोष संरक्षण एंव कोष वृद्धि के लिए शासक सतत् प्रयत्नशील रहता था।

कोष का महत्व

समस्त आचार्यों ने कोष का महत्व स्वीकार किया है। आचार्य सोमदेव का पूर्वोक्त कथन–कोष ही राजाओं का प्राण है–इसके महान् महत्व का द्योतक है। आचार्य सोमदेव आगे लिखते है कि जो राजा कौड़ी–कौड़ी करके अपने कोष की वृद्धि नहीं करता उसका भविष्य मे कल्याण नहीं होता।

आचार्य कौटिल्य कोष का महत्व बतलाते हुये लिखते हुए है कि सबका मूल कोष ही है अतः राजा को सर्व प्रथम कोष की सुरक्षा के लिए प्रयत्नशील रहना चाहिए महाभारत मे भी ऐसा वर्णन आता है कि राजा को कोष की सुरक्षा का पूर्ण ध्यान रखना चाहिए। क्योकि राजा लोग कोष के ही अधीन है। तथा राज्य की उन्नति भी कोष पर ही आधारित है। कामन्दक ने कहा है कि प्रत्येक व्यक्ति से यही सुना जाता है कि राजा कोष के आश्रित है। कोष के इस महत्व के कारण ही मनु ने लिखा है कि सरकार और कोष का निरीक्षण राजा स्वयं ही करे, क्योंकि इनका सम्बन्ध राजा से है याज्ञवल्क्य राजा को यह आदेश देते है कि उसे प्रतिदिन राज्य की आय व्यय का स्व्यं निरीक्षण करना चाहिए तथा इस विभाग के कर्मचारियों द्वारा संगृहीत स्वर्ण एवं धनराशि को कोष मे जमा करना चाहिए।

सन्दर्भ

1. *अर्थशास्त्र 2.2*
2. *महाभारत, शान्तिपर्व:, कामन्दक 13.33*
3. *कामन्दक 4.62–64*
4. *मनुः 7.112.*
5. *अर्थशास्त्र 1.9*
6. *अर्थशास्त्र 4.9.शुक्र 4.2.122*
7. *प्रो० अं०सं० अल्तेकर प्रचीन भारतीय शासन पद्धति छठाँ संस्करण, भारती भण्डार, लीडर रोड, प्रयागराज 1982*
8. *अर्थशास्त्र 2.24.*
9. *मनु 8.130.*
10. *अर्थशास्त्र 2.24*
11. *शुक्र 4.115–16*
12. *शुक्रनीति– 4.117 दिनकर त्रिपाठी–कामन्दक एवं शुक्र का तुलनात्मक राजदर्शन* मङ्गलम् *प्रकाशन, प्रयागराज 2012 पृ० 176,*
13. *मनु 7.131*
14. *महाभारत, शान्तिपर्व 119.16*
15. *कामन्दक 13.33.*
16. *मनु 7.65.*
17. *याज्ञ. 1.327.28*

मङ्गलम् -वर्ष 13 (02) भाग-XXV,अगस्त 2022
ISSN-0976-8149 पृ.-90-98

दलित साहित्य की सामाजिकता

*डॉ० अंशुमान कुशवाहा **

हिंदी में दलित–साहित्य का इतिहास साहित्य की जनतांत्रिक परंपरा तथा भाषा के सामाजिक आधार के विस्तार के साथ जुड़ा है। इसे सामंती व्यवस्था के अवसान, जो निश्चित ही पुरोहितवाद के लिए भी एक झटका साबित हुआ तथा समाज में जनतांत्रिक सोच के उदय, भले ही रूढ़िग्रस्त ही क्यों ना हो, के साथ ही प्रजातांत्रिक शासन–व्यवस्था के एक महत्वपूर्ण पड़ाव के रूप में भी देखा जा सकता है। यहां हम स्वीकार करते चले कि अन्यायपक वर्ण–व्यवस्था पर आघात–दर–आघात करने वाला कविता का भक्ति आंदोलन, ज्योतिबा फूले द्वारा आरंभ किया गया सामाजिक पुनर्निर्माण का ऐतिहासिक अभियान, वर्ण–व्यवस्था के जुल्म से निजात पाने की इच्छा तथा प्रतिरोधस्वरूप बड़ी संख्या में संभव हुआ धर्मांतरण– जैसी दूरगामी प्रभावों वाली घटनाएं सामंती व्यवस्था के काल में ही घटित हुईं। भारतीय समाज, उसमें भी ज्यादा अकल्पनीय दमन से त्रस्त दलित वर्ग को महामुक्ति के चिरस्मरणीय दूत के रूप में बाबा साहब भीमराव अंबेडकर का मिलना (मुक्ति–पथ पर जिनके कदमों के निशान बहुत गहरे हैं) एक सामंत का ही अवदान है। मानववादी उदारता से उपजी सहानुभूति की यह प्रवृत्ति ही साहित्य में दलित–दमन के त्रासद यथार्थ के प्रभावशाली चित्रांकन का आधार बनी। कहना होगा कि इस प्रवृत्ति की प्रौढ़ता आधुनिकतावादी सोच के प्रभाव से ही प्राप्त हो पायी। हिंदी साहित्य के इतिहास का यह रोचक संयोग है कि सामंतवादी वैचारिकता से संघर्ष करते हुए प्रेमचंद, निराला तथा कुछ दूसरे लोगों में यह प्रवृत्ति विकसित हुई। यही वह काल है, बल्कि थोड़ा पहले,जब प्रसिद्ध शायर इकबाल के सोच में भी इस प्रवृत्ति ने जगह बनायी। उनकी बहुत मशहूर पंक्ति हैः

''जो करेगा इम्तियाजे रंग–ओ–खूँ मिट जाएगा''

यानी जो रंग और खून के आधार पर पक्षपात करेगा मिट जाएगा। वं आवाहन करते हैंः

''आ गैरियत के पर्दे एक बार फिर उठा दें,
बिछड़ों को फिर मिला दें, नक्शे दुई मिटा दें।''

नज्म 'नानक' में वे दलित यथार्थ की इस तह तक जाते हैंः

आह! शूद्र के लिए हिंदुस्तान गमखाना है

* *सहायक अध्यापक हिंदी एवं आधुनिक भारतीय भाषा विभाग इलाहाबाद विश्वविद्यालय प्रयागराज (उ०प्र०)*

दर्दे इंसानी से इस बस्ती का दिल बेगाना है
बिरहमन सरशार है अब तक मय–ए–पिंदर में
शम्मे गौतम जल रही महफिले अगिआर में।''

उनका इशारा बौद्ध धर्म के प्रति दलितों में बढ़ते आकर्षण तथा ब्राह्मणों द्वारा उनके तिरस्कार की ओर है।

उन्होंने ब्राह्मणों को पुकार कर कहा कि तुम्हारे बुतकदे के बुत पुराने हो गए हैं, उन्हें बदल डालो तथा लोकतंत्र का जमाना आ रहा है, दलितों का दमन बंद करा।

इससे सहानुभूति को दलित लेखन का प्रमुख निकष मान लेने का तात्पर्य नहीं लेना चाहिए। सच्चे दलित लेखन में स्वानुभूति व सहानुभूति में किसकी भूमिका प्रमुख है– यह विवाद अभी समाप्त नहीं हुआ। वह जारी है। दोनों के पक्षधर अपनी–अपनी जगह डटे हुए हैं। कुछ मानते हैं कि सहानुभूति से दलित जीवन का वास्तविक यथार्थ उभारा जा सकता है, तो दूसरे पक्ष का बल है कि स्वानुभूति के बिना ऐसा संभव नहीं हैः ''दलित समाज और सवर्ण समाज के अनुभव अलग ही नहीं अपितु विपरीत होते हैं। दोनों के अनुभव और जीवन के स्तर का अंतर उनके जीवनबोध और सौंदर्यबोध में भी अंतर ला देता है। यही वह अंतर है जो दलित–साहित्य के संदर्भ में 'स्वानुभूति' और 'सहानुभूति' के प्रश्न को अनिवार्य बनाता है। यद्यपि प्रेमचंद्र और निराला सरीखे साहित्यकारों के संदर्भ में दावा किया जाता है कि साहित्य–सर्जन के लिए जीवनानुभव गैर जरूरी है।'' (राजेश कुमार, दलित साहित्य –2006)

राजेश कुमार ने इसी लेख में डॉ0 विश्वनाथ त्रिपाठी की कुछ पंक्तियां उद्धृत की हैं, जिनमें जीवन बोध को प्रमुखता दी गई हैः ''बोध हो भी, तो जरूरी नहीं कि निजी अनुभव से बना हो। यह बोध या चेतना ज्यादा जरूरी चीज है। निराला ने 'विधवा' पर कविता लिखी। वे खुद तो विधवा नहीं थे। प्रेमचंद ने होरी जैसा किसान गढ़ा। यह सब बोध से पैदा हुआ।

वीरेंद्र यादव ने तो यह घोषणा तक कर डाली कि जिस साहित्य में प्रेमचंद एवं निराला सरीखे दलितों–पीड़ितों के प्रवक्ता एवं पक्षधर रहे हों, वहां दलित–साहित्य की पक्षधरता के नाम पर किसी साहित्येत्तर प्रेरणा की आवश्यकता नहीं है। (उत्तर प्रदेश, दलित विशेषांक)

मुद्राराक्षस सामाजिक न्याय के लिए दोनों तरह की अनुभूतियों की भूमिका को खारिज करते हैं और शिवकुमार मिश्र निराला के 'चतुरी चमार' को सहानुभूति व स्वानुभूति दोनों प्रेरणाओं का उदाहरण मान लेने का आग्रह करते हैं। ऐसा आग्रह करते हुए वे यह अनुमान नहीं लगा पाते कि इससे बहुत सारे लोग

विचलित हो सकते हैं। दरअसल, भक्तिकाल के लंबे अंतराल के बाद बीसवीं सदी में दलित–यातना के प्रति प्रकट रूप से पहला ध्यान औपनिवेशिक मुक्ति के संघर्ष की तीव्रता के दौर में गया। यानी कि दलित मुक्ति की चिंता पहले नंबर पर। यह ध्यान भी प्रमुख रूप से उन लेखकों का गया, जो तत्कालीन सामाजिक हालात से अपनी संवेदनशीलता या आगे बढ़ी हुई चेतना के कारण गहरे तक असंतुष्ट थे, जिनके पास आधुनिक सोच से प्रभावित निश्चित सामाजिक दृष्टिकोण था। अतः ऐसे लेखकों की कविताओं या कहानियों में चित्रित यथार्थ न तो स्वानुभूति से प्रेरित था और ना सहानुभूति से, इसमें मुख्य भूमिका सामाजिक दृष्टिकोण की है। उदार मानवतावादी चेतना का भी कृछ दखल हो सकता है। दलित जीवन अर्थात अपने अनुभवों को ही रचना में डालते हुए दलित रचनाकार के लिए इस दृष्टिकोण का पर्याप्त महत्तव है। इसके अभाव में रक्त धधका देने वाले दमन व यातना का बहुत सच्चा अनुभव भी बड़ा रचनात्मक अनुभव नहीं सकता। वह सामाजिक चेतना, जो संवेदनशील व्यक्ति को अन्याय के विरुद्ध सक्रिय करती है, यदि दलित रचनाकार के पास नहीं है तो वह अन्याय व दमन का प्रथम अनुभव रखने के बावजूद उसी तरह सक्रिय नहीं हो पाएगा न वह उसी दृढ़ता से स्टैंड ले पाएगा जैसा 'प्रेमचंद' ने 'सद्गति' 'ठाकुर का कुआं' 'दूध का दाम' या 'गोदान' में, 'जगदीश चंद्र' ने 'धरती धन न अपना' या 'नरक कुंड में वास में', 'गोपाल उपाध्याय' ने 'एक टुकड़ा इतिहास' में, 'मुद्राराक्षस' ने 'दंड विधान' में, 'मदन दीक्षित' ने मोरी की ईंट' में, या 'शिवमूर्ति' ने अपनी लगभग सभी कृतियों में लिया। हम 'ओमप्रकाश वाल्मीकि' की 'शव यात्रा', 'सलाम'; 'सूरजपाल चौहान' की 'बदबू'; 'रमणिका गुप्ता' की 'दाग दिया सच'; 'महेश कुमार केसरी' की 'कैद' कहानियों का उदाहरण ले सकते हैं। ये कहानियां कौन–सा स्टैंड लेती नजर आती है?

यह तो हो सकता है कि 'अखिलेश' की कहानी 'ग्रहण की बदबू' की अपेक्षा 'सूरजपाल चौहान' की कहानी की 'बदबू' ज्यादा तेज और सघन हो और दूर तक पीछा करती हो तथा अखिलेश जिस बदबू में अपनी प्रतिभा के विकास के साक्ष्य देख रहें हों या अपनी पक्षधरता की व्याकुलता, वही सूरजपाल चौहान की यह गंध एक समुदाय की यातना के रूप में सताती हो; परंतु प्रश्न यही है कि वह इस गंध या इस गंध से पैदा हुई व्यथा से क्या काम लेना चाहते हैं? दलित यथार्थ के चित्रांकन से साहित्य के अनुभव लोक को नए क्षेत्र की संपन्नता मिलती है। निश्चय ही यह स्थिति किसी भी भाषा के लिए उल्लेखनीय उपलब्धि हो सकती है। फिर दिल और दिमाग छील देने वाली क्रूर यातना के भयानक दृश्य तथा तिरस्कार व अपमानना की वेदनापरक घटनाओं से अश्वेत लेखन विश्व साहित्य का शिलालेख बन पाया तो इसलिए कि उसमें मनूष्यों को

जिन्दा जलाए जाने स`उपजी चीत्कार और हाहाकार की आघातकारी ध्वनियां अब भी भी उसी आवेग से सुनी जा सकती हैं। जलते मांस की उबकाई भरी गंध अब भी आपको बेचैन करती है, परन्तु इन्सानों के साथ जानवरों से बदतर सुलूक का वृतांत एवं अपने को सभ्य व सुसंस्कृत होने का दर्प पाले लोगों की पैशाची हरकतों के अचूक साक्ष्य क्या साहित्य की अभिवृद्धि तक सीमित रह जाने चाहिए? यदि सीधे तौर पर कहें तो यहां पर है 'यथार्थ–सत्य' और 'अनुभव–सत्य' पर बल दिया जाता है, जो 'रूप' में ही सूक्ष्म में होकर 'अंतर्वस्तु' को व्यक्त करता है। इस प्रकार, यहां पर विस्तृत समाज–दृष्टि, विराट सामाजिक चिंतन तथा विशदता वाले सामाजिक संबंधों पर साहित्यिक प्रक्रिया के माध्यम से सामाजिक अंतराल को भरने की कलात्मक कोशिश की जाती है। इस साहित्य में समय–अंतराल और समय–सापेक्षता को काफी महत्व दिया जाता है, अतः ऐतिहासिक तुल्यता, क्रमागतता और मिथक–बोध की नवीनता को मूल्यांकन के ऐसे नये आधार उपलब्ध होते हैं, जो समाज–स्मृति, इतिहास–स्मृति और यथार्थ बोध से मिलकर विमर्श, विश्लेषण और निष्कर्ष को ग्राह्यता की कसौटी पर कस कर देखते हैं। यहाँ पर सबाअल्टर्न इतिहास के इस पक्ष पर भी ध्यान रहता है कि समाज के कमजोर, उपेक्षित और प्रताणित समुदाय को जिस प्रकार इतिहास से बेदखल करने की साजिशें रची गई है, उसी प्रकार साहित्य से बेदखल करना और किए जाते रहना, उनके साथ अन्याय नहीं है क्या? इस प्रकार दलित–साहित्य अपना ध्यान उन सामाजिक समूहों को केंद्र में रखकर सामाजिक अध्ययन करने का मार्ग प्रश्सस्त करता है, जिनको उपेक्षित समझ कर परिधि से बाहर रखा गया। उपेक्षित समुदायों को अवहेलना के सापेक्ष अपनी उपस्थिति दर्ज कराने की ओर प्रेरित करने वाला है दलित–साहित्य। सामाजिक कुरूपता, मानवीय व्यवहार की विद्रूपता और अनुभवों की तिक्तता, अनुभूतियों की कटुता तथा स्मृति में बसी ऐतिहासिक असुन्दरता, यथार्थ के वीभत्स इत्यादि को व्यंजित करने वाली साहित्यक भंगिमाएं दलित–साहित्य का सौंदर्य हैं।

घृणा और आक्रामकता दलित–साहित्य में कहीं भी स्थान नहीं पा सकते। यह तो स्वयं मे घृणा के विरुद्ध सद्भाव को खड़ा करता है। बौद्ध–दर्शन के अनुसार 'घृणा को घृणा से नहीं धोया जा सकता' – यह याद रखना है। परंपरावादी आलोचक तर्क–विवेक को खींचतान कर घृणा में परिभाषित करने लगते हैं। ऐसा करने से उनके मन में बैठी घृणा अपना ही रूप बदलकर सामने आती है। दलित–साहित्य को मूल रूप से घृणा, ईर्ष्या और द्वेष के विरुद्ध लिखा गया साहित्य है। यहां पर प्रेम भाई–चारे और समानता की बात है। यहां पर सामाजिक समूहों के मध्य आक्रामकता की नहीं द्वंद्व की स्थिति

होती है। गली–सड़ी और अतार्किक सामाजिक मान्यताओं, रूढ़ियों और अनुपयोगी परंपराओं के प्रति आक्रोश इसलिए व्याप्त होता है कि उनके चलते रहने से समाज समता के मूल्यों से दूर ही बना रहेगा। अतः, इस साहित्य में न घृणा है, न नफरत है, न उल्लास है, न आनंद है, इसमें केवल आशा है, सपना है, भविष्य के प्रति सकारात्मकता है, वह भी मानवीय मूल्यों के आधार पर। इस साहित्य में प्रतिक्रिया, बदले की भावना, नीचा दिखाने की इच्छा जैसी बातों को कोई स्थान नहीं है। यह साहित्य क्रूरता और हिंसा के सापेक्ष खड़ा हुआ है, अतः सामाजिक परिवर्तन के तत्व इस में विद्यमान है। यह पराजित, हताश और कुंठित समाज के हीनता–बोध की भड़ास निकालने वाला साहित्य नहीं है। जैसा, प्रकारांतर से, रामचंद्र शुक्ल तथा उनके अनुयाई भक्ति साहित्य के विषय में कहते हैं कि पराजित कौम का निराश होकर भगवान की शरण में जाना, निराशा को व्यक्त न करके ईश्वर भक्ति में अपने को डुबोकर क्लीव और कायर होने की कुंठा से पार पा जाना है, किंतु दलित–साहित्य में रैदास और कबीर की तरह 'आंखिन देखी' कहना है। यहाँ पर इतना और स्पष्ट कर देना उचित होगा कि जैसा बलदेव वंशी कहते हैं– ''कबीर, रैदास, नानक, मलूक– यह सारी धारा लिखित को प्रमाण नहीं मानती, क्योंकि लिखित से इनको वंचित कर दिया गया था। ये वेद–पुराण को नहीं मानते। वे प्रमाण को क्यों मानेंगे....।'' यहाँ पर 'प्रमाण' मानने का अर्थ तदनुसार जीवन जीने से है, उनके अनुसार सामाजिक स्तरीकरण के वर्णवादी व्यवस्था को स्वीकार करने से है। आज का दलित–पिछड़ा वर्ग भी उन संतों की तरह अपना प्रमाण 'आंखिन देखी' अर्थात प्रत्यक्ष अनुभव को मानता है। यथार्थ का सामाजिक आधार है– अपने कटु अनुभवों में परिवर्तन की आशा रखना, उन परिस्थितियों को बदलने की आशा रखना तथा आशा को फलीभूत करने के उपायों और प्रेरणाओं को तलाशना, प्रयास के आधारों की खोज करना; जिनके कारण ऐसा यथार्थ जन्म ले गया है। सीधी बात यह है कि जब यथार्थ अमानवीय स्थितियों को जन्म देने लगता है, तब उस यथार्थ सापेक्ष प्रयत्न आरम्भ हो जाते हैं। स्थितियों में परिवर्तन करने के लिए प्रयास करने की योजना बनने लगती है। इसके लिए साहित्य प्रेरक की भूमिका निभाता है। इस प्रकार, साहित्य में प्रतिपित स्थितियों का चित्रण आक्रोश को बढ़ावा देने के लिए नहीं, अपितु सामाजिक विघटन को, जो समाज में पहले से विद्यमान होता है, समाप्त करने के लिए किया जाता है। विपर्यय में सापेक्षता–आधारित प्रभावों पर विमर्शात्मक कला–दृष्टि डालकर साहित्य सजा जाता है।

सामाजिक संरचना सदा से जड़ नहीं रहती आयी है। इसमें सदा से परिवर्तन होता रहा है। परिवर्तित घटनाएं इस प्रकार सामने आती है कि पुरानी

विचारधारा अपर्याप्त सिद्ध होने लगती है। ऐसे में, साहित्यकार के विवेक से विकास की शक्ति में वृद्धि करने के लिए विचारधारात्मा संघर्ष की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। वैसे, माना तो यह जाता है कि विचारधारा कला–रचना का वाह्य तत्त्व है, लेकिन रचनाकार के तर्क–विवेक के आधार पर विचारधारा रचना के केंद्र में पहुंच जाती है, जिससे लोगों को अपनी भौतिक स्थितियों को समझने में, सामाजिक चेतना के तर्कपूर्ण उद्‌भव और विकास में, आशा और सपनों को आकार में मार्गदर्शन और प्रेरणा मिलती है। विचारधारा की प्रक्रिया में सामाजिक स्वरूपों की सैद्धांतिक और व्यावहारिक समझ विद्यमान होती है। वास्तव में, दार्शनिक चिंतन दो अवधारणाओं को लेकर विकसित हुआ है। प्रथम–साक्ष्यमूलक, द्वितीय कल्पनामूलक। कल्पनामूलक चिंतन वर्चस्वशाली लोगों के हित साधने का औजार बन कर विद्यमान रहा है। जन–सामान्य के लिए साक्ष्यमूलक चिंतन अपेक्षाकृत अधिक मंगलकारी रहा है। इसमें यथार्थ–बोध और साक्ष्य–प्रत्यक्ष के आधार पर जीवन, जगत और सपनों की व्याख्या की जाती है। दलित–साहित्य, चूंकि सामाजिक समता के सपने को साकार करने के लिए प्रत्यक्ष–आधार को आधार बनाकर चलता है, अतः यह विचारधारात्मक यथार्थ को साहित्य की अधि ारचना का अंग स्वीकार करके चलता है। ऐसा मानने में सामाजिक हित सर्वोपरि रहता है, क्योंकि इसके अंतर्गत मनुष्य का मूल्यांकन उसको सामाजिक संबंधों और यथार्थ परिस्थितियों के बीच रखकर किया जाता है। साहित्य का मूल्यांकन इसी प्रकार किए जाने पर दलित साहित्यकार जोर देते हैं। सामाजिक परिवर्तन में साहित्यकार की भूमिका के महत्व को स्वीकार करते हुए दलित साहित्यकार इसके माध्यम से जन–मानस को झकझोर कर प्रतिगामी शक्तियों के विरुद्ध परिवर्तनकामी शक्तियों को बल प्रदान करते हैं। इसके लिए दलित–साहित्यकारों को मानवीय मूल्यों, नैतिकता, वैधानिकता, राजनीति संस्कृति, इतिहास और मिथकायनों को अंतर्भूत करके सहित रचना करनी होती है। डॉ0 नामवर सिंह की यह बात कि विचार जिस प्रकार प्राप्त होता है, उसी प्रकार अभिव्यक्ति भी होता है, यहां पर सटीक लगती है। दुःखदाई यथार्थ और कटु सामाजिक अनुभव तथा डॉ0 आंबेडकर के सामाजिक दर्शन से प्राप्त विचार, जिस प्रकार ग्रहण किये जाते हैं, उसी प्रकार व्यक्त किये जाते हैं। यह निर्विवाद है कि दलित साहित्यकार एक जटिल सामाजिक, वैचारिक और मानवीय संघर्ष से गुजरकर आता है, अतः उस संघर्ष की ताजगी, सजीवता, सक्रियता और बिंबात्मक्ता के साथ अभिव्यक्त करता है। असल बात यह है कि विचारधारा को अस्वीकार करने वाले लोग एक प्रकार से प्रतिगामी और प्रतिक्रियावादी की तरह मुंह करके खड़े होते हैं, किन्तु इस साहित्य में देश, काल, ज्ञान व तर्क–विवेक के आधार पर सामाजिक, सांस्कृतिक और दार्शनिक विमर्श को यथार्थ के सत्य और आशा के स्वप्न के रूप में

कलात्मक अभिव्यक्ति मिलती है। यह साहित्य केवल दलित–समुदाय या पिछड़े समूहों के द्वारा विकसित मूल्यों और सपनों को ही कलात्मक अभिव्यक्ति नहीं देता, अपितु उच्चवर्गीय सोच वाले लोगों को मानवीयता के मूल्यों की ओर बढ़ने की प्रेरणा तर्क–विवेक के आधार पर देता है। यदि हम सरल शब्दों में कहें, तो कहना पड़ेगा कि दलित साहित्य अंबेडकरवादी सामाजिक विचारधारा की पृष्ठभूमि में अनुभूत सत्य की उपज है।

घोषित संस्कृतियां सदा से अंतर्विरोधे से ग्रस्त रही हैं। हमेशा से यह सांस्कृतिक परंपरावाद के बरअक्स एक विरोधी परंपरा सक्रिय रही है। भारत का समाज भी इन दो भागों में विभाजित रहा है, जिसमें से एक इस विभाजन को वैध ठहराने के धार्मिक आधार तैयार करता रहा है और दूसरा भाग इस विभाजन को मानवीय आधार पर नकारता रहा है। अतः अंबेडकरवादी समाजशास्त्र के आधार पर अब जो साहित्य लिखा जा रहा है, वह सामाजिक संरचनाओं का अध्ययन वैज्ञानिक तरीके से करता है; जो सामाजिक संस्थाओं में क्रियाशील सांबंधिक, अंतर्विरोध को अभिव्यक्त करता है। इसमें एक सामाजिक साहित्यिक सत्य का निर्वाह किया जाता है, जिसमें विमर्श–विश्लेषण की पद्धति द्वारा प्रदत्त मानवीय मूल्यों के आधार पर सामाजिक मूल्य, समतावादी विचार के आधार पर साहित्यिक मूल्यों, भौतिकवादी आधार पर सांस्कृतिक मूल्यों की खोज करने का काम किया जाता है। यहां मूल्य जड़ स्थापनाएं न रहकर गतिशील और सक्रिय रहते हैं।

हर क्षण शब्दों के ढल जाने को व्याकुल सदियों की संचित व्यथा का शेष क्या साहित्य की अभिवृद्धि और उसके अनुभव लोक के विस्तार तक ही सीमित रह जाना चाहिए? कुछ लोगों के लिए डाक्टरेट की डिग्री, कुछ लोगों के लिए पुरस्कार, कुछ लोगों के लिए शोहरत, कुछ लोगों के लिए सामाजिक दृष्टिकोण की व्यापकता का कवच, कुछ के लिए अपने ाागे हुए को बयान कर देने के गौरव या संतोष की अनुभूति, कुछ के लिए जातिवादी आग्रहों के बावजूद उदार मानवतावादी दृष्टिकोण का दंभ, तो कुछ के लिए वैचारिक प्रतिबद्धता के दायित्वों की पूर्ति का साधन बनने मात्र तक सीमित रह जाना चाहिए या उसे हालात को बदलने की चेतना के प्रसार की कर्मभूमि बनने की चिंता से संलग्न होना चाहिए?

अवश्य ही साहित्य सामाजिक बदलाव को संभव नहीं बनाता, लेकिन वह बदलाव की चेतना के अंकुर रोपने की क्षमता अवश्य रखता है। बदलाव में कविता, कहानी या उपन्यास की अपेक्षा वैचारिक लेखन की भूमिका अधिक कारगर होती है। सामाजिक आंदोलन इस भूमिका को निर्णायक मोड़ तक ले जाने की सामर्थ्य रखते हैं। यह उत्साहपूर्ण स्थिति है कि दलित मुक्ति के पक्ष में

हिंदी में वैचारिक लेखन भी खूब हुआ है। अब भी हो रहा है। डॉ0 भीमराव अंबेडकर यदि दलित मुक्ति के अग्रदूत बन पाए, तो इस कारण ही साहित्यिक धारदार वैचारिक लेखन तथा कानूनी लड़ाई तक ही सीमित नहीं रहे, बल्कि उन्होंने विराट सामाजिक आंदोलन भी खड़ा किया। आजादी से पहले हिंदी और उर्दू में दलित यथार्थ की जो रचनाएं आयीं, उनके पीछे यह आंदोलन के प्रेरक शक्ति के रूप में उपस्थित रहा है। इतना अवश्य है कि दलित रचनाकारों की आत्मकथाएं, कहानियां, कविताएं भी वैचारिक लेखन की भूमिका अदा करती हैं। आंदोलन संवेदना की अपेक्षा चेतना के विकास को अधिक संभव बनाते हैं। दलित–साहित्य के विकास में चेतना की जो भूमिका रही है, वैसी संवेदना कि नहीं हो पाई। आगे भी चेतना ही प्रमुख भूमिका निभाएगी। भी कह सकते हैं कि संवेदना के बिना तो लेखन हो ही नहीं सकता। जो संवेदनशील नहीं है, वह किसी की तकलीफ को क्या समझेगा? जरूरी तौर पर संवेदना किसी भी रचना का महत्वपूर्ण तत्व होती है। संवेदना दर्द को महसूस करने की सामर्थ तो देती है, परंतु दर्द के निवारण की तमीज चेतना से ही मिलती है। संवेदना भावुकता के अतिरेक में वर्चस्ववाद को चुनौती दे सकती है, लेकिन इस वर्चस्व के ध्वंस की कल्पना बिना चेतना के संभव नहीं है। यहां दलित व गैर दलित के बीच अंतर हो सकता है कि ग्रहण का अंधकार जिस सघनता व व्यापकता में एक दलित के मन– मस्तिष्क मे आकार लेता है, गैर–दलित के नहीं। फिर भी रचना का शेष रह जाना इस अंधकार के स्वरूप या उसकी अनुभूति के आकार से ही नहीं, बल्कि रचना–कौशल से ही, संभव होता है। 'गोदान' और 'मैला आंचल' कालजयी बन पाए, तो इन दोनों विशिष्टताओं के बेहतर एकीकरण के कारण।

सामाजिक सरोकार से बंधी रचना, काल के प्रतिमानों पर खरी उतरे यह जरूरी नहीं है। उसका सौन्दर्य उसकी प्रतिबद्धता है। उसकी ऐतिहासिकता समाज में व्याप्त बदसूरती के प्रति व्यक्त विक्षोभ है। तनिक सोचिए, समाज में बदसूरती फैली हुयी है और साहित्य सौंदर्य के नए प्रतिमान गढ़ रहा है। हम यहां शरण कुमार लिंबाले का संदर्भ ले सकते हैं– ''दलित लेखक सामाजिक जिम्मेदारी से लिखता है। उसके लेखन में कार्यकर्ता का आवेश और निष्ठा अभिव्यक्त होती है। समाज बदले, समाज अपने प्रश्न समझे, यह तिलमिलाहट उसके लेखन में तीव्रता से अभिव्यक्त होती है। दलित लेखक आंदोलन करते हुए लिखने वाला कार्यकर्ता–कलाकार है। वह अपने साहित्य को आंदोलन मानता है। उसकी प्रतिबद्धता दलित और शोषित वर्ग से है। (दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र पृष्ठ 41)

सन्दर्भ

1. राजेश कुमार, दलित साहित्य, 2006.
2. विश्वनाथ त्रिपाठी, उत्तर प्रदेश दलित विशेषांक,
3. दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, पृष्ठ 41. राधाकृष्ण प्रकाशान, संस्करण–2002
4. अली अनवर मानवता की जंग,
5. प्रेमचंद की कहानियां–
   सद्गति, ठाकुर का कुआं, दूध का दाम, गोदान, प्रेमचंद का उपन्यास।
   हंस प्रकाशन इलाहाबाद
6. जगदीश चंद्र, धरती ना धन अपना।
7. वही, नरक कुंड में वास।
8. गोपाल उपाध्याय, एक टुकड़ा इतिहास।
9. मुद्राराक्षस, दंड विधान। राजकमल प्रकाशन–प्रकाशन वर्ष–1999
10. मदन दीक्षित, मोरी की ईंट। प्रकाशन, न्यू पब्लिशर्स, 1996 प्रकाशन वर्ष।
11. ओमप्रकाश वाल्मीकि, शव यात्रा, सलाम। सलाम प्रकाशन वर्ष–2016, राधाकृष्ण प्रकाशन
12. सूरजपाल चौहान, बदबू।
13. भगवानदास मोरवाल का उपन्यास, काला पहाड़। राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2004
14. अब्दुल बिस्मिल्लाह, झीनी झीनी बीनी चदरिया।
    राजकमल प्रकाशन,प्रकाशित वर्ष–2003 (प्रथम संस्करण)

मङ्गलम् -वर्ष 13 (02) भाग-XXV,अगस्त 2022
ISSN-0976-8149 पृ.-99-105

पर्यावरण : संरक्षण और कर्त्तव्य

*डॉ० राजीव कुमार **

सारांश

बदलती जीवन–शैली और बढ़ते प्रदूषण के कारण अब जीवन का अस्तित्व ही खतरे में है। जलवायु परिवर्तन से बड़े बदलाव हो रहे हैं। सरकारें पर्यावरण संरक्षण के प्रयास कर रहीं है, लेकिन हम आप भी संकल्प लें तो पर्यावरण को बचाए रखने के लक्ष्य तक शीघ्र पहुॅचा जा सकता है। हमें प्रकृति से अपने सम्बन्धों को सुदृढ़ करने वाले दृष्टिकोण और परंपरागत प्रथाओं को पुनर्जीवित करने की आवश्यकता है। लोगों को इस पृथ्वी के प्रति सम्मान भाव रखने, पेड़ और नदियों को पवित्र मानकर उनकी रक्षा करने, लोगों और प्रकृति में भगवान को देखने के लिए प्रोत्साहित करना होगा। जिस पृथ्वी पर मूल्यवान वनस्पतियां व वृक्ष हों जो हमें औषधियां व प्राणवायु प्रदान करते हैं उनकी सुरक्षा व संरक्षण करना हमारा मौलिक कर्तव्य होना चाहिए। देश भर में पेड़–पौधों, पहाड़, नदियों और फसलों की पूजा की विविध धार्मिक मान्यताएं रहीं है। गोवर्धन, छठ, तुलसी, वटवृक्ष पूजा, मकर संक्रान्ति या पोंगल जैसे त्योहारों की जड़े प्रकृति से जुड़ी हैं अैर ये त्योहार प्रकृति संरंक्षण और सम्मान काषाश्वत संदेश देते हैं। इन सब परंपराओं के पीछे मूलतः प्रकृति संरक्षण का ही संदश है।

प्रस्तावना

आधुनिक समय में पर्यावरण संरक्षण की बात करना एक फैशन सा हो गया है लेकिन पर्यावरण संरक्षण के प्रति जवाबदेही की सघनता कमतर प्रतीत होती है। आज पर्यावरण बचाने को लेकर बड़े–बड़े कार्यक्रम हो रहे हैं जन–जागरूकता अभियान चल रहे हैं तथा भाषण और लेख लिखे जा रहे हैं इन क्रियाकलापों द्वारा अधिकांश लोग यह समझ लेते हैं कि उनका दायित्व पूरा हो गया। पर्यावरण संरक्षण पर इतनी हाय तौबा होने के बाद भी पर्यावरण की समस्या और अधिक सघन होती जा रही है। क्या इसका यह अर्थ नहीं कि पर्यावरण के प्रति हम कम सहिश्णु होते जा रहे हैं या यह कहें कि हम कम व्यावहारिक होते जा रहे हैं ? कुमार (2014)[1] के अनुसार भारत में पर्यावरण के रख–रखाव की एक लम्बी सामाजिक परम्परा है, जिसका प्रमाण असंख्य पक्षियों और बंदरों के बिना भय के इधर–उधर घूमना तथा लगभग सम्पूर्ण देश में पूजनीय पीपल, बरगद और नीम जैसे वृक्षों की मौजूदगी से मिलता है।

पर्यावरण संरक्षण

हम पर्यावरण संरक्षण की बात करते हैं लेकिन जिम्मेदारी कहीं नजर नहीं आती है और पर्यावरणीय असंतुलन की समस्या लगातार बढ़ती जा रही

**असिस्टेंट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग,एस.एस.(पी.जी.)कॉलेज,शाहजहॉपुर (उ०प्र०)*

है। हम वृक्षारोपण का अभियान चलाते हैं लेकिन जंगल लगातार कम होते जा रहे हैं। हम गौ पूजा की बात करते हैं और गौ संरक्षण अभियान चलाते हैं लेकिन कृषिमित्र कहे जाने वाले जानवर गाय, बैल की ओर से अब किसानों ने भी मुख मोड़ लिया है।आज गाय और बैल अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष कर रहे हैं। हम नदियों को बचाने की बात करते हैं लेकिन प्राकृतिक जलधाराएं सूख रही हैं। जल संरक्षण अभियान चल रहा है लेकिन भूगर्भ जल स्तर लगातार नीचे जा रहा है कुछ स्थानों पर तो स्थिति संकटपूर्ण हो गयी है।बाला(2018)[2] मनुष्य के बेहतर जीवन के लिए स्वस्थ पर्यावरणीय दशाओं का होना अति आवश्यक है। प्राचीन काल से ही मानव तथा पर्यावरण का घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। प्रारम्भ में मनुष्य प्रकृति के उपभोग के साथ–साथ उसका संरक्षण भी करता था किन्तु समयातीत में मनुष्य की प्रवृत्ति मात्र उपभोग तक ही सीमित रह गयी। यही प्रवृत्ति मनुष्य जगत को ऐसे संकट की ओर धकेल रही है जहॉ उसे अपना अस्तित्व बचाए रखना भी कठिन हो गया है।

पर्यावरण संरक्षण हम सबकी सामूहिक जिम्मेदारी है। पृथ्वी हम सबकी है और इसे सुरक्षित रखने का दायित्व भी हम सबका है। पर्यावरण संरक्षण हमारे जीवन की प्राथमिकता के साथ–साथहमारे व्यवहार में शामिल होना चाहिए। हमें अपनी नैतिक जिम्मेदारी समझते हुए इसे अपनी दिनचर्या में शामिल करना चाहिए। हमे आगामी पीढ़ियों के लिए इस पृथ्वी का उपयोग इस प्रकार करना है कि उन आने वाली पीढ़ियों को भी संसाधन सुलभता से मिल सकें। आज इस बात पर विचार करना आवश्यक है कि क्या हम अपनी जिम्मेदारी पूरी ईमानदारी से निभा रहे हैं? पर्यावरण संरक्षण की शिक्षा परिवार में बचपन से ही शुरू हो जानी चाहिए। नयी पीढ़ी को पर्यावरण संरक्षण के प्रति जागरुक करने की अधिक आवश्यकता है। हमारी सोच और जीवन–शैली पर्यावरण के प्रति मित्रवत होनी चाहिए। सिंह (2019)[3]अक्सर इंसान पर्यावरण में बढ़ रहे प्रदूषण के लिए फैक्ट्रियों को ही जिम्मेदार मानता है लेकिन हिमाचल में तथा कथित शहरीकरण ने भी पर्यावरण पर नकारात्मक प्रभाव डाला है। अव्यवस्थित भवन निर्माण के कारण से भी यहॉ की प्राकृतिक सुंदरता धूमिल हुयी है साथ ही में इस अंधाधुंध दौड़ के कारण से प्राकृतिक संसाधनों का भी अत्यधिक दोहन हुआ है।

नए पौधे लगाना आवश्यक है लेकिन उससे कहीं ज्यादा महत्वपूर्ण उनका संरक्षण है। आज अधिक संख्या में वृक्षों के विनाश तथा अन्य विविध कारणों से पर्यावरण संतुलन बिगड़ रहा हैं। यदि पर्यावरण क्षरण की तीव्र गति को नियंत्रित नहीं किया गया तो आने वाले समय में और अधिक विविध प्रकार की विपरीत समस्याओं का सामना करना पड़ेगा। पृथ्वी का तापमान प्रति वर्ष बढ़ रहा है।

जीव–जंतुओं और पेंड़–पौधों के अस्तित्व पर भी संकट मंडरा रहा है। हवा, जमीन और जल सबमें जहर की मात्रा लगातार बढ रही है ऐसे में यह आवश्यक हो जाता है कि हम सब मिलकर पृथ्वी की रक्षा करें जिससे आने वाली पीढ़ियों को भी जीवन जीने लायक पर्यावरण मिल सके। बाला (2018)[4]अपने अध्ययन में बताती हैं कि शिक्षा तथा जागरुकता में सकारात्मक सम्बन्ध है। लोग वायुप्रदूषण के कारण तथा प्रभाव के विषय में जागरुक हैं किन्तु जागरुकता का स्तर मध्यम ही है क्योंकि वायु प्रदूषण के कारण तथा प्रभाव सम्बन्धी गहरी समझ, तकनीकी शब्दों की पूर्ण व स्पष्ट जानकारी का अभाव है।

आज की भागदौड़ भरी जिंदगी में हम मानसिक सुकून, तनाव मुक्ति या आनंद के लिए हरे–भरे पार्कों, खुले स्थान, वृक्षों के बीच या फिर पहाड़ी इलाकों में जाना चाहते हैं। क्योंकि प्रति के बीच ही हमें वास्तविक आनंद मिलता है।कुमार(2011)[5]ने बताया कि वृक्षों की भीड़ को देखकर मन हरा–भरा हो जाता है, जबकि मनुष्यों की भीड़ को देखकर जी घबरा उठता है और हम भागकर खुली हवा में जाना चाहते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि मानव साहचर्य की अपेक्षा प्रकृति का साहचर्य हमारे स्वभाव के अधिक अनुकूल है। हम जब घुटन, ऊब, दुर्गन्ध एवं कुण्ठा भरे जीवन से ऊब जाते हैं, तब स्वच्छ हवा पाने के लिए किसी वन, उपवन अथवा उद्यान में जाना चाहते हैं, उसी प्रकार जीवन की विषमताओं एवं बंधनों से ऊबकर हम भारतीय धर्मशास्त्रों में वर्णित मानवीय मूल्यों से युक्त परंपरागत भारतीय जीवन–शैली की ओर देखते हैं।

हमाारे पूर्वजों की जीवन–शैली पर्यावरण से मित्रवत थी। हमारी दादी, माता जो कि पढ़ी लिखी नहीं थी हम सबको समझाती थी और कहतीं थीं कि पानी व्यर्थ न बहाओ, अन्न नाली में न जाए, बचा हुआ भोजन जानवरों को खिलाओ, पहली रोटी गाय के लिए और आखिरी रोटी कुत्ते के लिए निकाल दी जाती थी। सुबह–सुबह तुलसी पर जल चढ़ाओ, बरगद, पीपल, नीम, केला की पूजा करो। छत पर पक्षियों के लिए दाना व पानी रखो, हरी सब्जी के छिलके गाय को खिलाओ। प्राकृतिक जल स्रोतों जैसे नदी व तालाब की मांगलिक अवसरों पर पूजा की जाती थी। जीवन संवाहक नदियों और पहाड़ों को भी हमारे यहां पूजनीय माना गया है। वास्तव में प्रकृति का संरक्षण ही उसका पूजन है इसीलिए हमारे पूर्वजों ने प्रकृति के साथ मानवीय सम्बन्धों को विकसित किया। वे जानते थे कि पर्यावरण ही पृथ्वी पर जीवन का आधार है। यह पीढ़ी इतनी पढ़ी–लिखी नहीं थी पर वह पर्यावरण की चिंता करती थी क्योंकि प्राचीन काल से हमारे पूर्वज ऐसा ही करते आए थे। राठौर (2017)[6] जंगल मात्र आर्थिक उद्देश्यों को प्राप्त करने का उपागम नहीं है। वैज्ञानिक आयाम के साथ–साथ सामाजिक, राजनीतिक एवं मानवीय पक्ष भी उतना ही

महत्वपूर्ण है। पर्यावरण बचाने के लिए विषेषज्ञों के स्थान पर अधिक से अधिक जनसहयोग एवं जनसहभागिता आवश्यक है।

जैन (2022)[7]बताती हैं कि पर्यावरण को केवल सरकारी नीतियों और प्रशासन के माध्यम से संरक्षित नहीं किया जा सकता। आज के भौतिकवादी युग में सामान खरीदना एक मनोवैज्ञानिक बीमारी सी हो गयी है। जिन वस्तुओं की आवश्यकता नहीं है, हम उन्हें न खरीदें। संसाधनों के अनावश्यक उपयोग रोकने से पानी, बिजली, कोयला सब बचाए जा सकते हैं। एक कपड़े की कमीज बनाने में सैकड़ों लीटर पानी का इस्तेमाल होता है। क्या हमनें ध्यान दिया कि हमारे पास कितने कपड़े हैं ? सिंगल यूज का परिणाम भयावह है। एक दिन में विश्व में 144 करोड़ प्लास्टिक की बोतलों का उपयोग होता है। जब हम बाजार जाएं तो अपना थैला साथ रखकर संसाधन एवं कूड़ा बचाने में बहुत बड़ा योगदान कर सकते हैं। नदियों में जल का अभाव, गिरते भूगर्भ जल स्तर को ध्यान में रखकर हम स्वयं रेन वाटर हार्वेस्टिंग करा सकते हैं। हमें याद रखना चाहिए कि हम केवल पृथ्वी के ट्रस्टी हैं। हमें आने वाली पीढ़ियों के लिए इस पृथ्वी का उपयोग इस प्रकार करना है कि उन पीढ़ियों को भी संसाधन मिल सकें।

अवस्थी (2022)[8]के अनुसार भारतीय संस्कृति के मूल में ही पर्यावरण संरक्षण की भावना निहित है। पर्व–त्योहार, विवाह की रस्में हों या लोकगीत व लोकचित्र सभी में पयर्यवरण के प्रति आदर व कृतज्ञता के साथ ही उन्हें अक्षुण्ण रखने का संकल्प निहित है। मांगलिक कार्यों में आम की लकड़ी को शुभ मानकर वृक्षों का संरक्षण करने वाले हमारे पूर्वज कैसी दूरदृष्टि रखते थे। भारतीय संस्कृति में तुलसी एकादशी, ऑवला नवमी, वट सावित्री आदि पर्व प्रकृति संरक्षण के मुख्य सोपान हैं। लोक जीवन की धाारणा में नदी मॉ है, पहाड़ मित्र हैं, चिरैया सहेली है, धरती मॉ है तो अन्न देवता है और वन हमारे आधार। आज भी नदी किनारे लगने वाले मेले के माध्यम से पर्व में नदी की पूजा और स्नान, हमारी संस्कृति का अभिन्न अंग है। जल संरक्षण के लिए सरोवर, तालाब, कुंआ अनिवार्य हैं। विवाह संस्कार में कुंआ की पूजा होती है। पूर्वजों का मानना था कि जल स्रोत रहेंगे तभी जीव रहेंगे। शुभ कार्यों में प्रयुक्त होने वाली सभी वस्तुएं प्रकृति प्रदत्त हैं जैसे कि सिंदूर जो कमीला के पौधे से बनता है। बांस और केले के तने और पत्तों से बना मंडप, आम की लकड़ी का बना पाटा, सुपारी, पान, हल्दी, लौंग, जायफल, नारियल, गाय का गोबर, सूप, मिटटी के बर्तन कैसी सुंदर कामना है कि इसी के द्वारा सब मांगलिक वस्तुओं का मूल प्राकृतिक स्रोत जीवित रहे।

जोशी(2022)[9] बताते हैं कि प्रकृति संरक्षण दुनिया का साझा दायित्व है। समय है कि पृथ्वी को मिलकर समझे और पर्यावरण बचाने का समाधान ढूंढ़ें तो हम कुछ हद तक नियंत्रण कर पायेंगे। पर्यावरण को बचाने के लिए हमें वैकल्पिक ऊर्जा के क्षेत्र में स्वावलंबन बढ़ाना होगा। ऊर्जा के लिए जंगल काटने नहीं, फिर से जमाने होंगे। उद्योग क्रांति ने दुनियां में विकास के कई बड़े आयाम तय किए होंगे, लेकिन उसकी वजह से जो हमने खोया है, उसका कोई आंकड़ा तैयार नहीं किया। हमने सकल घरेलू उत्पपद के मानक को ही विकास माना और इसके चलते कितना नुकसान पहुंचा, उसका लेखा–जोखा कभी नहीं रखा। ज्यादातर विकसित देशों में आज कृषि का जीडीपी में योगदान मात्र दो–तीन या चार प्रतिशत के आसपास है। अमेरिका, आस्ट्रेलिया और जापान तो एक प्रतिशत के करीब हैं। कुछ देश जिनके पास विकल्प नहीं थे, उनमें हमारा देश भी शामिल है। यहॉ आज भी 10, 12 प्रतिशत जीडीपी में योगदान खेतीबाड़ी से है। जीविका का यह आधार कृषि आधारित आर्थिकी को पोषित कर रहा है और साथ ही पर्यावरण को संरक्षित भी। साथ ही यह भी आवश्यक है कि दुनियां में अब किसी भी देश के कार्बन उत्सर्जन को प्रदूषण का सूचकांक न बनाते हुए देश विशेष की जीवन–शैली को आधार बनाना चाहिए। जीवन–शैली सूचकांक के आधार पर ऊर्जा के स्रोतों के उपयोग की अनुमति होनी चाहिए।

तिवारी (2022)[10]के अनुसार पर्यावरण संरक्षण के उपायों की जानकारी हर स्तर पर तथा हर व्यक्ति के लिए होना आवश्यक है। पर्यावरण संरक्षण की चेतना की सार्थकता तभी होती है जब हम अपनी नदियॉ, पेड़, पर्वत, पशु, पक्षी और अपनी धरती को बचा सकें। इसके लिए जन सामान्य को अपने आस–पास हवा, पानी और जीवन के क्रियाकलापों और पर्यावरणीय मुद्दों से परिचित कराया जाए। आज के बदलते परिवेश में पर्यावरण की बेहतर समझ के लिए युवा पीढ़ी हेतु स्कूली शिक्षा में जरूरी परिवर्तन करने होंगे। पर्यावरण मित्र माध्यम से सभी विषय पढ़ाने होंगे, जिससे प्रत्येक विद्यार्थी अपने परिवेश को बेहतर ढ़ंग से समझ सके। विकास की नीतियों को लागू करते समय पर्यावरण पर होने वालेप्रभाव पर भी समुचित ध्यान देना होगा।

शुक्ला (2022)[11]पर्यावरण संरक्षण की शिक्षा एवं संस्कार भारतीय संस्कृति का मूलाधार है। यदि प्राचीन भारतीय पर्यावरणीय चेतना को वैष्विक परिदृश्य में अपना लिया जाए तो पर्यावरण संबंधी चिंताओं का सहज ही निराकरण हो सकता है। हमारी प्राचीन शिक्षा व्यवस्था गुरुकुल परंपरा पर आाधारित थी जो कि वनों और वृक्षों की छाया में संम्पन्न होती थी उस पर्यावरणीय आनंद ने ही भारत को विश्व गुरू का सम्मान दिलवाया था। कुमार (2022)[12]ने विचार व्यक्त

किया कि हवा, पानी, भोजन, आवास जैसी मूलभूत जरूरतें भीं प्रदूशित हो गयी हैं और हमारा आधुनिक ज्ञान पर्यावरण संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका नहीं निभा पा रहा है। विज्ञान, तकनीक और औद्यौगीकरण की वृद्धि का पर्यावरण पर बढ़ता दुष्प्रभाव मानव जीवन के लिए खतरा बन गया है। धार्मिक आस्था और सांस्कृतिक परम्पराओं को सकारात्मक एवं सार्थक रूप से पर्यावरण के संरक्षण एवं संवर्द्धन में उपयोग किया जा सकता है। ऐसी दशा में समाज के सर्वांगीण विकास एवं पर्यावरण संरक्षण हेतु हमें अपने परम्परागत ज्ञान को घर, स्कूल और सामुदायिक स्तर पर सामूहिक रूप से व्यवहार में लाना होगा।

हमारे कर्त्तव्य

- हमें प्रकृति से अपने सम्बन्धों को सुदृढ़ करने वाले दृष्टिकोण और परंपरागत प्रथाओं को पुर्नजीवितकरने की आवश्यकता है।
- प्रकृति को पवित्र और देवतुल्य मानने की परंपरा को आाज के आधुनिक युग में भी जीवित रखने की आश्यकता है।
- पर्यावरण की शिक्षा केवल स्कूल, कॉलेज एवं विश्वविद्यालय में ही नहीं रह जानी चाहिए, इसे जन शिक्षा के साथ–साथ जीवन–शैली तथा मानवीय मूल्यों से जोड़ने की जरूरत है।
- प्रत्येक हिन्दू परम्परा के पीछे पर्यावरण संरक्षण का कोई न कोई रहस्य छिपा है। इन रहस्यों को प्रकट करने का कार्य होना चाहिए
- जीवन यापन हेतु प्रकति से संतुलन स्थापित करना।
- ट्रैफिक लाइट पर गाड़ी का इंजन बंद कर दें।
- अपने आसपास पैदल या साइकिल से जाएं।
- अपने घर और कार्यालय में अनावश्यक बिजली का उपयोग बंद कर दें।
- प्राकृतिक रोशनी का अधिकतम इस्तेमाल करें।
- वैटरी चालित व सार्वजनिक वाहनों को प्राथमिकता दें।
- बाजार जाते समय कपड़े या जूट का थैला साथ ले जाएं।
- खुशी व सांस्कृतिक कार्यक्रमों के अवसर पर पौधे उपहार में दें।
- कृषि में प्रयुक्त होने वाले हानिकारक रसायनों को कम किया जाए।
- यूज एण्ड थ्रो की विधि को छोड़कर ''पुनःसहेजने वाली'' सभ्यता को अपनाएं।

निष्कर्ष

पर्यावरण असंतुलन के लिए हम सब जिम्मेदार हैं इसको बचाना हम

सबकी सामूहिक जिम्मेदारी है। पर्यावरण संरक्षण के प्रति उदासीनता, विलासिता पूर्ण जीवन–शैली तथा परंपरागत जीवन–शैली से विमुखता पर्यावरण क्षरण के मुख्य कारण हैं।पर्यावरण संरक्षण के लिए हमारी जीवन–शैली प्रकृति के प्रति मित्रवत होनी चाहिए इसके साथ ही पर्यावरणीय शिक्षा एवं परम्परागत ज्ञान को जनसामान्य तक पहुँचाने की आवश्यकता है।

सन्दर्भ

1. *कुमार, विनोद. (2014).पर्यावरण संरणक्ष के वैधानिक तथा तथा अन्तराष्ट्रीय प्रयासः एक विवेचन। परिप्रेक्ष्य जर्नल, निश्ठा रिसर्च फाउण्डेशन प्रकाशन, राँची, अंक 12, पृ. 313.*
2. *बाला, किरन. (2018). वायु प्रदूषण की समस्या के प्रति जन संचेतना–एक अध्ययन। राधकमल मुखर्जी : चिन्तन परम्परा जर्नल, समाज विज्ञान विकास संस्थान प्रकाशन,बरेली , वर्ष 20,अंक 2, पृ. 35*
3. *सिंह,कुलदीप. (2019).हिमाचल प्रदेश में पर्यावरण संरक्षण एवं जागरुकता अभियान में समाचार पत्रों की भूमिका। राधकमल मुखर्जी : चिन्तन परम्परा जर्नल, समाज विज्ञान विकास संस्थान प्रकाशन,बरेली , वर्ष 21,अंक 2, पृ.14–15.*
4. *बाला, किरन. (2018). वायु प्रदूशण की समस्या के प्रति जन संचेतना–एक अध्ययन। राधाकमल मुखर्जी : चिन्तन परम्परा जर्नल, समाज विज्ञान विकास संस्थान प्रकाशन, बरेली, वर्ष 20,अंक 2, पृ. 41.*
5. *कुमार, राजीव. (2011).पर्यावरण एवं मानवीय मूल्यः एक समाजशास्त्रीय दृष्टिकोंण। यूनिवर्सल रिव्यू जर्नल, एस.आई.टी.बी.एस., प्रकाशन कोलकाता, अंक 2, पृ. 212.*
6. *राठौर, रन्जू. (2017). पारिस्थितिक तंत्र के प्रति बदलते मानव मूल्य। राधकमल मुखर्जी : चिन्तन परम्परा जर्नल, समाज विज्ञान विकास संस्थान प्रकाशन,बरेली , वर्ष 19,अंक 1, पृ. 136–137.*
7. *जैन, अनिता भटनागर.(2022). अपना अस्तित्व बचाने का अंतिम अवसर। दैनिक जागरण समाचार पत्र, बरेली प्रकाशन, जून5, पृ. 6.*
8. *अवस्थी, मालिनी. (2022).श्रद्धा के सनातन भाव से हो रहा पर्यावरण संरक्षण। दैनिक जागरण समाचार पत्र(झंकार), लखनऊ प्रकाशन, जून5, पृ. 1.*
9. *जोशी, अनिल कुमार. (2022).स्वावलंबन का सूरज पुरुषार्थ की पृथ्वी। दैनिक जागरण समाचार पत्र(झंकार), लखनऊ प्रकाशन, जून5, पृ. 1.*
10. *तिवारी, सौ. कु.एवं मलिक,सिद्रा. (2022).पर्यावरण संरक्षण में आधुनिक समाज की भूमिका। पर्यावरण संरक्षण : समस्या और समाधान पुस्तक, वर्ल्ड लैब प्रकाशन गाजियावाद, पृ. 90–91.*
11. *शुक्ला, प्रभात. एवं मिश्रा, श्रीकांत. (2022).भारतीय वांगमय में पर्यावरण संरक्षण। पर्यावरण संरक्षण : समस्या और समाधान पुस्तक, वर्ल्ड लैब प्रकाशन गाजियावाद, पृ.59.*
12. *कुमार, सर्वेश. (2022). परम्परागत भारतीय ज्ञान एवं पर्यावरण संरक्षण। पर्यावरण संरक्षण : समस्या और समाधान पुस्तक, वर्ल्ड लैब प्रकाशन गाजियावाद, पृ. 83–84.*

मङ्गलम् -वर्ष 13 (02) भाग-XXV,अगस्त 2022
ISSN-0976-8149 पृ.-106-114

भू–राष्ट्रवाद : एक विमर्श

डॉ० ब्रह्मदत्त अवस्थी *

सारांश

प्रकृति और पुरूष की सत्ता जब से धरती पर अपना आकार ली हैं तभी से व्यक्ति में भूमि और वातावरण ने अपने आत्मिक सौंदर्य से उसके शरीर, मन, मस्तिष्क और आत्मा में अपना घर कर लिया हैं। इस प्रकार धरती ही व्यक्ति के अन्दर बोलती है और उसकी निर्मित करती है। प्रस्तुत शोध–पत्र भूमि, जन और संस्कृति से उपजे राष्ट्र की अवधारणा को और अधिक पुष्ट करते हुए भू–राष्ट्रवाद के सार्वभौमिक स्वरूप को भौगोलिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक दृष्टि से लोक–कल्याण हेतु विद्वज्जनों के सम्मुख लाने का एक लघु प्रयास है।

मुख्य शब्द

भू-राष्ट्रवाद, धरती, भागीरथी, भौगोलिक क्षेत्र, अर्थ–संचरण, संस्कृति, प्रकृति, चिति, चैतन्य, लोक, राज्य, राष्ट्र, भूमि, जलवायु, वातावरण।

भू–राष्ट्रवाद

सूर्य से अलग होते ही धरा अपनी कीली पर नर्तन करती है और अपने को बनाये रखने के लिए अपने दायित्व (धर्म) का निर्वाह करती है। साथ ही वह सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाना भी नहीं भूलती क्योंकि सूर्य–प्रदत्त यह लोक–धर्म उसे निभाना है। चक्कर लगाने के क्रम से ही सर्दी, गर्मी, बरसात सामने आती है और धरा पर जीवन संचरित होने का आधार बनता है।

कीली पर नर्तन और सूर्य की परिक्रमा से धरा–पटल पर अनेक भू–आकृतियाँ उभरती हैं। पूरा भू–पटल (पैन्जिया) महाद्वीपों और महासागरों में दिखायी पड़ने लगता है। बड़े–बड़े भू–क्षेत्रों के आकार अपनी–अपनी आकृतियाँ ले निकलने लगते हैं। जो बड़े क्षेत्र पर्याप्त विशाल और अपनी पहिचान लिए उभरे वे भौगोलिक–क्षेत्र देश बनने की राह पर निकल पड़े। इन क्षेत्रों पर जन्में, पले, बढ़े लोग एक व्यवस्था में बँध अपना अलग जीवन और पहिचान ले देश की संज्ञा से जाने गये। भले ही वहाँ कोई राज्य न हो, कोई राजा या शासक न हो किन्तु एक व्यवस्था, एक जीवन दिशा, एक पहिचान लिए वे अपना अलग अस्तित्व बनाये मिले। अफ्रीका में अभी तक नये–नये देश 'राज्य' बन सामने आते गये।

ये भौगोलिक क्षेत्र, देश जब भौगोलिक पूर्णता को पूरेपन से सुन्दरतम और उपयुक्ततम रूप में समेट सामने उभरते हैं तब सृष्टि की सर्वोत्कृष्ट पूर्ण

* *पूर्व प्राचार्य, भारतीय महाविद्यालय, फर्रुखाबाद (उ०प्र०)*

इकाई 'राष्ट्र' के उदय का आधार बनता है। क्षेत्र की भौतिक संरचना एक जीवन्त इकाई बन प्रकट होती है। इकाई के अंग अलग–अलग बिखरे हुए नहीं, एक दूसरे को और समग्र अस्तित्व को साधे हुए सतत क्रियाशील रहते हैं। भौगोलिक–क्षेत्र भारत इसका सर्वोत्तम चित्र है। इसका अपना पर्वत है, अपना सागर है, अपना जल–प्रवाह है, अपनी जलवायु है, अपना जीवन–संचरण है, अपना दर्शन है और है अपनी यात्रा।

भारत के भूपटल को देखिये उत्तर में हिमाद्रि अपनी दोनों भुजायँ फैलाए, मध्य में मैदानों में किलकते जीवन को अपनी गोद में, पालते हुए, दक्षिण में मलयगिरि के चरणों पर सागर का वन्दन स्वीकारता है। हिमालय सागर से मिलने के लिए बेचैन, अपनी नदियों के प्रवाह से, सागर की गोद में बैठने दौड़ा चला जाता है तो हिन्द महासागर बादलों की गागर भर दौड़ता हुआ हिमालय के शिखर पर जल चढ़ाने उमड़–घुमड़ जा पहुँचता है। दोनों की आतुर मिलन–यात्रा है। सतत चलती है। भू-क्षेत्र में बहती हुई नदियाँ सिन्धु, गंगा, यमुना, ब्रह्मपुत्र, नर्मदा, ताप्ती, गोदावरी, कृष्णा, कावेरी पूरे देश को सींचती, दुलराती एक ही जीवन-संचरण का प्रवाह बनती हैं। जलवायु भी इस एकत्व और पोषकत्व के भाव को तोड़ती नहीं, जोड़ती है। ग्रीष्म की तपन से उपजी प्यास को शान्त करने के लिए दौड़ते बादल जब पूरे देश को जल से, वर्षा में सन्तुष्ट कर देते हैं तब देश बोल उठता है–बस, बस, बस अन्त-बसन्त। प्यास से लेकर पल्लवन, पुष्पन और फलन का एक ही दिव्यतम स्वरूप है। इसी वर्षा के नाम पर काल–खण्ड का नाम पड़ा है–वर्ष।

इस एकत्व प्रवाह के कारण ही भू–क्षेत्र भारत में एक ही अर्थ–संचरण है और एक ही जीवन-संचरण। पूरा देश अर्थ की एक इकाई है और कहलाता है 'भारत'। जिसका धर्म (दायित्व) है–विश्व का भरण और पोषण। एक ही जीवन इकाई है 'भारत' जिसका लक्ष्य है विश्व को ज्ञान देना, विश्व को दिशा देना। भारत का अर्थ ही है जो विश्व का भरण-पोषण करे, जो विश्व को ज्ञान दे, प्रकाश दे।

भारत विश्व की श्रेष्ठतम भू-संरचना है जिसमें विश्व का समग्र–वैशिष्ट्य सिमट कर बैठ गया है। विश्व की आरसी है यह। प्रकृति ने हिमालय खड़ा कर ठंडी हवाओं से बचाया तो सागर को सिन्धु सागर और गंगा सागर के रूप में अन्दर धँसाते हुए विषुवतरेखीय तपन से भी उबारा। विश्व का केन्द्र और विश्व सामर्थ्य की इसे कुंजी बना दिया।

इकाई व्यर्थ है यदि इकाई की गोद न भरे। धरा कैसी यदि वह धारण न करे। भारत–भू राम को गोद में लेने के लिए मचली और अपना समग्र–चैतन्य समेट राम भारत–भू पर उतर गये। करोड़ों पुत्र और पुत्रियाँ आयीं परन्तु पुत्र

का पूर्णत्व राम में उतरा। माँ भारत अपनी गोद में, अपनी सन्तान को ले, जीवन को सही दिशा देने चल पड़ी।

धरा की अपनी चेतना है। प्रत्येक में प्रत्येक क्षण व्याप्त है। सन्तान और धरा के संघात (रगड़) से यह चेतना (चिति) सुधरती, सम्हलती हुई संस्कृति बनती है। यह लोक में सोते, जागते प्रत्येक चिन्तन और प्रत्येक आचरण में जाग्रत रहती है। यह 'कल्चर' नहीं है, यह 'कल्टीवेट' नहीं की गई है, यह स्वयंभू है। इसे बनाया नहीं गया। यह प्रकृति की कोख से निकली है और प्रकृति की गोद में पली है। परिवर्तित और सम्हलती हुई, सतत मौलिक अपना वैशिष्ट्य लिए, सभी को पालती रही है।

प्रत्येक जड़ और चेतन इकाई का अस्तित्व धरती की गोद में ही है। वही उसको जन्म देती है, और वही उसका पोषण करती है। इकाई ही नहीं, इकाई में स्पन्दित भाव, विचार और अनुभूतियाँ भी इसी धरा की धड़कन की देन हैं। धरा ही सबकी माँ है– 'माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः'।[1] स्वयं भगवान कृष्ण गीता में कहते हैं– 'सर्वयोनिषु कौन्तेय मूर्तयः सम्भवन्ति याः। तासां ब्रह्म महद्योनिरहं बीजप्रदः पिता'।।[2] अर्थात् हे अर्जुन नाना प्रकार की सब योनियों में जितनी मूर्तियाँ अर्थात् शरीरधारी प्राणी उत्पन्न होते हैं, प्रकृति तो उन सबकी गर्भ धारण करने वाली माता है और मैं बीज को स्थापन करने वाला पिता हूँ। प्रत्येक इकाई अपने में विद्यमान परमपिता परमेश्वर के अंश की सामर्थ्य से माँ धरती के वैशिष्ट्य को व्यक्त करती है। धरती उसमें बोलती है, चलती है, कर्म करती है। विश्व की महान विचारक ऐलेन सेम्पुल कहती हैं– 'मानव धरती के धरातल की उपज है . . . . वह उसका बच्चा है और उसकी धूल का कण है, पृथ्वी ने उसका लालन–पालन एक माता की भाँति किया है, उसके लिए कर्तव्य निश्चित किए हैं और उसके विचारों को निश्चित दिशा की ओर मोड़ा है . . . प्रकृति उसकी हड्डियों और तन्तुओं में विद्यमान है, उसके मस्तिष्क और उसकी आत्मा में धँसी हुई है।'[3]

एक व्यक्ति नहीं, एक इकाई नहीं। धरा की गोद में, पलने वाला पूरा का पूरा अस्तित्व, धरा की चेतना से दौड़ता है और धरा के संकेतों पर थिरकता है। यह पूरा अस्तित्व एक है। धरा इसकी माँ है और यह उसका पुत्र। यशोदा के बिना, कन्हैया कहाँ? धरा के बिना, लोक कहाँ? गोद में पुत्र चाहिए और यह पुत्र है– विराट–अस्तित्व। करोड़ों इसके चरण हैं, करोड़ों इसके कर हैं, करोड़ों इसके नेत्र हैं किन्तु गति एक है, कृति एक है, दृष्टि एक है। भिन्नता के अनेकों स्वरूप हैं। कोई छोटा है, कोई लम्बा। कोई मोटा है, कोई पतला। कोई विद्वान है, कोई मूर्ख किन्तु सब में दौड़ने वाला चैतन्य एक है, पहिचान एक है, मातृत्व एक है, संस्कृति एक है, जीवन एक है। यह है धरा का प्रकटन।

फ्रेडरिक रैटजल का मत है कि 'मानव अपने वातावरण की उपज है और वातावरण की प्राकृतिक शक्तियाँ ही मानव जीवन को ढालती हैं।[4] मनुष्य तो केवल वातावरण की माँग के साथ सामञ्जस्य स्थापित करता है और उसके अनुसार अपने को योग्य बनाता है। अमेरिका की धरती, त्याग और लोकहित समर्पण की धरती नहीं बन सकती। वह सत्ता के लिए युद्ध कर सकती है। चुनाव युद्ध लड़ सकती है। इस युद्ध को और इस सत्ता प्राप्ति के ढंग को डिमोक्रेसी कह सकती है किन्तु शक्ति भारत की धरती का त्याग और लोकहित समर्पण उगलता भरत का लोक–व्यक्तित्व नहीं ला सकती जो सत्ता को गेंद बना उछाल देते हैं और कहते हैं कि मुझे यदि सत्ता सौंपोगे तो धरा रसातल को चली जायेगी। राजा तो राम हैं। वह लोकनायक हैं। लोक उनमें बसता है। वह सबके आराध्य हैं। यह दृष्टि है लोक–दृष्टि। यह तन्त्र है लोकतन्त्र। यह बोध है–राष्ट्र-बोध। सर्वोत्तम सत्ता सम्हाले, सत्ता के लिए स्वयं को गलाये। स्वयं को नहीं, समष्टि को पाले।

कार्ल रिटर और स्पष्ट कर कहते हैं–'जिस प्रकार आत्मा के लिए शरीर की उत्पत्ति हुई है उसी प्रकार मनुष्य के लिए पृथ्वी की उत्पत्ति आवश्यक है।'[5] यह एकदम साफ है कि करने वाली प्रकृति है। कराने वाला वह परम्पिता है। मनुष्य और समस्त इकाइयाँ माध्यम हैं। धरती की पहिचान और धरती का चैतन्य धरती की सन्तान में स्वभावतः फूटता मिलता है। हर क्षेत्र और हर प्रदेश और हर राज्य और हर देश का चिन्तन और चरित्र, सोच और व्यवहार अपनी पहिचान अलग लिए मिलता है। भारत में चम्बल घाटी का चरित्र, गंगा के मैदान से अलग दिखायी पड़ता है। जापान का कर्म अरब की दुनिया से कहीं भिन्न नज़र आता है।

यह धरती और धरती की सन्तान भक्ति और स्नेहसने सम्बन्धों की हरहराती धारा है। यही तो राष्ट्र का उत्स है। यही तो राष्ट्र की अभिव्यक्ति है। हर प्राणी इसको मन से, वचन से, कर्म से गुञ्जरित करता है। वेद इसी राष्ट्र का गान करते हैं–

+''यो नो द्वेषत् पृथिवि यः पृतन्याद्
यो अभिदासान्मनसा यो वधेन।
तं नो भूमे रन्धय पूर्व कृत्वारि।।''[6]

(हे मातृभूमि, जो हमारा द्वेष करता हो, जो हम पर सेना भेजता हो। जो मन से दास बनाने की युक्तियाँ सोचता हो, जो हमारा वध करने का प्रयत्न करता हो, हे मातृभूमि तू उसका पूर्णतः विनाश कर डाल) दुर्गा सप्तशती में माँ दुर्गा कहती हैं–समस्त राष्ट्र की ईश्वरीय शक्ति हूँ। इस राष्ट्र–भाव से बँध

प्रार्थना की गई है–नमो मातरे पृथिव्यै। राष्ट्र भाव स्वाभाविक और प्राचीनतम है। धरती की स्वाभाविक चेतना है। आदमी तो आदमी पशु–पक्षी भी अपनी धरती के लिए भागे चले आते हैं।

डारविन इस लगाव को भली प्रकार समझता है और रैटजल कहते हैं कि 'जनसंख्या और उसके भौगोलिक क्षेत्र के बीच सहज आत्मिक सम्बन्ध स्थापित हो जाते हैं, परिणामस्वरूप एक के अभाव में दूसरे की पहिचान करना असम्भव हो जाता है'।[7] 'जनसंख्या और उसके भौगोलिक क्षेत्र के बीच इसी अटूट सम्बन्ध से राष्ट्रीय एकता की भावना का जन्म होता है जो राष्ट्र की जीवन्तता और गतिशीलता का मूल आधार है'।[8] वह सगर्व कहता है यह मुहावरा कि प्रत्येक राष्ट्र की जड़ें देश की मिट्टी से गहराई से जुड़ी हैं, मात्र अलंकारिक अभिव्यक्ति नहीं, अपितु सर्वथा सत्य कथन है। 'प्रत्येक राष्ट्र एक जीवन्त इकाई है, उसे विकास की प्रक्रिया में अपने देश की मिट्टी से उत्तरोत्तर गहनतर सम्बन्ध में जुड़ना है'।[9]

डॉ० रमेशदत्त दीक्षित कहते हैं कि 'राष्ट्रवाद इतिहास और क्षेत्रजन्य अस्मिता हैं।'[10] 'फ्रेडरिक रेटज़ल टेरीटोरियल सेल्स की अवधारणा प्रस्तुत करते हैं और कहते हैं कि राज्य इन्हीं टेरीटोरियल सेल्स से विकसित हुए हैं।[11] 'इसी अवधारणा को व्हिटलसी कोर एरिया नाम से रखते हैं।'[12] राज्य तो मनुष्यकृत है। समझौते से निकले, तलवार की नोक से निकले, षड्यन्त्र से निकले, परम्परा और उत्तराधिकार से निकले या लोगों की मत से सामने आये परन्तु हैं समाज–निर्मित। 'राज्य अपेक्षाकृत एक नई सामाजिक कृति हैं, जिसके वर्तमान स्वरूप का प्रारम्भ मात्र दो शताब्दी पुराना है'।[13] भारत राष्ट्र की अवधारणा अपने में पूर्णता की अवधारणा है जिसमें भौगालिक समग्र विस्तार है और कालिक समग्र इतिहास है तथा कर्म का फैला सतत जीवन्त स्वरूप है। हीगल और कार्ल रिटर की अवधारणाएँ इसमें स्पष्ट रूप से गुम्फित हैं। 'राधा कुमुद मुखर्जी भारत की एकता और एकात्मता को भारत के भूगोल, भारत के इतिहास, भारत के अर्थ संचरण, भारत के अन्तः सम्बन्ध, भारत के सहकार और सहयोग के फलस्वरूप उभरता पाते हैं। राष्ट्र की यह चेतना भारतीयों में उनके विचार और आचरण की स्थापित स्वाभाविक वृत्ति है'।[14] 'भारत की भौगोलिक सम्पूर्णता ही भारत की एकता और एकात्मता का आधार है'।[15]

'देश भूमि का टुकड़ा मात्र नहीं, विकासशील व्यक्तित्व है। भौगोलिक सीमाएँ इसके प्रसार का अंकन करती हैं, सम्पन्नता जीवन संचालित करती है, परम्पराएँ भाव देती हैं और भाषा उनका गुञ्जन करती है। प्राण–तत्व होता है इसका मातृत्व जिसके संरक्षण में पलते हैं एक रूप हो समस्त इसके वासी माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः'।[16] यह मातृत्व ही वह गोमुख है जहाँ से सर्व–कल्याणकारिणी

गंगा निकलती है। 'पुत्र के कर्तव्य की भावना ही तो राष्ट्र को सनातनता प्रदान करती है। जन्मभूमि पर मर मिटने वाले शहीदों के खून से ही तो राष्ट्र–प्रेम की लहर प्रज्ज्वलित रहती है और उसके कारण देश की स्वतन्त्रता सुरक्षित रहती है'।[17] 'हर बेटा और हर बेटी में यह राष्ट्रभाव मचलता हुआ मिलना चाहिए। धरती की धूल के लिए विवेकानन्द की मचल चाहिए, कन्हैया की थिरकन चाहिए, राम की लोटन चाहिए, अरविन्द की विव्हलता चाहिए'।[18]

'भू–धरा का स्वरूप धरा की सन्तान को एकता, एकात्मता, अद्वैतता, समर्पण, सेवा, समग्रता, कर्म और दान का पाठ पढ़ाती है। यह पाठ किताबों से नहीं, यह पाठ आँखों से देखकर नहीं, यह पाठ कानों से सुनकर नहीं यह सहज ही धरा की अपने अन्तस् में धड़कती धड़कन से मिलता है'।[19] भारत का स्वरूप ही है देवत्व का। 'भारत की प्रकृति ही है बिन्दु से बढ़ते–बढ़ते वर्तुलाकार समष्टि के स्वरूप में खो जाना। यह बोध इसी धरती की पूर्णता की देन है। संकुचन नहीं, प्रस्फुटन है यहाँ का भाव'।[20]

राष्ट्र की धरा लोक व्यवस्था का पाठ देती है। कहीं रोटी ही लोक का प्राण है तो कहीं धन ही लोक का जीवन है। कहीं व्यापार ही लोक का जीवन है। कहीं व्यापार ही व्यवस्था की धड़कन है तो कहीं सत्ता ही व्यवस्था का स्वरूप है। ये लंगड़े स्वरूप और विकृत व्यवस्थाएँ हैं। राष्ट्र नहीं राज्य बने समूहों के विनाशक सोच हैं। भारत राष्ट्र है, यह राष्ट्र ही नहीं समग्र विश्व का कल्याण करने वाला सोच देता है और उसे आचरण में ढालता है।

भारत में राजनीति सत्तानीति नहीं, राष्ट्र साधना की नीति है। राजनीति वैश्यालय की गन्दी नाली नहीं, सतत शोभायमान बनी राम और कृष्ण की, गांधी और दीनदयाल की नीति है। राजनीति का यहाँ धर्म है। धर्म के बिना राजनीति शव है। इसी राजनीति ने राम को पूज्य बनाया, गांधी को बापू बनाया और दीनदयाल को लोक–आराध्य बनाया।

देश की धरा अर्थ को अनर्थ का साधन नहीं बनाती। समुत्कर्ष का रास्ता दिलाती है। बताती है कर्म से लक्ष्मी आती है किन्तु विवेक और समर्पण चाहिए तथा लक्ष्मी आने पर त्यागपूर्वक भोग करते हुए, सर्वहित समर्पित करना चाहिए।

धरती व्यक्तिवाद नहीं, एकात्मवाद और अद्वैतवाद का पाठ पढ़ाती है। भारत ने उसे समझा ही नहीं जिया है। व्यक्ति बने किन्तु घर सम्हाले, घर सम्हले तो ग्राम सरसे, ग्राम सरसे तो जनपद सुखी हो और जनपद से बढ़ विश्व–कल्याण का ध्वज फहरे। जन–जन अलग–अलग नहीं, एक ही विराट अस्तित्व के अंग बनें।

'भारत का राष्ट्र–प्रवाह समग्रता के लिए चला है। हो भी क्यों न? कहीं अभाव की कोख से तो उसने जन्म नहीं पाया। भूख और प्यास की छटपटाती

हुई पीड़ा से उसने जीवन तो नहीं लिया। रक्त के लिए झपटते हिंस्र भेड़ियों से उसने जिन्दगी तो नहीं ली। उसका जन्म तो धरा की पूर्ण और पवित्र पुत्री भारत की कोख से हुआ है'।[21] यह धरा हिन्दुस्तान इंग्लैण्ड की तरह कटी–फटी नहीं, जापान की तरह टुकड़े–टुकड़े नहीं, अमेरिका की तरह सिरविहीन नहीं, रूस की तरह आधी और अधूरी नहीं, यह तो हैं अपने में एक और वह भी संतुलित आकार का सर्वोत्कृष्ट स्वरूप'।[22] यह विराट तो है किन्तु बिखरा नहीं। सागर हिमाद्रि के चरणों में नत होता है तो हिमाद्रि गद्गद हो जो प्रेमाश्रु बहाता है, वह सागर की गोद में जाकर ही थमता है। कण–कण भारत का सुगढ़ इकाई का अंग है'।[23]

कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक, कच्छ से लेकर कामरूप तक पुत्रवत्–समाज एक ही भाव ले रमता है। राम घर–घर आराध्य हैं, कृष्ण घर–घर पूजित हैं, ओऽम् घर–घर गूँजता है। नेहरू प्रयाग में गंगा–स्नान कर पत्नी की भी राख प्रवाहित करते हैं, समाजवादी राजनारायण भी हनुमान चालीसा का पाठ करते हैं, डॉ० लोहिया भी चित्रकूट में राम का मेला लगवाते हैं, नम्बूदरीपाद भी वेद का अध्ययन करते हैं। वादों के विवाद भले हों किन्तु राष्ट्र–चैतन्य प्रत्येक में स्वयं और सहज ही हहरता है।

सतत दौड़ती नदियों से, कुलाँचे भरते हिरनों से, आकाश चीरते पक्षियों से चरैवेति–चरैवेति का कर्म–पाठ मिला है। वह भी सर्व–कल्याण का। यह बोध और यह दिशा स्वाभाविक विकसे राष्ट्र भारत की है। आज तो विश्व में राज्य हैं और राज्यों में सत्ता सर्वस्व बनी है। अमेरिका राष्ट्र नहीं; संयुक्त राज्य अमेरिका है, रूस राष्ट्र नहीं; राज्यों का संघ है। ब्रिटेन राष्ट्र नहीं; राज्य है। इतना बड़ा होने पर भी आस्ट्रेलिया राष्ट्र नहीं; राज्य है क्योंकि इन सबमें धरा का मातृत्व, उफनकर, पुत्रों की रगों में नहीं दौड़ा है। दौड़े कैसे? अमेरिका के नागरिक योरप से आये, वे लुटेरे हैं, जिन्होंने अमेरिका के लोगों को मार दिया, निकाल दिया और कॉलोनियाँ बनाकर बस गये। आस्ट्रेलिया के वासी दूसरे देशों से आये और बसे लोग हैं। इन सब देशों में नागरिक और राज्य के सम्बन्ध का जीवन है। राइट्स (Rights) का ज्वार है कहीं भी माँ धरती और लोक–पुरूष के प्रति धर्म का स्वाभाविक उफान नहीं।

कल्याण माँ और पुत्र के सम्बन्ध से बहता है राज्य और नागरिक के समझौते से नहीं। पुत्र का सम्बन्ध स्वाभाविक है और नागरिक का सम्बन्ध एक कृत्रिम–स्वरूप। कोई भी विदेशी, भारत का नागरिक तो बन सकता है किन्तु भारत की सन्तान नहीं। हम भारत राष्ट्र के रक्त हैं, उसके हाड़ और माँस हैं, उसकी धड़कन हैं इसलिए भारत के होकर जियें। भारत की भूमि पर विदेश का चिन्तन शोभा नहीं देता, भारत की धरती पर विदेश का जीवन सुखमय नहीं,

भारत के भूपटल पर विदेश का मंत्र और विदेश का तंत्र विनाशक है। भारत की चेतना का प्रकाश हो। मानव अधिकार (राइट्स) नहीं, मानव–धर्म की गंगा बहे। लेने की आँधी नहीं, देने की सुरसरि हहरे। अपने–अपने की पाशविक भूख नहीं, आत्म की समग्र चेतना सरसे और यह राष्ट्र–चेतना विश्व की कल्याणकारिणी धारा बने। 'राष्ट्र का और देश की मिट्टी के बीच आत्मिक सम्बन्ध को तोड़ना सम्भव नहीं'।[24] 'समूचे भारत की आत्मा एक है'।[25] इसी आत्मा के प्रवाह के कारण 'प्राचीन भारत में कितने ही छोटे–छोटे राज्य थे परन्तु वह राष्ट्रीयता की दृष्टि से एक था,।[26] आज यही भू–चेतना हमारी रग–रग में थिरकनी चाहिए। भारत–भू का चैतन्य, भारत के आचरण में उतरे और समग्र भारत एक विराट–अस्तित्व बना विश्व को आलोकित करे।

सन्दर्भ

1. *अथर्ववेद– काण्ड–12, भूमि–सूक्त–1, मन्त्र–12*
2. *श्रीमद्भगवद्गीता– अध्याय–14, श्लोक–4*
3. *ऐलेन चर्चिल सेम्पुल, चतुर्भुज मामोरिया–मानव भूगोल, एस०बी०पी०डी० पब्लिशिंग हाउस, आगरा, संस्करण–2013, पृष्ठ संख्या–34*
4. *चतुर्भुज मामोरिया, मानव भूगोल, एस०बी०पी०डी० पब्लिशिंग हाउस, आगरा, संस्करण–2013, पृष्ठ संख्या–33*
5. *उपरिवत्, पृष्ठ संख्या–31*
6. *अथर्ववेद संहिता भाग–2 काण्ड–12 सूक्त–1 मन्त्र–14, डॉ० ब्रह्मदत्त अवस्थी, वन्देमातरम्, लोकहित प्रकाशन, लखनऊ संस्करण–1994, पृष्ठ संख्या–16*
7. *रमेश दीक्षित, राजनीतिक भूगोल, प्रेन्टिस हाल, दिल्ली, सं० 2003, पृष्ठ संख्या–17*
8. *रैटज़ल, रमेश दीक्षित, राजनीतिक भूगोल, प्रेन्टिस हॉल, दिल्ली, सं० 2003, पृष्ठ संख्या–17*
9. *उपरिवत्, पृष्ठ संख्या–17*
10. *रमेशदत्त दीक्षित, राजनीतिक भूगोल, प्रेन्टिस हाल, दिल्ली, सं० 2003, पृष्ठ संख्या–108*
11. *उपरिवत्, पृष्ठ संख्या–109*
12. *उपरिवत्, पृष्ठ संख्या–110*
13. *रमेशदत्त दीक्षित, राजनीतिक भूगोल, प्रेन्टिस हाल, दिल्ली संस्करण 2003, पृष्ठ संख्या–97*
14. *राधा कुमुद मुखर्जी, डॉ० ब्रह्मदत्त अवस्थी, लोकतन्त्र, विद्या विहार प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2012, पृष्ठ संख्या–18*
15. *बेनी प्रसाद, डॉ० ब्रह्मदत्त अवस्थी, लोकतन्त्र, विद्या विहार प्रकाशन, दिल्ली संस्करण 2012, पृष्ठ संख्या–19*
16. *डॉ० ब्रह्मदत्त अवस्थी, राष्ट्रहन्ता राजनीति, नार्दर्न बुक सेन्टर, नई दिल्ली, संस्करण, 2012 पृष्ठ संख्या–1*
17. *उपरिवत्, पृष्ठ संख्या–2*
18. *उपरिवत्, पृष्ठ संख्या–31*

19. *डॉ० ब्रह्मदत्त अवस्थी, साहित्य समाज और भारतीयता, प्रतिभा प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण–1990, पृष्ठ संख्या–88*
20. *डॉ० ब्रह्मदत्त अवस्थी, लोकतंत्र, विद्या विहार प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ संख्या–20*
21. *डॉ० ब्रह्मदत्त अवस्थी, साहित्य समाज और भारतीयता प्रतिभा प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण, 1990, पृष्ठ संख्या–82*
22. *उपरिवत्, पृष्ठ संख्या–83*
23. *उपरिवत्, पृष्ठ संख्या–84*
24. *रमेशदत्त दीक्षित, राजनीतिक भूगोल, प्रेन्टिस हाल, दिल्ली, संस्करण–2003, पृष्ठ संख्या–107*
25. *डॉ० विजेन्द्र पाल सिंह, भारतीय राष्ट्रवाद एवं आर्य समाज आन्दोलन, विभू प्रकाशन, साहिबाबाद, संस्करण–1977, पृष्ठ संख्या–15*
26. *उपरिवत्, पृष्ठ संख्या–16*

मङ्गलम् -वर्ष 13 (02) भाग-XXV,अगस्त 2022
ISSN-0976-8149 पृ.-115-119

भारतीय संविधान डॉ० अम्बेडकर तथा पिछड़ों का आरक्षण

*डॉ० वृजेश स्वरूप सोनकर **

संविधान सभा में अनुसूचित जातियों के स्वार्थों की रक्षा करने के अतिरिक्त मैं किसी महत्तर आकांक्षा को लेकर नहीं आया था। मुझे स्वप्न में भी यह विचार नहीं हुआ कि मुझे और भी बड़े–बड़े प्रकार्यों को हाथ में लेने के लिए आमंत्रित किया जाएगा। इस कारण जब सभा ने मुझे मसौदा समिति में निमंत्रित किया तो मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ और जब मुझे मसौदा समिति का सभापति चुना गया तो मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। मसौदा समित में मुझसे अच्छे और मुझसे अधिक सक्षम व्यक्ति विद्यमान थे जैसे कि मेरे मित्र श्री अल्लादि कृष्णास्वामी अय्यर। संविधान सभा और मसौदा समिति का मैं कृतज्ञ हूँ कि उन्होंने मुझसे इतना विश्वास तथा भरोसा किया तथा मुझे अपना एक साधन बनाया और देश की सेवा का मुझे अवसर दिया।[1] संविधान निर्माण के पूर्व ही बाबा साहेब अम्बेडकर ने सरकारी सेवाओं तथा विधान मंडलों में अनुसूचित जातियों के आरक्षण की लगातार मांग की। उस समय वे सरकारी सेवाओं में आरक्षण के लिए दलितों के साथ पिछड़े वर्गों को भी जोड़ा करते थे। 17मई, 1928 को बम्बई प्रेसीडेन्सी की सरकार के गठन के बारे में साइमन कमीशन को एक अलग रिपोर्ट डॉ० अम्बेडकर ने प्रस्तुत की। रिपोर्ड के पदिच्छेद 5 में लोक सेवाओं के भारतीय करण के बारे में कहा गया कि यह सर्वविदित है कि देश की लोक सेवाएं, जहाँ तक कि उनके द्वारा भारतीयों के लिए खुले हैं, विभिन्न परिस्थितियों के कारण ब्राह्मणो तथा उनकसे जुड़ी जातियों के लिए सुरक्षित शिकारगाह बन गया है। गैर ब्राह्मण, दलित वर्ग और मुसलमान वस्तुतः उनमें प्रवेश ही नहीं पा सकते।''[2] उन्होंने आगे कहा– एक जाति विशेष के अधिकारी को लेक कर्तव्य के प्रति निष्ठा से जातीय, प्रतिष्ठा अधिक प्यारी होती हैं वे अपनी जाति के हित के संवर्द्धन के लिए पदों का दुरूपयोग सहज ही कर सकते हैं। वे आम जनता के हित को नहीं देखते। ब्राह्मण तथा सम्बद्ध अधिकारी वर्ग पक्षपात से उपजे अलाभ का पड़ला उनकी दक्षता के समूचे लाभों के पड़ले से भारी हैं कुल मिलाकर उन्होंने लाभ से अधिक हानि पहुँचायी।[3] उन्होंने माँग की कि दलित वर्ग मुसलमानों तथा गैर ब्राह्मणों के लिए यह पद तब तक के लिए आरक्षित किये जाये जब तक सेवायें उनकी संख्या के निश्चित अनुपात में नहीं पहुँच जाती। सेवाओं के भारतीयकरण के दौरान ऐसी व्यवस्था होनी

**असिस्टेण्ट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग, के०के०पी०जी० कॉलेज, इटावा (उ0प्र0)*

चाहिए कि पिछड़े वर्गों की माँगों को पूरा किया जाये।[4] ऐतिहासिक 'पूना पैक्ट' के खण्ड में अनुसूचित जातियों का सरकार की सेवाओं में उचित प्रतिनिधित्व का आश्वासन दिया गया किन्तु इसमें प्रतिनिधित्व की मात्रा नहीं दी गई है। इसमें कहा गया कि दलित सदस्यों को स्थानीय निकायों के चुनाव तथा सरकारी नौकरियों में अछूत होने नाते अयोग्य नहीं ठहरया जाएगा। दलितों के प्रतिनिधित्व को पूरा करने के लिए सभी तरह के प्रयत्न किये जायेंगे और सरकारी नौकरियों में निर्धारित शैक्षिक योग्यता के अन्तर्गत उनकी नियुक्ति की जायेगी।[5]

18–19 जुलाई 1942 को नागपुर कान्फ्रेन्स में अपने ऐतिहासिक भाषण में डॉ०अम्बेडकर ने दलितों के सम्बन्ध में सभी विषयों पर अपने विचार रखे और उन्हें खबरदार तथा संगठित रहने तथा उन्नति के लिए संघर्ष करने की नसीहत दी। शिक्षित बनो, संगठित होओ और संघर्ष करो, का नारा दिया। उन्होंने दलितों के लिए नौकरियों में आरक्षण पर जोर दिया उन्होंने कहा–आप लोगों को माँग करनी चाहिए कि सरकारी नौकरियों में अछूतों के लिए कुछ पद आरक्षित होने निःसंदेह यह ध्यान रखते हुए कि उन स्थानों के लिए यह कम से कम जरूर योग्यता रखते हो। हमें बुरे कानूनों सें इतना नुकसान नहीं होता जितना बुरे शासन से होता है। शासन इसलिए बुरा है क्योंकि यह ऊँची जातियों के हाथ में है जो अपने सामाजिक द्वेष एवं घृणा को शासन में भी ले जाते है और अछूतों को उन तमान बराबरी के नियमों पर आधारित फायदों से वंचित रखते हैं जिसके वे अधिकारी है।[6]

जुलाई 1947 में डॉ० जयकर के रिक्त स्थान पर डॉ० अम्बेडकर बम्बई से कांग्रेस पार्टी के समर्थन से संविधान सभा के लिए चुने गये। वे संविधान सभा की प्रारूप समिति के सदस्य व अध्यक्ष भी बने। ''शेड्रल्ड कास्ट फेडरेशन'' छोड़े बिना वे नेहरू मंत्रिमण्डल में विधि मंत्री बने। संविधान के हर अनुच्देद पर उनकी छाप हैं। इसलिए उन्हें संविधान शिल्पी व आधुनिक मनु भी कहा जाता है।

14नवम्बर 1949 को डॉ० अम्बेडकर ने सरकारी नौकरियों में अनुसूचित जातियों, जन जातियों के आरक्षण की व्यवस्था के संबंध में एक प्रस्ताव रखा। प्रारूप संविधान का अनुच्छेद 296 इस प्रकार था। ''संघ या राज्यों से संयुक्त सेवाओं और पदों के लिए नियुक्तियाँ सेवाओं ओर पदों को भरने में प्रशासन कार्यदृढ़ता बनाये रखने की संगति के लिए अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जन जातियों के सदस्यों के दावों को ध्यान में रखा जायेगा।[7]

प्रारूप संविधान के अनुच्छेद 295 में सरकारी सेवओं में नियुक्ति के बारे

में पिछड़े वर्गों का उल्लेख नहीं था, केवल अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों का उल्लेख था। इस पर आपत्ति करते हुए गुप्तनाथ सिंह (बिहार) में संशोधन प्रस्ताव रखा कि–अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति के दावों के स्थान पर ''अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और ऐसी अन्य जातियों के दावों का जो शैक्षणिक व सामाजिक दृष्टि से पिछड़ी हुई है'' शब्द रखे जाये।

गुप्तनाथ सिंह ने आरोप लगाया कि मसौदा समिति ने पहले उनके सुझाव मान लिए थे। उन्होंने कहा कि जब मैंने यह संशोधन भेजा था तो मसौदा समिति ने उसे मान लिया था और कुछ दिन बाद मेरे सुझाए शब्दों को अपने संबोधन नवम्बर 26 में शामिल कर लिया था। उनके संशोधन में जो खासी रह गयी थी उसे आपने समझा और मेरे संशोधन को प्रायः ज्यों का त्यों मान लिया परन्तु आज जब आपने उन्हें (डॉ० अम्बेडकर को) अनुवर्ती संशोधनों को पेश करने के लिए कहा तो वे चुप रह गये। ये लोग मालिक हैं जो चाहे कर सकते है, पर मैं उनसे यह अनुरोध करूँगा कि मेरे द्वारा सुझाएँ गये शब्दों के रखने के औचित्य पर यह विचार करें। उन्हें प्रस्तुत अनुच्छेद में मेरे शब्दों को रखने पर विचार करना चाहिए।[8] परन्तु संविधान सभा ने अंतिम रूप से डॉ० अम्बेडकर द्वारा प्रस्तुत अनुच्छेद 296 पारित कर दिया जोकि संविधान का अनुच्छेद 335 बना। अनुच्छेद 335 में कहा गया है कि संघ या किसी राज्य के कार्यकलाप से संबंधित सेवाओं और पदों के लिए नियुक्तियाँ करने में अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के दावों का प्रशासनिक दक्षता कर एक्ट बनाये रखने की संगति के लिए संविधान या किसी तरह के अधीन उपबंधित रक्षोपायों से सभी विषयों का अन्वेषण करने वा निगरानी रखने के लिए राष्ट्रीय आयेाग का प्रावधान किया। इन्हीं उद्देश्यों के लिए अनुच्छेद 338ए में अनुसूचित जनजातियों के लिए राष्ट्रीय आयोग का प्रावधान किया गया।

जब भारतीय संविधान के प्रारूप का तीसरा वाचन चल रहा था तो पी०एस०देखमुख ने एक बार फिर डॉ० अम्बेडकर का ध्यान पिछड़ी जातियों के लिए आरक्षण की ओर दिलाया। उन्होंने प्रस्ताव किया कि अनुच्छेद 335में अनुसूचित जातियों तथा अनुसचित जनजातियों के साथ पिछड़े हुए वर्ग जोड़ दिया जाये, नहीं तो यह एक विचित्र बात होगी कि अनुच्छेद 16(4) में तो पिछड़े हुए वर्ग शब्द मिलेंगे परन्तु अनुच्देद 335 में पिछड़े हुए र्ग का कोई उल्लेख नहीं होगा और यहाँ पर केवल अनुसूचित जाति जनजाति इन्हीं दो शब्दों का उल्लेख मिलेगा। यही एक बड़ी असंगत बात होगी।[9] परन्तु संविधान सभा ने इन्हें स्वीकार नहीं किया।

अनुच्छेद 340 पर संविधान सभा में तीखी सुनवाई हुई। सरदार हुकुम सिंह व पी०एस० देशमुख ने कहा कि पिछड़े वर्गों को स्पष्ट करना चाहिए।

उन्होंने डॉ० अम्बेडकर से कहा कि वे इस कठिनाई को दूर करे संविधान इस पर परिभाषा दी जाये कि पिछड़े हुए वग्रे के लोग कौन से हैं क्योंकि कई स्थानों पर इस शब्द का प्रयोग किया गया है। संविधान सभा के सदस्य नागप्पा ने कहा– ''मसौदा समिति में रखा गया था संघ अथवा राज्य में पिछड़े हुए वर्गों के नागरिकों के लिए नियुक्तियाँ और पद आरक्षित किए जायेंगे, पिछड़े हुए वर्गों में बहुत अधिक वर्गों का समावेश हैं। मैं डॉ० अम्बेडकर से यह निवेदन करूँगा कि इस श्रेणी में कौन–कौन से आते हैं। मैं समझता हूँ कि उनके विचार से अनुसूचित जाति अनुसूचित जनजाति तथा अन्य पिछड़े हुए वर्ग हैं यदि कोई अन्यत्र हो तो मैं निवेदन करूँगा कि वे इस समय उन्हें बता दें।[10]

इस बहस का उत्तर देते हुए संविधान सभा में डॉ० अम्बेडकर ने कहा–उनसे यह भी कहा गया है कि पिछड़े हुए वर्ग क्या है, इसकी मैं परिभाषा करूँगा। मैं समझता हूँ कि ''पिछड़े हुए वर्ग शब्द जहाँ तक इस देश का संबंध हैं, बहुत साधारण शब्द है। प्रान्त में प्रत्येक व्यक्ति यह जानता है कि पिछड़े वर्ग कौन है और इस कारण मैं समझता हूँ कि यह अच्छा होगा कि जैसा कि संविधान में दिया गया है कि यह विषय आयोग पर छोड़ दिया जाये जिसकी नियुक्ति की जाएगी और जो समाज की परिस्थितियों का अनुसंधान करेगी और यह निश्चित करेगी कि इस देश में किन वर्गों को पिछड़े हुए वर्गों में रखा जाए।[11]

इस प्रकार संविधान के अनुच्छेद 335 के अन्तर्ग राजकीय सेवाओं में अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के लिए नियुक्ति के दरवाजे खोल दिए वहीं पर अन्य पिछड़े वर्गों के लिए इस प्रकार की कोई व्यवस्था नहीं की गई। पिछड़ी जातियों की पहचान और राजकीय सेवाओं में उनके आरक्षण का मामला भविष्य में नियुक्त होने वाले पिछड़ा वर्ग आयोग तथा आयोग की संस्तुति मानने वाली सरकारों पर छोड़ दिया। परिणाम स्वरूप संविधान सभा में डॉ० अम्बेडकर की चुप्पी के कारण पिछड़ों को राजकीय सेवाओं में आरक्षण पाने के लिए एक लम्बा संघर्ष तथा इंतजार करना पड़ा। संविधान के अनुच्छेद 340 के अन्तर्गत 1953 में तत्कालीन नेहरू सरकार ने काका कालेलकर आयोग की नियुक्ति की। आयोग ने समस्त महिलाओं को पिछड़े वर्गों में रखा तथा पिछड़े वर्ग की 2399 जातियों की पहचान की। आयोग ने पिछड़े वर्गों को प्रथम श्रेणी की नौकरियों में 25प्रतिशत, द्वितीय श्रेणी की नौकरियों में 33.5 प्रतिशत तथा तृतीय एवं चतुर्थ श्रेणी की नौकरियों में 40प्रतिशत आरक्षण की संस्तुति की । पर केन्द्र सरकार ने कालेलकर आयोग

की सिफारिशों को लागू नहीं किया तथा उसे रद्दी की टोकरी में फेंक दिया। 1977 में जब केन्द्र में जनता पार्टी की सरकार बनी तो उसने 20दिसम्बर 1978 को वी०पी०मंडल की अध्यक्षता में द्वितीय पिछड़ा वर्ग आयोग का गठन किया। मंडल आयोग ने पिछड़ी जातियों को आबादी कुल संख्या का 32 प्रतिशत मानते हुए 27प्रतिशत आरक्षण की संस्तुति की। 1980 से 89 तक केन्द्र में कांग्रेस का शासन रहा और उसने आयोग का प्रतिवेदन लागू करने की दिशा में कोई कदम नहीं उठाया। 1989 में केन्द्र में जनता पार्टी नीत राष्ट्रीय मोर्चे की सरकार बनी तो प्रधानमंत्री वी०पी० सिंह ने 1990 में मंडल आयोग की संस्तुतियों के अनुसार केन्द्रीय सेवाआं में पिछड़ी जातियों को 27प्रतिशत आरक्षण दिया। इस प्रकार पिछड़ी जातियों को कन्द्र की सेवाओं में आरक्षण मिलने में आजादी के बाद 43वर्ष बीत गये। यही कारण है कि आबादी के 52 प्रतिशत होते हुए भी पिछड़ी जातियों को केन्द्रीय सेवाओं में प्रतिनिधित्व लगभग 23प्रतिशत आबादी वाले अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों से कम है।

सन्दर्भ

1. *संविधान सभा के वाद–विवाद की सरकारी रिपोर्ट– (लोकसभा सचिवालय दिल्ली 1994) खण्ड, XI, XII पृष्ठ 4298*
2. *बाबा साहेब डॉ० अम्बेडकर सम्पूर्ण वांगमय, सामाजिक न्याय और अधिकारिकता मंत्रालय 2002 खण्ड 4 पृष्ठ 109*
3. *उक्त पुस्तक पृष्ठ 1116*
4. *उक्त पुस्तक पृष्ठ 114–117*
5. *पूना पैक्ट– कल्चरल पब्लिशर्स अमीनाबाद लखनऊ 1994 पृष्ठ 60*
6. *भगवानदास– दलित राजनीति और संगठन, वर्ल्ड लाइब्रेरी, नई दिल्ली–2002*
7. *संविधान सभा के वाद–विवाद की सरकारी रिपोर्ट– (लोकसभा सचिवालय नई दिल्ली 1994) खण्ड–दस पृष्ठ 3063*
8. *उक्त पुस्तक पृष्ठ–3086*
9. *उक्त पुस्तक खण्ड XI, XII पृष्ठ–3597*
10. *उक्त पुस्तक खण्ड IX (क), पृष्ठ–941*
11. *उक्त पुस्तक खण्ड IX (क), पृष्ठ–953*

मङ्गलम् -वर्ष 13 (02) भाग-XXV,अगस्त 2022
ISSN-0976-8149 पृ.-120-124

अनन्य कोटि के नेता बाबा साहेब डॉ० अंबेडकर के जीवन का अवलोकन

दीपक कुमार *

सारांश

भारतीय संविधान जिसमें भारतीय लोकतांत्रिक गणराज्य के मौलिक कानून और सिद्धांत शामिल हैं, बाबासाहेब डॉ०अंबेडकर की अध्यक्षता में तैयार किया गया था। डॉ० अम्बेडकर का भारत के संविधान में बहुत बड़ा योगदान हे जिसने उन्हें एक महान नेता बना दिया। इसलिए उन्हें हाजारें और वर्षों तक याद किया जाएगा। 2021 में राष्ट्र डॉ०अंबेडकर की जंयती मना रहा हे। जिनका जनम 14अप्रैल1889 को हुआ था। जिन्हें भारतीय संविधान के मुख्य ड्राफ्टसमैन के रूप में याद किया जाता है। लेकिन इन सबसे ऊपर अम्बेडकर दलितों के हित के लिए एक बहादुर सेनानी थे। दलितों को सशक्त बनाने के लक्ष्य को हासिल करने की उनकी रणनीति बदलते संदर्भों के साथ बदल गई लेकिन लक्ष्य हमेशा एक ही रहा जीवन के सभी क्षेत्रों में उच्च जाति हिन्दुओं के साथ समानता प्राप्त करवाना डॉ०अंबेडकर का जन्मदिन 14अप्रैल 1928 को पुणे में पहली बार सार्वजनिक से मनाया गया था। सामाजिक कार्यकर्ता और अम्बेडकर वादी जनार्दन सदाशिव नानापीसे वही थे जिन्होंने अम्बेडकर जयन्ती मनाने की परम्परा शुरू की थी।

मूलशब्द– संविधान, समाज, लोकतंत्र, असमानता

जीवन होने के बजाए महान होना चाहिए शिक्षा वो शेरनी है जो इसका दूध पिएगा तो दहाड़ेगा ये दो प्रसिद्ध कथन भारतीय संविधान के रचियता डॉ०अंबेडकर के हैं। जो शिक्षा और जिन्दगी के महत्व के बारे में उनकी गहरी दार्शनिक को दर्शाते हैं। डॉ०अंबेडकर की अद्वितीय प्रतिभा अनुकरणीय है। वे एक मनीषी, नायक विद्वान्त दार्शनिक, वैज्ञानिक एमाजसेवी धैर्यवान व्यक्तित्व के धनी थे। वे अन्नय कोटि के नेता थे, जिन्होंने अपना समस्त जीवन समग्र भारत की कल्याण कामना में उत्सर्ग कर दिया। खासकर भारत के 80प्रतिशत दलित सामाजिक व आर्थिक तौर से अभिशप्त थे। उन्हें अभिशाप से मुक्ति दिलाना ही डॉ०अंबेडकर का जीवन संकल्प था। 14अप्रैल 1990 को भारत सरकार ने डॉ०अंबेडकर को मरणोपरांत सबसे प्रतिष्ठित भारत रत्न पुरस्कार से सम्मानित किया। इस समय के दौरान संसद भवन के केन्द्रीय कक्ष में बाबासाहेब डॉ०अंबेडकर के जीवन आकार के चित्र का अनावरण किया गया।

14 अप्रैल 1990 से 14 अप्रैल 1991 तक डॉ०अंबेडकर की याद में सामाजिक न्याय वर्ष के रूप में मनाया गया। इन सभी मान्यताओं के पीछे इस अनुभवी का

* *मन्ना सिंह नगर, लुधियाना (प्रजाब)*

विशाल योगदान है। जिसने भारतीय संविधान के प्रारूपण को निर्देशित किया जो लोकतंत की सर्वोच्च कानून पुस्तक और शास्त्र है।

पानी की बूंद जब सागर में मिलती है तो अपनी पहचान खो देती है। इसके विपरीत व्यक्ति समाज में रहता है पर अपनी पहचान नहीं खोता। इंसान का जीवन स्वतंत्र है। तो सिर्फ समाज के विकास के लिए पैदा हीं हुआ बल्कि स्वयं के विकास के लिए भी पैदा हुआ है।

15अगस्त 1947 को भारत के स्वतंत्र होने के बाद राष्ट्र ने 29 अगस्त 1947 को डॉ० अम्बेडकर को संविधान ड्राफ्टिंग समिति के अध्यक्ष के रूप में नियुक्त किया।

डॉ० अम्बेडकर ने दृढ़ता से कहा कि लोकतंत्र में सरकार लोगों के प्रतिनिधियों द्वारा गठित एक जिम्मेदार सरकार होनी चाहिए। यह कभी भी भारतीयों पर एक संविधान लागू नहीं करना चाहते थे। बल्कि उन्होंने यह प्रस्तुत किया कि जनता की राय को किस तरह से शासित होना चाहिए। उन्हें स्वीकार किया जाना चाहिए। उन्होंने का सबसे अच्छी सरकार लोगों की राय पर और अधिकार पर नहीं।

नबम्बर 26 1949 को देश को संविधान सौपते हुए बाबासाहेब डॉ० अम्बेडकर ने कहा था मैं समझाता हूँ कि कोई संविधान चाहे जितना अच्छा हो वह बिुरा साबति हो सकता है यदि उसका अनुसरण करने वाले लोग बुरे हों, एक संविधान चाहे जितना बुरा हो वह अच्छा साबित हो सकता है यदि उसका पालने करने वाले लोग अच्छे हो।

डॉ० अम्बेडकर की रणभेरी गूँज उठी

समाज को श्रेणीविहीन और वर्णविहीन करना होगा क्योकि श्रेणी ने इंसान को दरिद्र और वर्ण ने इंसान को दलित बना दिया। जिनके पास कुद भी नहीं है वे लोग दरिद्र माने गए और जो लोग कुछ भी नहीं है वे समझे जाते थे।

डॉ० बी०आर० अम्बेडकर को बाबासाहेब अंबेम्डकर के नाम से जाना जाता है और सभी जानते हैं कि वे भारतीय संविधान के वास्तुकारी में से एक थे। वह एक बहुत प्रसिद्ध राजनीतिक नेता, प्रख्यात न्याय विद् बौद्ध कार्यकर्ता, दार्शनिक मानवविज्ञानी, इतिसकार, लेखक, अर्थशास्त्री, विद्वान और संपादक थे। डॉ० अम्बेडकर ने अपनेपूरे जीवन में दलितों और अन्य सामाजिक रूप से पिछड़े वर्गों के अधिकारों के लिए अस्पृश्यता जैसी सामाजिक बुराइयों को मिटाने के लिए संघर्ष किया। डॉ० अम्बेडकर को जवाहरलाल नेहरू के मंत्रिमंडल में भारत के पहले कानून मंत्री के रूप में नियुक्त किया गया था। 1990 में उन्हें मरणोपरांत भारत रत्न भारत के सर्वोच्च नागरिक सम्मान से सम्मानित किया गया।

डॉ० भीमराव अम्बेडकर ने महिलाओं को उनके अधिकार दिलाने के लिए पूरी हिन्दू व्यवस्था और समाज से लम्बी लड़ाई लड़ी। उन्होंने हमेशा ही महिलाओं को समानता शिक्षा, सम्मान अधिकार और अपनी समर्थता को समझने पर जोर दिया। उन्होंने महिलाओं को मनुवादी सोच से निकाला। उनकी सभाज में बराबरी के लिए कानून बनाया। उन्हें हर क्षेत्र में जगह मिल सके ऐसी व्यवस्था बनाई। हिन्दू को ड बिल लाकर उन्होंने महिलाओं को भरण–पोषण, तलाक, पति की हैसियत के हिसाब से खर्चे का अधिकार दिलाया।

भीमराव अम्बेडकर का जन्म 14 अप्रैल 1891 को मध्य प्रदेश में हुआ था। वह अपने माता–पिता की चौदहवीं संतान थे। अम्बेकर के पिता रामजी भारतीय सेना मे सूबेदार थे और महू छावनी में तैनात थे। अम्बेडकर को समाज के कोने–कोने से भारी भेदभाव का सामना करना पड़ा क्योंकि उनके माता–पिता हिन्दू महार जाति से थे। महार जाति को उच्च वर्ग द्वारा अछूत के रूप में देखा जाता था। ब्रिटिश सरकार द्वारा चलाए जा रहे आर्मी स्कूल में भी अम्बेडकर ने भेदभाव का सामना किया। वह जहाँ भी गए उनके साथ भेदभाव हुआ। 1908 में अम्बेडकर मुम्बई के एलफिंस्टन कॉलेज मे अध्ययन करने गए। अम्बेडकर ने बड़ौदा के गायकवाड शासक सयाजी राव तृतीय से पच्चीस रूपये प्रति माह की छात्रवृत्ति प्राप्त की।

उन्होंने 1912 में बॉम्बे विश्वविद्यालय से राजनीति विज्ञान और अर्थशास्त्र में स्नातक किया। अम्बेडकर उच्च अध्ययन के लिए अमेरिका गए। अमेरिका से वापस आने के बाद, अम्बेडकर को रक्षा सचिव के रूप में बड़ौदा के राजा ने नियुक्ति किया। उन्हें बड़ौदा में भी अछूत होने के लिए अपमान का सामना करना पड़ा था। अपनी आगे की पढ़ाई जारी रखने के लिए 1920 में वे अपने खर्च पर इंग्लैण्ड गए। 8जून 1927 को उन्हें कोलंबिया विश्वविद्यालय द्वारा डॉक्टरेटसे सम्मानित किया गया।

भारत लौटने के बाद भीमराव अम्बेडकर ने देखा कि जातिगत भेदभाव राष्ट्र को लगभग खंडित कर रहा है। इसलिए उन्होंने इसके खिलाफ लड़ने का फैसला किया। अम्बेडकर ने दलितों और अन्य धार्मिक समुदायों के लिए आरक्षण प्रदान करने की अवधारणा का समर्थन किया। अम्बेडकर ने लोगों तक पहुँचने और उन्हें प्रचलित सामाजिक बुराइयों की कमियों को समझाने के लिए मूकनायक नामक एक समाचार पत्र का शुभारंभ किया। एक बार एक रैली में उनका भाषण सुनने के बाद कोल्हापुर के एक प्रभावशाली शासक शाह चतुर्थ ने उनके साथ भोजन किया। इस घटना ने देश के सामाजिक राजनीतिक क्षेत्र में शोर मचाया था।

आज भले ही ज्यादातर लोग उन्हें भारतीय संविधान के निर्माता और दलितों के मसीहा के तौर पर याद करते हो लेकिन अम्बेडकर ने अपने कैरियर की शुरूआत एक अर्थशास्त्री के तौर पर की थी। डॉ० अम्बेडकर किसी अंतराष्ट्रीय यूनिवर्सिटी से अर्थशास्त्र में पीएचडी हालिस करने वाले देश के पहले अर्थशास्त्री थे। उन्होंने 1915 में अमरीका की प्रतिष्ठित कोलंबिया यूनिवर्सिटी से इकॉनामिक्स में एमए की डिग्री हासिल की, इसी विश्वविद्यालय से 1917 में उन्होंने अर्थशास्त्र में पीएचडी भी की। इतना ही न ही इनके कुछ बरस बाद उन्होंने लंदन स्कूल ऑफ इकॉनामिक्स से भी अर्थशास्त्र में मास्टर और डॉक्टर ऑफ साइंस की डिग्रियाँ हासिल की। खास बात यह है कि इस दौरान बाबा साहेब ने दुनिया के सबसे प्रतिष्ठित विश्वविद्यालय से डिग्रियाँ हासिल करने के साथ ही साथ अर्थशास्त्र के विषय को अपनी प्रतिभा ओर अद्वितीय विश्लेषण क्षमता से लगातार समृद्ध भी किया।

इस लक्ष्य की खोज में 1930 के दशक की शुरूआत में उन्होंने दलितों के लिए एक अलग निर्वाचन मंडल की वकालत की। इस मांग को ब्रिटिश प्रध ाानमंत्री रामसे मेकडोनाल्ड ने 1932 के अपने सांप्रदायिक पुरस्कार में स्वींकार किया। जिसने दलितों को केन्द्रीय विधायिका की कुल 18 सीटों का और प्रांतीय विधानसभाओं में 71 सीटों को विशेष रूप से दलितों द्वारा चुना गया था। हालांकि दलितों के लिए एक अलग निर्वाचक मंडल के ख़िलाफ महात्मा गांधी के आमरण अनशन के कारण अम्बेडकर की सफलता अल्पकालिक थी। जिसे हिन्दू समाज को विभाजित करने के लिए एक ब्रिटिश चाल के रूप में देखा।

हालांकि अम्बेडकर ने अपने फैसले पर खेद व्यक्त किया क्योंकि उन्हें जल्द ही एहसास हुआ कि जातिगत हिन्दुओं और दलितों के बीच योग्य मतदाताओं की संख्या में असमानता के साथ–साथ उनकी सामाजिक आर्थिक स्थिति में भारी असमानताए निर्वाचित दलितों में से कुछ ही सही मायने में प्रतिनिधित्व कर पाएंगे। दलित हित गांधी और अम्बेडकर दोनों ने अस्पृश्यता का तिरस्कार किया। लेकिन जिन शब्दों का उन्होंने अछूतो के रूप में वर्णन किया था। उन्होंने इस मुद्दे पर अपने दृष्टिकोण में व्यापक अंतर का प्रदर्शन किया। गांधी ने हिन्दुओं को दलितों के खिलाफ भेदभाव रोकने के लिए उन्हें हरिजन ईश्वर की संतान कहा। अम्बेडकर के लिए यह एक संरक्षक शब्द था।

डॉ० अम्बेडकर भारत के प्रथम कानून मंत्री भी थे। उन्हें दलितों और पिछड़े वर्ग के लोगों के मसीहा के रूप में जाना जाता है। उन्होंने सामाजिक, राजनीतिक आंदोलन और दलित बौद्ध आंदोलन चलाया। जिसमें देश के लाखों दलितों बहुजनों ने हिस्सा लिया। उन्होंने मूर्ति पूरा का हमेशा विरोध किया।

उन्होंने पूजा पाठ को हिन्दू समाज का दोष बताया। उन्होंने कहा कि हिन्दू धर्म उसका पालन पूजा पाठ लोगों को कमजोर बनाता है। 1954 से अम्बेडकर मुध ामेह से पीड़ित थे। दवाइयों के दुष्प्रभाव और खराब नजर के कारण जून 1954 में जून से अक्टूबर तक वह बिस्तर पर थे। 1955 के दौरान उनकी तबीयत खराब हो गई। अपनी अंतिम पांडुलिपि द बुद्धा एंड हिज धम्म को पूरा करने के तीन दिन बाद 6 दिसम्बर 1956 को दिल्ली में अपने घर पर अम्बेडकर की नींद में मृत्यु हो गई।

उन्होंने कहा कि जीवन में शिक्षा ही सबकुछ हैं अगर शिक्षा पा सके तो जीवन में कुछ भी हासिल करना मुश्किल नहीं हागा। उनके जीवन की अनेक ऐसी घटनाएं हे जिन्हें लोग मोटिवेशन के तौर पर याद रखते हैं। उन्हें न सिर्फ देश बल्कि विदेशों में भी सम्मान दिया जाता है। हर साल 14 अप्रैल के दिन उनका देश और विदेश में जन्मदिन मनाया जाता है। हर साल लगभग 11 करोड़ लोग उनके जन्मदिन को अलग–अलग तरीकों से मनाते हैं।

समाज में अनपढ़ लोग है यह हमारे समाज की समस्या नहीं है लेकिन जब समाज के पढ़े लिखे लोग भी गलत बातों का समर्थन करने लगते है और गलत को सही दिखाने के लिए अपने बुद्धि का उपयोग करते है। यही हमारे समाज की समस्या है।

सन्दर्भ

1. *बौद्ध धर्म और साम्यवाद नवम्बर 1956 को काठमाडू नेपाल में स्टेट गैलरी हॉल में बौद्धों की विश्व फैलोशिप के चौथे सम्मेलन के समापन सत्र में अम्बेडकर का भाषण।*
2. *बी.आर. अम्बेडकर 2008, कांगेस और गांधी ने अछूतों के साथ क्या किया। पृष्ठ–135–136।*
3. *बी.आर. अम्बेडका (2015) जाति का विनाश। 1936 में बी.आर.अम्बेडकर द्वारा लिखित एक अविभाजित भाषण@ccnmtl-columbia-edu@projects@mmt@ambedkar@web@inTdeÛ-htmlA*
4. *जौल निकालस– लर्निंग यूज ऑफ सिम्बोलिक मीन्सः दलित अम्बेडकर स्टैच्यूज एंड स्टेट इन यू.पी.ए. कंट्रीब्यूशन टू इंडियन सोशियोलॉजी पृष्ठ.175–207*
5. *एस आनंद (सं.) (2014) एनीहिनलेशन ऑफ कास्ट द एनोटेटेड क्रिटिकल एडिशन– बी.आर.अम्बेडकर ने निबंध, डॉक्टर एंड द सेंट के साथ अरूंधति रॉय नवायना पब्लिशर्सस नई दिल्ली–44। 2014 का परिचय दिया।*
6. *www-ignited-in*
7. *www-jagranjosh-com.*

मङ्गलम् -वर्ष 13(02) भाग-XXV, अगस्त 2022
ISSN-0976-8149 पृ.-125-129

कविता के बदले तेवर : शमशेर बहादुर सिंह की कविता में बिम्ब

डॉ०पी.के.जयलक्ष्मी *

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कविता में जैसे विषय बदले, वस्तु बदली और कवि की जीवन दृष्टि बदली वैसे ही शिल्प के क्षेत्र में रूप विधान के नए आयाम भी विकसित हुये। कविता की जीवन्तता में प्राण शक्ति के रूप में बिम्ब ने अपना स्थान और महत्व पाया। बिम्ब शब्द का अर्थ छाया, प्रतिच्छाया, अनुकृति या शब्दों के द्वारा भावांकन है। एक आधुनिक कवि की श्रेष्ठता की परीक्षा की कसौटी जहां अज्ञेय "शब्दों का आविष्कार" को मानते हैं, वहीं केदारनाथ सिंह "बिम्बों की आविष्कृति" को।

बिंब स्मृति की वह कल्पना है, जो शब्द के व्दारा चित्र प्रस्तुत करती है। बिंब के सफल प्रयोग के व्दारा ही कवि अपने पाठकों के साथ तादात्म्य स्थापित कर लेता है, क्यांकि डॉ. नगेंद्र के मतानुसार, ''काव्य बिंब शब्दार्थ के माध्यम से कल्पना व्दारा निर्मित एक ऐसी मानव छवि है जिसके मूल में भावों की प्रेरणा रहती है''। इस प्रकार डॉ. नगेंद्र स्पष्ट करते हैं कि कविता में बिंब के मूल में भावों की प्रेरणा रहती है ओर एक कुशल रचनाकार बिंबविधान को जहॉ सरल और सहज शब्दों के माध्यम से उपस्थित करता है, वहॉ उसे वह कई बार अलंकृति के माध्यम से भी उपस्थित करता है। यहॉ यह ध्यान रखना होगा कि सहज और सफल बिंब वे होते हैं, जो एंद्रीय संवेदनाओं व्दारा खडे किए जाते हैं।

वस्तुतः बिम्ब विधान से हमारी रागात्मिक वृत्तियों की गहराई का पता चलता है। बिम्ब के सहारे बाहरी संसार की छवियों को लेकर विशेष संदर्भ में उन्हें इस प्रकार प्रयुक्त करते हैं कि हमारा कथ्य ज्यादा स्पष्ट और अधिक प्रभावी हो जाता है। शमशेर की कृतियों में बिम्ब अधिक सजीव और ऐंद्रिय हैं। साथ ही अधिक संश्लिष्ट और गहराई लिए हुये हैं। बिम्बों का अस्तित्व मानसिक अर्थ में विशेष होता है। यदि बिम्ब स्वतन्त्र रूप से काव्य में आते हैं, तो वे उतने प्रभावी नहीं होते जितने होने चाहिए इसलिए इनकी रचना में सर्जक के विगत अनुभवों का अधिक योगदान रहता है।

शमशेर के काव्य में बिम्ब उसकी रचना तन्त्र के सम्पन्न और भाषा को समृद्ध करते हैं। उनके बिम्ब जीवन्त हैं। इन बिम्बों में उनका सौन्दर्य बोध निहित है।

**हिन्दी विभागाध्यक्ष संत जोसफ महिला महाविद्यालय विशाखपट्टनम (आं०प्र०)*

शमशेर के बिम्ब रंग, ध्वनि और गंधपूर्ण हैं। उनके काव्य में नारी की मांसलता और प्रकृति की सुंदरता के साथ कहीं कहीं उनके बिम्ब यथार्थ परक स्वच्छंद दृष्टि के सूचक हैं। शमशेर की कविता में लौकिक बिंबों के साथ साथ अलौकिक बिम्बों की सृष्टि भी हुई है। उनकी कविता में जहाँ कल्पना है, वहाँ बिम्ब अधिक प्रभावशाली हैं। कल्पना वह शक्ति है जो सर्वप्रथम कवि का वर्ण्य विषय से सीधा साक्षात्कार कराती है। शमशेर की काव्य भाषा मुख्य रूप से बिम्बात्मक है। उनकी "काल तुम से होड है मेरी", "बात बोलेगी" कविताओं में भाषिक संवेदना के साथ बिम्बों का कुशलता पूर्वक प्रयोग हुआ है। काव्यात्मक संवेदना और रचनात्मक चेतना जिन वर्ण्य विषयों को छूती है वे बिम्ब बनते हैं। शमशेर का बिम्ब विधान कुछ इस प्रकार है–

प्रकृति बिम्ब

शमशेर के बिम्ब जन जीवन के साधारण व्यापार को भी कहीं असाधारण अर्थवत्ता प्रदान करते है। उनके प्रकृति बिम्बों में संश्लिष्ट रोमानी बिम्बों की मोहकता एवं मार्मिकता है। वे ऐसे बिम्ब कहीं कहीं कल्पना जनित होकर भी अंततः यथार्थ से रूबरू कराते हैं कहीं यथार्थपरक होकर भी कल्पना से लगते हैं।

एक नीला आईना / बेठोस सी यह चाँदिनी /और अंदर चल रहा हूँ मैं /मैं उसीके महातल के मौन में/ मौन में इतिहास का कण किरण जीवित,एक,बस।

शमशेर के प्रकृति चित्रण में अति यथार्थवादी झलक बार बार मिलती है। प्रकृति जितनी उनसे बाहर है, उतनी ही भीतर है। कविता में वर्णन की परंपरा और अनुभव का उन्मेष दोनों घुलते मिलते हैं, पर शमशेर के यहाँ महत्व दूसरे का है। शायद यही कारण है कि प्रकृति चित्रण में उनका लगाव जितना जल था कि आकाश से उतना मिट्टी से नहीं।

पी गया हूँ दृश्य वर्षा का/ हर्ष बादल का/हृदय में भर कर हुआ हूँ/हवा सा हल्का/

धुन रही थीं सर/व्यर्थ व्याकुल मत्त लहरें।

उन्होंने सागर तट कविता में जल, पर्वत और वर्षा का व्यापक संदर्भ लेकर उनसे एक घरेलू बिम्ब की रचना की है।

पंक्तियों में टूटती दृगिरती / चांदिनी में लौटती लहरें /बिजलियों सी कौंधती लहरें/ मछिलियों सी बिछल पड़ती लहरें/बार बार ।

गंध बिम्बः

घ्राण विषयी बिम्ब गंध विषयक अप्रस्तुतों के माध्यम से घ्राण विषयक अनुभूति को उद्धृत करते हैं और उसके समग्र प्रभाव को संवेदना के आधार पर मूर्तिमत्ता प्रदान करते हैं। दृश्य को प्राणवत्ता देने में गंध योजना का सहयोग प्रमाणित होता है। श्रमिक और मजदूर वर्ग तथा उनकी संवेदनाएँ उनकी कविता में सर्वत्र हैं। परिश्रम करने वाले वर्ग की यथार्थ स्थिति का चित्रण करते हुए उन्होंने दृश्य बिंब के जो उदाहरण अपनी कविता के माध्यम से अंकित किया है, वह दृष्टव्य है। धुआँ धुआँ सुलग रहा । जल रहा। धुआँ धुआँ/ ग्वालियर के मजूर का हृदय में।

आस्वाद्य बिम्बः

दृश्य को स्वाद के स्तर पर अनुभव करना तथा कराना कल्पना व्यापार का सबसे कठिन कार्य है। शमशेर के काव्य में स्वाद संवेदना की कलात्मक अभिव्यक्ति हुयी है।

हल्की मीठी चा सा दिन /मीठी चुस्की सी बातें /मुलायम बाहों का अपनाव।

रूप बिम्बः

कवि अपने भवतिरेक से प्रेरित होकर काव्य की सृष्टि करता है। काव्य की सफलता यही है कि वह वर्ण्य विषय संबंधी बिम्बों को पढ़ते ही आंखों के सामने चित्र से नाचने लगते हैं। रोमांटिक कविताओं में रूप बिम्ब की प्रधानता होती है। नील जल में या किसी की /गौर झील मिल देह जैसे हिल रही हो।

स्पर्श बिम्बः

करुणा जन्य वात्सल्य ही स्पर्श बिम्ब का आधार है, जिसके अंतर्गत मन; स्थितियों, शारीरिक संबंधों या क्रिया व्यापारों की अभिव्यक्ति हुयी है। इसलिए इसे आंगिक अथवा जैविक बिम्ब भी कहते हैं।

एक नीला आईना /बेठोस सी यह चांदिनी।

दृश्य बिम्बः

शमशेर की रचनाओं में दृश्य बिम्बों का बाहुल्य है। प्रकृति चित्रों में मानवीकरण की प्रवृत्ति दृश्य बिम्बों को मजबूत बनाती है। इनमें हवा, चाँद, तारे, पर्वत, साँझ,घास, धूप आदि के चित्र अकेलेपन को व्यक्त करते हैं। उनके कई बिम्ब मनःस्थितियों के द्योतक हैं।

धूप कोठरी के आईने में खड़ी /हंस रही है/ गरीब के हृदय टंगे हुये/ कि रोटियाँ लिए निशान।

स्मृति बिम्ब;

मानव अतीत की स्मृतियों के प्रति ज्यादा सजग रहता है। अतीत कल्पना का लोक है, एक प्रकार का स्वप्न लोक है । सुखी दिनों के साथ दुख पूर्ण दिनों की याद भी दिलाती हैं।

आज कहाँ वे गीत जो कल थे/ गलियों– गलियों में गाये गए।

अलंकृत बिम्बः ये कल्पना प्रसूत होते हैं और काव्य में कलात्मक सौन्दर्य का सृजन करते हैं। शमशेर कि कविता में भौतिक प्राकृतिक दोनों तरह के दृ श्यों दृबिम्बों की अभिव्यक्ति हुयी है, जिनसे मानसिक विनोद या रस का अनुभव होता है। कविता में बिम्ब भिन्न भिन्न कोणों पर रखे गए दर्पण जैसे होते हैं। ज्यों ज्यों कविता का विषय विकसित होकर आगे बढता है, वह अपने विविध रूपों में इन दर्पणों में प्रतिच्छायित होता है। ये दर्पण जादू के दर्पण होते हैं, वे केवल विषय–वस्तु को ही प्रतिच्छायित नहीं करते , वे इसे नाम और रूप भी प्रदान करते हैं।

सूर्य मेरे पुतलियों में स्नान करता /केश वन में झिल मिलाकर डूब जाता /स्वप्न सा निस्तेज गत चेतन कुमार।

बिम्बों के द्वारा कविता में अपनी बात कहने का एक और फायदा यह है कि हम संक्षिप्तता पर बल देकर अनावश्यक शब्द जंजाल से मुक्ति पाते हैं।

"लगी हो आग जंगल में कहीं जैसे/ हमारे दिल सुलगते हैं,

..../सरकारें पलटती है जहां/ हम दर्द से/करवट बदलते हैं।"

मनोदशाओं की अभिव्यंक्ति के लिए कविता में नई लय का सृजन कर सकते हैं। मुक्ता छंद में कवि की वैयक्तिकता अधिक अच्छील तरह अभिव्यहक्तह हो सकती है। शमशेर की कविता 'क्षीण नीले बादलों में' ढलती शाम और गहराती रात का चित्र है। देखने वाले की मनःस्थिति का अंकन भी साथ–साथ है–

"बादलों में दीर्घ पश्चिम का/आकाश/मलिनतम/ढके पीले पांव/जा रही रूग्णा संध्याद।

नील आभा विश्व. की/हो रही प्रति पल तमस/विगत सन्यो की/रह गई है /एक खिड़की खुली।

बिंब प्रयोग के विषय में शमशेर ने सीमित या मर्यादित होकर बिंबों का प्रयोग नहीं किया अपितु भिन्न प्रकार के बिंबों का प्रयोग उन्होंने किया है। ऐंद्रिय और स्मृति बिंबो के प्रयोग में कवि को अत्यधिक सफलता प्राप्त हुई है। ऐंद्रिय और स्मृति बिंबों को उन्होनें कहीं–कहीं जो शास्त्रीय रूप अभिव्यक्त किया

है, उससे उनकी काव्य भाषा बडी ही समृध्द और संपन्न लगती है। वैसे भी इस कवि का भाषा पर जबरदस्त अधिकार है।

कुल मिलाकर, शमशेर के काव्य का उत्तरार्ध बिम्ब–बहुल है। ये कवि की अनुभूति को गहराई और ऊँचाई प्रदान करते हैं। उनके काव्य में जहाँ एक ओर वस्तुपरक यथार्थ बिम्ब है वहीं दूसरी ओर रोमानी यानी स्वच्छन्द बिम्बों की प्रकल्पना भी की जा सकती है। उनकी कविता में प्रकृति के उपादानों और अनुभूतियों का बड़ा अनूठा तालमेल है। कहीं–कहीं साहचर्य–समन्वय भी व्यक्त हुआ है। कल्पना–शक्ति का सौष्ठव देखते ही बनता है। कलागत उपलब्धि के अर्थ में शमशेर की कविता अपना विशिष्ट मूल्य रखती है। इस दृष्टि से उनके काव्य में वाह्य उद्दीपन (शब्द–स्पर्श–रस और गंध बिम्बों) के निर्माण की प्रक्रिया बड़ी सूक्ष्म है। जहाँ बिम्बात्मकता नहीं है, वहाँ गद्यात्मकता सी आ गयी है। शमशेर के बिम्ब–विधान की विशेषता है कि उनकी कविताओं में वर्ण्य–विषय और बिम्ब अनायास एक दूसरे पर आरोपित हैं। भाषा की सार्थक शक्ति–सहयोग पाकर वे पर्याप्त प्रभावशाली और आकर्षक बन गए हैं। उनके बिम्बों–प्रतीकों में विविधता, अर्थगर्भिता और प्रयोगधर्मिता है जो उन्हें छायावादोत्तर विशिष्ट रचनाकारों में एक नयी पहचान देती है।

"शमशेर बहादुर सिंह आधुनिक भारतीय कविता के निर्माताओं में से एक थे, उन्होंने पूरी अर्धशती हिन्दी साहित्य की श्रीवृद्धि में समर्पित की। वे अपनी प्रयोगधर्मिता, विशिष्ट बिम्ब विधान और गहन मानवीयता के लिए स्मरण किए जाएँगे।

सन्दर्भ

1. *आधुनिक हिन्दी कविता में शिल्प – कैलाश वाजपेयी, भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली–2011, पृ.64*
2. *शमशेरः कवि से बड़े आदमी – सं० महावीर अग्रवाल, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली–पृ.181*
3. *शमशेर की प्रतिनिधि कवितायें, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली पृ. 201*
4. *काल तुमसे होड़ है मेरी, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली पृ. 164*
5. *चुका भी हूँ मैं नहीं,प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली पृ. 72*
6. *कविता की तीसरी आँख – प्रभाकर श्रोत्रिय, अमन प्रकाशन कानपुर, पृ.68*
7. *गिरिजा कुमार माथुरः काव्य दृष्टि और अभिव्यंजना –डॉ. राहुल, भारतीय ज्ञानपीठ, प्रकाशन दिल्ली, पृ.132*

मङ्गलम् -वर्ष 13(02) भाग-XXV, अगस्त 2022
ISSN-0976-8149 पृ.-130-136

कोरोना महामारी के सन्दर्भ में सोशल मीडिया की भूमिका : एक विश्लेषण

चेतना मिश्रा *

सारांश

21वीं शताब्दी की दुनिया सोशल मीडिया की है, यह कहना अतिशयोक्ति नही होगी। वर्तमान दौर में सोशल मीडिया जनमानस की जिन्दगी का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बन चुका है। भारत जैसे देश में जहाँ चुनावी लोकतंत्र है, इधर कुछ वर्षों में सोशल मीडिया सबसे बड़ी ताकत के रूप में उभरा है। लोगों के वैचारिक अभिव्यक्ति के सशक्त माध्यम के रूप में सोशल मीडिया सामने आया है। प्रत्येक आयु एवं वर्ग को प्रत्येक मुद्दे पर अपनी बेबाक राय रखने का मौका सोशल मीडिया के माध्यम से ही मिला है। गौरतलब है कि इन्टरनेट के विकास के साथ ही सोशल नेटवर्किंग के जरिये इस नए प्रभावशाली मंच का उदय हुआ । यह एक ऐसा मंच है जहाँ राजनीतिक, सामाजिक, अकादमिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं मनोरंजन के विषयों पर सामूहिक विचार –विमर्श प्रभावशाली तरीके से किया जाता है।सोशल मीडिया एक ऐसा प्लेटफ़ॉर्म है,जिसके माध्यम से हम एक दूसरे से आसानी से जुड़ते हैं,यह इसकी सबसे बड़ी खूबी है। वैसे तो इस पर अक्सर यह आरोप लगता है कि यह वक़्त का दुश्मन है। काम का वक़्त हो तो नोटिफिकेशन अपनी ओर खींच लेते हैं । कुछ लोग इसका गलत इस्तेमाल भी करते हैं, लेकिन कोई चाहे तो इसका बेहद उपयोगी इस्तेमाल कर सकता है । कोरोना के दौर में यह बात साबित भी हो गई । सोशल डिस्टेंसिंग और लॉकडाउन तथा दूसरों के साथ सीमित संपर्क के दौर में, सोशल मीडिया लोगों को दुनिया से जोड़ने का एक अति महत्वपूर्ण साधन बनकर उभरा । चूँकि महामारी के इस दौर में जहाँ लोगों का घर पर ही रहना और दूसरों से व्यक्तिगत दूरी ही बचाव था,अतः अपने दोस्तों, रिश्तेदारों एवं दूर रह गए परिवारजनों से सोशल मीडिया द्वारा ही जुड़ा रह पाना संभव हुआ । महामारी के दौरान सोशल मीडिया के उपयोग में बड़े पैमाने में बढ़ोतरी दर्ज की गई । महामारी के इस दौर में सोशल मीडिया लोगों के सामने आशा की किरण लेकर आया । ऐसे अनगिनत नाम हैं जिनकी वजह से यह उम्मीद बंधी कि सोशल मीडिया के जरिये मदद की आस लगाए बैठे लोग निराश नही हुए । प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य कोरोना काल में सोशल मीडिया के प्रयोग के सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों पहलुओं का अध्ययन करना है।

मूल शब्द– चुनावी लोकतंत्र, सोशल मीडिया, वैचारिक अभिव्यक्ति, नोटिफिकेशन, कोरोना काल।

प्रस्तावना

आवश्यकता ही आविष्कार की जननी है। सभी खोजों का एक मात्र उद्देश्य जनकल्याण होता है । क्लाशिनकोव एवं डायनामाइट इसके उदाहरण

***असिस्टेंट प्रोफेसर राजनीति विज्ञान विभाग, श्रीमती शारदा जौहरी नगरपालिका कन्या महाविद्यालय, कासगंज (उ०प्र०)**

हैं। सभ्यता का विकास सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक बदलाव को दर्शाता है । मीडिया के नए अवतार "सोशल मीडिया" की आम एवं सार्वभौमिक स्वीकारोक्ति इस खोज की सार्थकता को बताने के लिए काफी है। सोशल मीडिया मूल रूप से किसी भी मानव संचार अथवा जानकारी एवं सूचनाओं के आदान – प्रदान से जुड़ा है, जो कि टेबलेट, कंप्यूटर या मोबाइल आदि के माध्यम से प्राप्त की जाती है । ऐसी अनेक एप्स और वेबसाइट्स हैं, जो इसे संभव बनाती हैं । आज संचार का सबसे बड़ा माध्यम सोशल मीडिया बन रहा है एवं तेजी से लोकप्रिय होता नजर आ रहा है । सोशल नेटवर्किंग साइट्स विचारों, सूचनाओं एवं समाचार आदि को कम समय में तेजी से एक दूसरे से साझा करने में सक्षम बनाता है । अगर हम कोरोना काल की बात करें, तो वर्ष 2020 में कोरोना की पहली लहर आने के उपरान्त लॉकडाउन लगने के बाद, आम लोगों को, मजदूर वर्ग आदि को खाने – पीने की आवश्यक जरूरतों की कमी की समस्या का सामना करना पड़ा द्य सोशल मीडिया के जरिये लोगों ने एक– दूसरे की मदद की, जरुरतमंदों तक खाने – पीने की चीज़े पहुंचाई । जिन लोगों को चिकित्सीय आवश्यकता थी उनकी भी मदद करने की भरपूर कोशिश सोशल मीडिया के जरिये की गई । इसके इतर किसी भी सिक्के के दो पहलू होते ही हैं, सकारात्मक एवं नकारात्मक । कोरोना काल में सोशल मीडिया का नकारात्मक पहलू भी देखने को मिला।

ऑनलाइन परामर्श एवं सहायता

लखनऊ में रहने वाले 65 साल के एक व्यक्ति ने सोशल मीडिया पर अपना हाल बताते हुए मदद की गुहार की, उन्होंने लिखा कि वे खुद में कोविड –19 के लक्षण महसूस कर रहे हैं और टेस्ट नतीजों का इंतजार कर रहे हैं । ऐसे न जाने कितने दिल दहला देने वाले संदेशों के साथ भारत में कोरोना की दूसरी लहर जब आई, तो सरकार की जितनी तैयारियां थी वह बिल्कुल ही नाकाफ़ी साबित हुई। यहाँ तक कि प्रधानमंत्री जी ने स्वयं "मन की बात" कार्यक्रम को बाद में स्वीकार किया कि देश में अचानक से आई ऑक्सीजन की माँग अप्रत्याशित थी,जिसकी कमी हम लोग नही पूरा सके । पहली वेब के बाद हमारे इंफ्रास्ट्रक्चर जो थे, उसमें काम होने चाहिए थे लेकिन वह हुए नही । इसके अलावा सरकार की तरफ से कई नाकामियाँ उजागर हुई जिसको हम कायदे से गिना सकते हैं कि यह सेकेंड वेब को बढ़ाने के लिए जिम्मेदार थे –

जिसमें पहला था, पाँच राज्यों में विधानसभा चुनाव कराना । दूसरा था, उत्तर प्रदेश में पंचायत चुनाव कराना । तीसरा था, हरिद्वार में महाकुम्भ की इजाज़त देना और बिना किसी तैयारी के इतनी भीड़ इकटठे होने देना जो कोरोना को बढ़ाने के लिए जिम्मेदार माने गए । रही सही कसर हमारे यहाँ

वैक्सीन के न होने और ऑक्सीजन की सप्लाई लोगों तक न पहुँचने की वजह, यहाँ तक उसकी उपलब्धता भी नही होने के कारण लाखों लोगों की जानें गई। सरकार की संवेदनशीलता का आलम यह था कि जब फ़रवरी में हमारे देश के वैज्ञानिक सरकार से कह रहे थे कि देश में दूसरी वेब आ सकती है,तब भी सरकार इससे बेखबर ही रही और चुनाव में व्यस्त हो गई । किसी भी प्रकार से इंफ्रास्ट्रक्चर पर कोई ध्यान नही दिया गया । ऐसे समय में जब अप्रैल और मई का महीना ऐसे लग रहा था कि भारत में चारों तरफ हाहाकार मचा हुआ था तो लोग आगे आए, लोगों ने एक दूसरे की मदद करने की ठानी और उपाय निकालें । इसका परिणाम यह हुआ कि जो सोशल मीडिया कभी सरकार की आँखों में किरकिरी बनी रहती थी,एक विरोध की आवाज उठाने के लिए जाना जाता था वही सोशल मीडिया लोगों की जान बचाने के लिए बहुत बड़ा हथियार बना।

सोशल मीडिया के माध्यम से लोगों द्वारा कई छोटे – छोटे हेल्प ग्रुप बनाए गए, ऑक्सीजन की डिमांड जहाँ भी होती थी उसी सोशल मीडिया पर मरीज के और तीमारदार के नंबर शेयर किए जाते थे और अपने नजदीकी ग्रुप में उसकी अपील की जाती थी कि कृपया इस मरीज को इस हॉस्पिटल में ऑक्सीजन की आवश्यकता है,उसकी पूर्ति की जाए । यहाँ तक कि जब अचानक से ऑक्सीजन की डिमांड बढ़ी तो उसके दाम दूने – तिगुने वसूले जाने लगे, तब भी लोग आगे आए और सरकार पर लगातार सोशल मीडिया के माध्यम से कालाबाजारी को रोकने का दबाव बनाया गया ,जिससे कालाबाजारी को रोकने में मदद मिली। इसके अलावा इंफ्रास्ट्रक्चर को सुधारने का एवं विदेशी मदद माँगने के लिए भी सरकार पर लगातार सोशल मीडिया के माध्यम से दबाव बनता रहा, जिसमें हम कामयाब भी हुए और तो और सोशल मीडिया ने इस तरह की भूमिका अदा की , जो व्यक्ति कभी किसी को देखा भी नही था, जानता नही था, उसके क्षेत्र का नही था, बावजूद इसके सभी लोगों ने आगे आकर एक दूसरे के मदद के लिए प्रयास किया । यह सोशल मीडिया का ही परिणाम था कि इतनी बड़ी महामारी में कई लोगों की जान बचाई जा सकी, न केवल उचित समय पर उनको ऑक्सीजन की उपलब्धता प्रदान की गई बल्कि रेमेडीशिविर नामक दवाई, इंजेक्शन, सुरक्षा उपकरण, एम्बुलेंस, लोगों के लिए प्राइवेट से लेकर सरकारी हॉस्पिटलों में कहाँ जगह खाली है, कितने बेड खाली हैं, यहाँ तक की सूचनाएं सोशल मीडिया के माध्यम से दी जाती थी।

यह अलग बात है कि कुछ लोग सोशल मीडिया का इस्तेमाल सिर्फ मनोरंजन के लिए करते हैं लेकिन कोरोना काल के इस दूसरे लहर में सोशल

मीडिया लोगों के लिए जीवनदायनी, जीवनसंगिनी बनकर आई । जितना जिससे हो सका एक दूसरे की मदद के लिए लोगों ने बढ़ चढ़कर हिस्सा लिया । कई लोग तो ट्विटर, फेसबुक के माध्यम से रात – रात भर जगकर मेसेज फॉरवर्ड करते थे, एक शहर से दूसरे शहर भेजते थे । यहाँ तक कि जो लोग विदेशों में भी थे, वह भी लगातार भारतीय समय के हिसाब से सक्रिय रहे । इन सबका ही परिणाम था कि सरकार के लापरवाही के कारण जो संकट खड़ा हुआ था, उस पर काफी हद तक विजय पाया गया ।

सोशल मीडिया और हेल्प ग्रुप दृ इलाहाबाद विश्वविद्यालय के छात्रों द्वारा कोरोना की प्रथम लहर में लॉकडाउन में " इलाहाबाद विश्वविद्यालय परिवार " ग्रुप फेसबुक पर बनाया गया । इस ग्रुप में विश्वविद्यालय परिवार के लगभग 55 हजार मेम्बर , जो इस संस्था के अंग हैं या रहें है जुड़े हैं । कोरोना की दूसरी लहर में फेसबुक पर बने इस ग्रुप द्वारा ही " मेडिकल हेल्प ग्रुप", " कोविड हेल्प ग्रुप" बनाया गया । इस ग्रुप के एडमिन स्टूडेंट ,प्रोफ़ेसर, ऑफिसर्स और कुछ मेडिकल के स्टूडेंट हैं । कोरोना महामारी में इस ग्रुप के द्वारा महामारी से प्रभावित लोगों की हर संभव मदद करने का प्रयास किया गया । ग्रुप के मॉडरेटर आलोक यादव जी कहना है कि ग्रुप में मदद वाली पोस्ट को तभी अप्रूव किया जाता था जब पेशेंट के दिए गए नंबर पर कॉल करके वेरीफाई कर लिया जाता था । इस ग्रुप के द्वारा किस हॉस्पिटल में बेड खाली है, ऑक्सीजन सिलेंडर कहाँ उपलब्ध है, इसकी जानकारी के साथ–साथ दवाएँ, राशन, खाना आदि प्रभावित व्यक्ति तक पहुचाने का काम किया जाता था । इसके अलावा लोगों की सुविधा के लिए कोविड इमरजेंसी हेल्पलाइन भी जारी किया गया । ऐसे ही अनेक मेडिकल हेल्प ग्रुप्स बने, जिन्होंने लोगों की हर संभव मदद की।

कोरोना की पहली लहर हो या दूसरी लहर अभिनेता सोनू सूद ने फेसबुक व ट्विटर के जरिये बहुत से मजदूरों एवं जरुरतमंदो को उनके घर तक पहुँचाया । इसके साथ ही लोगों को ऑक्सीजन सिलेंडर एवं दवाएं आदि भी देकर मदद की । ऐसे ही सोनू सूद की तरह भारत के हजारों लोगों ने सोशल नेटवर्किंग साइट्स के जरिये जरूरतमंद लोगों की सहायता की।

सन्देश एवं विडियो कॉल सेवाएँ

लॉकडाउन एवं सामाजिक दूरी के नियमों के लागू होने के बाद सोशल नेटवर्किंग साइट्स के उपयोग में बढ़ोतरी हुई । चूँकि लॉकडाउन की वजह से लोगों का अपने परिवार,दोस्तों एवं रिश्तेदारों से व्यक्तिगत रूप से मिलना संभव नही था, अतः लोगों का सोशल मीडिया जैसे प्लेटफार्म के जरिये अपने करीबियों

से जुड़े रहना संभव रह सका। उदाहरण के लिए,मार्च 2020 के अंतिम माह में फेसबुक के एक विभाग ने कुल मेसेजिंग में 50 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की । इसी तरह व्हाट्सअप्प ने भी 40 प्रतिशत अधिक उपयोग की वृद्धि दर्ज की । इसके अलावा जूम के उपयोग में भी उल्लेखनीय बढ़त दर्ज की गई।

मनोरंजन के रूप में प्रयोग

कोविड – 19 की महामारी से बचाव के लिए जब पूरे देश में लॉकडाउन की स्थिति थी और लोग अपने घर तक में सीमित रह गए थे, तो उस समय में सोशल मीडिया हर लिहाज से बेहतर माध्यम साबित हुआ । सोशल मीडिया के जरिये लोगों ने न सिर्फ अपनी बोरियत दूर करी बल्कि कोविड – 19 को लेकर सकारात्मक विचारों का आदान – प्रदान भी जारी रहा द्यकहने के लिए टिक टॉक,स्नेपचैट आदि मामूली ऐप हैं लेकिन लॉकडाउन के दौरान लोगों ने इसके माध्यम से भरपूर मनोरंजन कर किया हैं । विभिन्न तरीकों से चुटकुले सुनाकर कहकहे लगाने का यह माध्यम इस दौर में खूब पसंद किया गया । फेसबुक, व्हाट्सअप ,ट्विटर, इन्स्टाग्राम आदि भी लोगों के मनोरंजन का माध्यम बना । बच्चें, युवा, बुजुर्ग, महिलाओं आदि सभी ने इन माध्यमों का भरपूर उपयोग किया । लोगों ने खुद के बनाये गए एक से बढ़कर एक व्यंजनों को सोशल मीडिया पर पोस्ट कर खूब वाहवाही लूटी । इसके अलावा गीत गायन, चित्रकारी आदि के भी वीडियो,ऑडियो लोगों ने सोशल मीडिया पर शेयर करके अपना समय का सदुपयोग के साथ ही दूसरों को प्रोत्साहित करने एवं सकारात्मक ऊर्जा का संचार करने का भी कार्य किया है।

जानकारी फैलाना

कोविड –19 के बारें में वैध जानकारी एवं गलत सूचना दोनों फ़ैलाने के लिए संगठनों एवं आम जनता तथा समाचार आउटलेट द्वारा सोशल नेटवर्किंग साइट्स का उपयोग किया गया । सीडीसी, मेडिकल जर्नल एवं स्वास्थ्य देखभाल संगठन तथा डब्लूएचओं फेसबुक, टिकटॉक, गूगल स्कॉलर और ट्विटर के अलावा अन्य कई प्लेटफार्म पर साझेदारी से जानकारी को अपडेट एवं प्रसारित करने का कार्य किया । पेशेवर चिकित्सों ने बारह घंटे की शिफ्ट के ऊपर पीपीई किट में काम करने से उत्पन्न हुए प्रभाव को सोशल मीडिया द्वारा लोगों के सामने रखा । सोशल नेटवर्किंग साइट्स का प्रयोग आम नागरिकों को महामारी की विडियो एवं ऑडियो 'डायरी' प्रदान करने के लिए भी किया गया।

भारत में लॉकडाउन लगने के बाद सभी स्कूल, कॉलेज, कोचिंग सेंटर एवं ऑफिस आदि बंद हो गए । इस दौरान सोशल मीडिया ही वह विशेष

माध्यम बना, जिसके जरिये स्टूडेंट्स घर बैठे ऑनलाइन क्लास ले पाए व ऑफिस के कर्मचारियों को 'वर्क फ्रॉम होम' की सुविधा मिल पाई द्य भारत की पोलिटिकल पार्टीज को भी सोशल नेटवर्किंग साइट्स का सहारा लेना पड़ा एवं कार्यकर्ताओं से जूम एप्प के द्वारा मीटिंग करने में आसानी हुई।

सोशल मीडिया और धोखाधड़ी

देश में आज जहाँ सोशल मीडिया के जरिये लोगों की मदद की जा रही है, ठीक वही इसका प्रयोग समाज सेवा के नाम पर धोखाधड़ी में भी किया जा रहा है । कोरोना काल में सोशल मीडिया पर कुछ लोगों ने फेसबुक पेज व यूट्यूब चैनल बनाये हैं, जहाँ लोगों की भावनाओं के साथ खेल कर गूगल पे, पेटीएम आदि पर पैसे मांगे जा रहें हैं । देश में सोशल नेटवर्किंग साइट्स के माध्यम से एक से बढ़कर एक ठगी के मामले तेजी से हमारे सामने आ रहें हैं। महामारी के नाम पर आज कुछ अराजक तत्व फर्जी वीडियो बनाकर सोशल मीडिया पर डालकर लोगों के साथ भावनात्मक खिलवाड़ कर रहे हैं।

सोशल मीडिया और झूठी ख़बर

कोरोना काल में सोशल मीडिया कुछ अराजक लोगों के लिए अफ़वाह फैलाने का सबसे बेहतरीन माध्यम बन गया । घृणा फ़ैलाने का जरिया बन गया । इसके साथ ही झूठ को प्रचारित करने का भी औजार हो गया है । कोरोना काल में बुद्धिजीवी राजनेता शशि थरूर भी सोशल मीडिया में प्रचारित झूठी ख़बर के झांसे में फंस गए थे उन्होंने पूर्व लोकसभा स्पीकर सुमित्रा महाजन की मौत की झूठी खबर पर ट्वीट कर दी थी । बाद में उन्हें ट्वीट डिलीट करके माफ़ी मांगनी पड़ी। इसके इतर लोग कोरोना से निपटने के लिए कई तरह के गैर वैज्ञानिक नुस्खे भी वायरल कर रहें हैं, जबकि इन नुस्खों के अनेक साइड इफेक्ट्स भी हैं।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि जब कोई देश या समाज किसी महामारी के संकट से गुजर रहा हो, उनके नागरिकों को उस दौरान अपने आचरण पर विशेष ध्यान देना चाहिए । जब हर जगह मौत एवं मातम हो, तो गिद्ध की तरह लाभ लेने के लिए गिरी सोच के साथ ऊँचा उड़ना ठीक नही । इस बुरे दौर में सोशल मीडिया का इस्तेमाल मानवता की भलाई के लिए ही होना चाहिए। कालाबाजारी, घृणा और झूठ फैलाने के लिए नही।

सन्दर्भ

1. *"covid– 19: सोशल मीडिया का उपयोग बढ़ जाता है क्योंकि देश घर के अंदर रहता है", विक्टोरिया न्यूज़। 31 मार्च 2020।*
2. *इवाई, योशिको, "कोविड –19 महामारी के लिए सोशल मीडिया का उपयोग" वैज्ञानिक अमेरिकी ब्लॉग नेटवर्क। 21 अप्रैल 2020।*
3. *सेलेन–जोन्स, रोरी "कोरोनावायरसः फेक न्यूज़ तेजी से फैल रही है" बीबीसी समाचार। 26 फ़रवरी 2020।*
4. *"सोशल मीडिया : कृपया इस समय तो झूठ मत फैलाएं", पंजाब केसरी ऑनलाइन ब्लॉग 30 अप्रैल 2021 www-punjabkesari-in*
5. *http%@@hindi-news18-com@ news@l ifestyle @how &social &media &is&becoming &a&tool&for&goodness&dlnk&3567546*
6. *www-patrika com*

मङ्गलम् -वर्ष 13(02) भाग-XXV, अगस्त 2022
ISSN-0976-8149 पृ.-137-142

ब्रिटिश उपनिवेशवाद और मुंशी प्रेमचन्द

*डॉ० अजय सिंह चौहान **

प्रत्येक रचनाकार अपनी परंपरा, अपनी संस्कृति और समाज प्रदत्त वातावरण से ही अपनी यात्रा आरंभ करता है। उसकी निरंतर विकसित होती वैचारिकता, चेतना और दृष्टि संपन्नता उसे उसकी सीमाओं से मुक्त कर तेजी से उस ऊंचाई पर ले जाती है जहां से वह संपूर्ण समाज का विश्लेषक करता है। वह इतिहास की डोर थामे अपने समय को देखता, परखता और व्याख्यायित करता है। प्रेमचंद्र राष्ट्र निर्माता पहले थे साहित्यकार बाद में। वह सामाजिक विचारक पहले थे लेखक उसके बाद में। प्रेमचंद की रचना शक्ति का सबसे बड़ा आयाम था उनकी प्रामाणिकता एवं विश्वसनीयता। भारत के आत्मा की सच्ची तस्वीर यदि किसी एक हिंदी कथाकार में मिल सकती है तो वह हैं–मुंशी प्रेमचंद। 'प्रथमतरू उन्होंने हिंदी कथा साहित्य को मनोरंजन के स्तर से उठाकर जीवन के साथ सार्थक रूप में जोड़ने का महती उपक्रम किया है। चारों ओर फैले जीवन और अनेक सामाजिक समस्याओं– पराधीनता, जमीदारों, पूंजीपतियों, और सरकारी कर्मचारियों द्वारा किसानों का शोषण, निर्धनता, अशिक्षा, अंधविश्वास, दहेज की कुप्रथा, घर और समाज में नारी की स्थिति, वेश्याओं की जिंदगी, वृद्ध विवाह, विधवा समस्या, सांप्रदायिक वैमनस्य, अस्पृश्यता, मध्यवर्ग की कुंठाएं आदि ने उन्हें उपन्यास लेखन के लिए प्रेरित किया था।'[1] उपनिवेशवाद किसी संपन्न और प्रभुत्वशाली राष्ट्र द्वारा अशिक्षित, गरीब एवं असंगठित देश पर आधिपत्य जमा कर उसके चतुर्दिक शोषण और अन्याय की पराकाष्ठा माना गया है।

भारत में ब्रिटिश उपनिवेशवाद की स्थापना 1757 ईस्वी से मानी जाती है। जब प्लासी युद्ध के बाद इंग्लैंड ने पश्चिम बंगाल में ईस्ट इंडिया कंपनी की स्थापना की। 'भारत में ब्रिटिश उपनिवेशवाद मुख्यतः तीन चरणों से गुजरा। यह विभिन्न चरण भारत के आर्थिक अधिशेष को हड़पने के विभिन्न तरीकों पर आध ाारित है। संक्षेप में इन तीन चरणों को वाणिज्यिक (Commercial) औद्योगिक (प्दकनेजतपंस) तथा वित्तीय पूंजीवाद का नाम दिया जाता है। 17वीं और 18वीं शताब्दी के ब्रिटिश उपनिवेशवाद का मुख्य उद्देश्य भारत के साथ व्यापार तथा भारत की लूट था। 19वीं शताब्दी में भारत का प्रयोग ब्रिटेन में बनी हुई औद्योगिक वस्तुओं के लिए मुख्य बाजार के रूप में किया गया। हाला की लूट और व्यापार का पुराना तरीका भी बरकरार रहा। 20वीं शताब्दी में भारत में स्थित ब्रिटिश उद्योगपतियों द्वारा भारत में पूंजी विनियोग की प्रक्रिया प्रारंभ हुई, जिससे भारतीय श्रमिकों का बड़े पैमाने पर शोषण प्रारंभ हुआ।'[2] बड़े पैमाने में

* *असिस्टेण्ट प्रोफेसर, हिन्दी–विभाग फीरोज गांधी कालेज, रायबरेली (उ०प्र०)*

किसानों को मजदूर से बंधुआ मजदूर बनाकर बड़ी–बड़ी फैक्ट्रियों में जबरन शोषण कराया जाने लगा। इस दौर में ब्रिटिश उपनिवेशवाद का जो धृणित और अत्याचारी चेहरा हमारे सम्मुख आता है वह सचमुच हमें बहुत भयावह और हर प्रकार की आजादी से वंचित रखने वाला दिखा।

प्रेमचंद के साहित्य को संदर्भित करते हुए इस उपनिवेशवादी व्यवस्था का भारतीय समाज पर, कृषि व्यवस्था, उत्पादन, कृषक की गरीबी व ऋण ग्रस्तता, भूमि का विखंडिकरण, कृषि का वाणिज्यकरण, विभिन्न सामाजिक वर्गों, सामाजिक जीवन, शिक्षा, साहित्य एवं संस्कृति पर पड़े प्रभाव का विश्लेषण करेंगे। 'भारत की अर्थव्यवस्था और उसके सामाजिक जीवन को किसी भी विजेता ने इतना अधिक प्रभावित और परिवर्तित नहीं किया जितना कि ब्रिटिश साम्राज्यवादी सरकार ने किया। अंग्रेजों से पहले जो भी विजेता आए थे उन्होंने केवल राजनीतिक दृष्टि से वंश परिवर्तन ही किया और आर्थिक व्यवस्था के सामाजिक गठन एवं संबंधों को पूर्णतया परंपरागत भारतीय व्यवस्था के अनुरूप ही रहने दिया। साथ ही वे स्वयं भी हिंदुस्तान में समा गए कृ–– लेकिन अंग्रेज पहले ऐसे विजेता थे, जिन्होंने प्रारंभिक समाज को तोड़कर प्राचीन उद्योगों को तो समाप्त किया ही साथ ही प्रारंभिक समाज में जो कुछ उच्चतर था उसको भी समाप्त कर दिया।[3] अंग्रेजों के शोषणकारी, दमनकारी और भेदभावमूलक नीतियों के कारण भारतीय शिल्पकार एवं दस्तकार संकट में आ गए और भूमि पर दबाव बढ़ने के कारण ग्रामीण अर्थव्यवस्था भी बिल्कुल चरमरा गई। भूमि की स्थाई बंदोबस्त व्यवस्था लागू कर जमीदारों को अनाप–शनाप लगान वसूलने की खुली छूट दे दी गई। लगान अदा न करने पर किसानों को उनकी पुश्तैनी जमीन से बेदखल करने का क्रूर खेल भी शुरू हो गया।

किसानों की त्रासदी की सबसे बड़ी वजह ब्रिटिश लगान की शोषणकारी व्यवस्था थी। किसान लगान अदा करते– करते तबाह हो जाता था और वह शीघ्र ही किसान से मजदूर बन जाता था। लगान की इस कुत्सित व्यवस्था पर प्रेमचंद गोदान में लिखते हैं–'धनिया को अपने विवाहित जीवन के इन 20 वर्षों में उसे अच्छी तरह अनुभव हो गया था कि चाहे कितनी ही कतर व्यौत करो कितना ही पेट तन काटो चाहे एक एक कौड़ी को दांत से पकड़ो मगर लगान बेबाक होना मुश्किल है।'[4] 'जीवन में तो ऐसा कोई दिन ही नहीं आया कि लगान और महाजन को देकर कभी कुछ बचा हो।'[5] प्रेमचंद्र ने गोदान में होरी के माध्यम से कृषक के मजदूर बनने की प्रक्रिया को मार्मिक अंदाज में प्रस्तुत किया है यह उदाहरण संपूर्ण भारतीय किसान जीवन की त्रासदी का जीवन्त प्रमाण है। होरी गंडासे से ऊँख के टुकड़े कर रहा है। अब वह दातादीन की मजदूरी करने लगा है। किसान नहीं मजूर है। दातादीन से अब उसका पुरोहित

जजमान का नाता नहीं मालिक मजदूर का नाता है। इधर महीनों से उसे पेट भर भोजन न मिलता था। प्रायः एक जून तो चने पर ही काटता था। दूसरे जून भी कभी आधा पेट भोजन मिला कभी कड़ाका हो गया।'[6] कृषक और कृषि की दुर्दशा का कारण केवल ब्रिटिश औपनिवेशिक सरकार की दोगली नीतियां ही नहीं थी बल्कि वह औद्योगिक नीति भी जिम्मेदार थी जो अपने साथ किसान की महात्रासदी को लेकर आई। अब भारत में जो छोटे–मोटे ग्रामीण क्षेत्रों में कुटीर उद्योग चल रहे थे वे पूर्णतया बंद हो गए। इधर दूसरी ओर ब्रिटेन में औद्योगिकरण अपने पूरे जोरों पर था, अतः उद्योगों को कच्चे माल की आवश्यकता थी जिसको पूरा करने के लिए उसने भारतीय कृषकों एवं उनकी कृषि क्षमता का भरपूर मनमाने ढंग से दोहन किया। अभी तक जो किसान गांव में ही आपस में वस्तुओं के आदान–प्रदान से अपनी जरूरतों को पूरा कर लेता था, अब उसे इस औद्योगिकरण ने रोकड़ का लालच दिया, इसलिए किसान भी उन फसलों को उगाने के लिए मजबूर होने लगा, जिसका बाजार में क्रय–विक्रय हो सके और रोकड़ मिल सके। इस तरह उत्पादन के स्वरूप और प्रकृति में आमूलचूल परिवर्तन होते गए और भारत की पारंपरिक कृषि व्यवस्था और सामाजिक ताना–बाना छिन्न–भिन्न होता गया।

प्रेमचंद्र ने अपने उपन्यास रंगभूमि में कृषि की वाणिज्यकरण पर चर्चा की। यहां सूरदास खेत में तंबाकू की फैक्ट्री लगाने का विरोध करता है। पशुओं के चारागाह के लिए अपनी जमीन छोड़ रखी थी, लेकिन अंग्रेजों ने जोर जबरदस्ती से यहां तंबाकू की फैक्ट्री लगा दी है। सिगरेट की फैक्ट्री लगने के बाद इसके क्या दुष्परिणाम सामने आए इसका वर्णन प्रेमचंद गजधर के माध्यम से उजागर करते हैं –'विद्याधर को कितना पढ़ाया लिखायाकृ–––––––– आशा थी कि चार पैसे कमाएगाकृ––––––सो अब रोज वहां जाकर जुआ खेलता है। मुझसे बहाना करता है कि वहां एक बाबू के पास काम सीखने जाता हूं कृ ––––यह कारखाना क्या खुला हमारी तबाही आ गई। फायदा जरूर है चार पैसे की आमदनी है पहले एक ही खोंच न दिखता था अब 33 बिक जाते हैं लेकिन ऐसा सोना किस काम का जिससे कान फटे।'[7] भारतीय किसान हमेशा से संतोषी एवं धार्मिक प्रकृति का रहा है। वह लाभ के लिए नहीं बल्कि शुभलाभ के लिए तत्पर रहता है, उसे मालूम है कि गलत ढंग से अर्जित अनाप–शनाप कमाई व्यर्थ है, शायद सिगरेट फैक्ट्री खोलने के बजाय गांव के बच्चों को शिक्षित करने के उद्देश्य से विद्यालय खोलने हेतु जमीन की मांग की गई होती तो सूरदास के साथ–साथ पूरा गांव खुशी–खुशी जमीन दे देता।

ब्रिटिश शासन काल प्रारंभ होने से पहले भारत मुख्य रूप से कुटीर उद्योग के विकास का बहुत बड़ा केंद्र था। जिसकी प्रसिद्धि विश्व के कोने–कोने

तक थी। इसके अंतर्गत लोहार, बढ़ाई, जुलाहे, कुम्हार, नाई, धोबी आदि आते थे। परंतु औपनिवेशिक व्यवस्था ने इन सब पर पूरी तरह लगाम लगा दिया था। कारण यह था किश्रेलों की स्थापना तथा यातायात के सुगम और सस्ते साधनों के विकास से गांव में भारतीय और विदेशी मशीनों द्वारा निर्मित माल आसानी से तथा सस्ते दामों पर उपलब्ध होने लगा। दूसरा मुख्य कारण भारतवर्ष में आधुनिक उद्योगों का पल्लवित होना था। 19वीं शताब्दी के मध्य में मशीनों द्वारा निर्मित सस्ते कपड़े की उपलब्धि से ग्रामीण हथकरघा उद्योग पर बुरा प्रभाव पड़ा। ग्रामीण उद्योगों के ह्रास का एक अन्य कारण यह भी था कि भारत में अनेक अकाल पड़े।'[8] इसके फलस्वरूप वे सभी मजदूरी करने के लिए विवश हुए और पारंपरिक कुटीर उद्योग नष्ट होते चले गए। मुंशी प्रेमचंद ने इस पीड़ा को गोदान में व्यक्त किया है 'उस दिन बाजार में चार पांच सौ मजदूरों से कम न थे। राज और बढ़ाई और लोहार और बेलदार और खाट बुनने वाले और टोकरी बुनने वाले और संगतराश सभी जमा थे।'[9] भारतीय हस्तशिल्प ब्रिटेन से आयात किए जाने वाले मशीन निर्मित सस्ते सामानों की प्रतिस्पर्धा का सामना नहीं कर सके, परिणाम स्वरुप हस्तशिल्प के पतन से बड़े पैमाने पर बेरोजगारी की समस्या उत्पन्न हो गई।

अंग्रेजों ने अपने शोषणकारी और दमनकारी नीतियों को रेल लाइन विस्तार के साथ और अधिक बढ़ा दिया। अब देश के कोने–कोने से भारतीय माल रेल के माध्यम से बंदरगाह होते हुए विदेशों में आसानी से जाने लगा। बाजार की जरूरत के अनुसार भारतीय किसानों से जबरन उन्हीं वस्तुओं का उत्पादन कराया जाने लगा जिसकी विश्व बाजार में मांग थी। इस प्रकार हमारी परंपरागत कृषि व्यवस्था चरमरा गई। 'औपनिवेशिक व्यवस्था में रेल डाक तार आदि की स्थापना के माध्यम से भारतीय जनता में यह भ्रम पैदा किया गया कि वह उनके आवागमन और संचार व्यवस्था को मजबूत कर रहे हैं बल्कि यह बिल्कुल निराधार था। वास्तव में रेल, डाक, तार आदि की स्थापना में अंग्रेजों का वयक्तिक हित साधन था। भारत के कोने कोने से कच्चे माल की ढुलाई के लिए तथा राष्ट्रीय आंदोलनों को दबाने के लिए त्वरित कार्यवाही हेतु सेना और पुलिस को मुख्य स्थान तक पहुंचाने के लिए रेल आज परिवहन के त्वरित साधन बनाए गए। आर्थिक लाभ के लिए रेल, तार आदि की व्यवस्था करके एक राष्ट्रीय बाजार की स्थापना की गई। देसी रियासतों तथा सेनाओं को नष्ट करके राजा महाराजाओं को पंगु बना दिया गया।'[10] इस व्यवस्था ने समाज के प्रत्येक वर्ग को प्रभावित किया था। सामाजिक वर्गों का निर्धारण उनकी उत्पादन व्यवस्था के आधार पर किया जाने लगा। इस व्यवस्था की देन के चलते कुछ नए वर्ग जैसे सूदखोर वर्ग, पूंजीपति वर्ग, बुद्धिजीवी वर्ग, मध्यम वर्ग, मजदूर वर्ग पैदा हो

गए। इन वर्गों को ब्रिटिश उपनिवेशवाद ने लोकहित रक्षक के बजाए मशीन बना कर छोड़ दिया।

मुगल काल से लेकर ब्रिटिश काल तक चली आ रही जमीदारी व्यवस्था एक राजनैतिक कुप्रथा बन गई थी। जमींदार अपने क्षेत्र की भूमि का संपूर्ण स्वामित्व अपने पास रखता था। कालांतर में जमीन पर मेहनत कर अनाज उगाने वाले किसान जमीदारों के अंधाधुंध कर उगाही के शिकार बनते चले गए। अंग्रेजों ने जमीदारों को राजा यानी स्वामी और किसानी करने वालों को उसकी प्रजा मान लिया था। जमीदार जनता की लूट को हुक्काम तक पहुंचाने के लिए गरीब जनता का शोषण करते थे और उसी में से अपनी शान शौकत को भी बढ़ाते थे। प्रेमचंद ने गोदाम एवं रंगभूमि में जमीदारों का किसानों के प्रति शोषण के रवैये को इस प्रकार उजागर किया है–'जमींदार अपने असामियों को लूटने के लिए मजबूर हैं अगर अफसरों को कीमती डालियां ना दें तो बागी समझे जाएं, शान से ना रहे, तो कंजूस कहलाए।'[11] जमीदारों के ऊपर अंग्रेज अफसरों का लगान वसूलने के लिए पर्याप्त दबाव रहता था। रंगभूमि के एक पात्र राजा साहब के शब्दों में 'इसी तरह जमीदारों का भी हाल समझ लो उनकी जान को भी सैकड़ों रोग लगे हुए हैं हाकिमों को रसद पहुंचाओ, उनकी सलामी करो, आम लोगों को खुश रखो, तारीख पर मालगुजारी ना चुका दे तो हवालात हो जाए, कुड़की आ जाए।'[12] स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि ब्रिटिश औपनिवेशिक कुप्रथा ने एक ऐसी अमानवीय मनुष्य विरोधी व्यवस्था को जन्म दिया जिसके कारण जमीदारी व्यवस्था आई और उसने संपूर्ण भारतीय किसानों में एक अराजकता का माहौल पैदा कर दिया, जिसके परिणाम स्वरूप भारत में करोड़ों लोग भुखमरी की दशा में पहुंच गए।उत्तरोतर उनके हालात और अधिक बद से बदतर होते गए।

वस्तुतः प्रेमचंद मानवतावादी लेखक हैं। उनके लिए गांधीवाद या साम्यवाद पर कोई दुराव नहीं है बल्कि उनके विचारों में इनकी झलक जगह जगह मिल जाती है। प्रेमचंद ने सच्चाई और ईमानदारी को मनुष्य का सबसे बड़ा धर्म माना है। वे मूक जनता के पैरोकार थे। उद्योगपतियों, पूंजी पतियों, जमीदारों, सूदखोरों के खिलाफ जनमत तैयार करने में वे सदैव आगे रहे हैं। अपनी रचनाओं में वह इन सभी शोषकों की जमकर खबर लेते हैं और गांधीवादी विचारों के साथ इन सब के विरुद्ध आंदोलन के लिए जनता को जागरूक भी करते हैं। शोषण के चंगुल में फंसी कृषक जनता का दुखद चित्रण प्रस्तुत करते हुए वे कहते हैं–श्देनदारों के लिए हिसाब का कागज यमराज का परवाना है।वे उसकी ओर ताकने का साहस नहीं कर सकते।'[13] भोली–भाली जनता जब सूदखोरों के चक्कर में फस जाती है तो उसे उस से निकल पाना मुश्किल हो जाता है

इसीलिए तो वे कहते हैं–'लिपिबद्ध ऋण अमर होता है।'[14] सूदखोर वर्ग ऐसा अपने चंगुल में फंसाते थे कि जो एक बार भी साहूकार से ऋण ले लेता था तो समझो उसका छुटकारा पाना मुश्किल हो जाता था। भोली–भाली जनता सूदखोरी में फंसकर अपना धन धर्म और आबरू तक गिरवी रख देती थी।बंधुआ जीवन तक जीने को मजबूर हो जाती थी।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर निष्कर्ष निकलता है कि ब्रिटिश औपनिवेशिक व्यवस्था के परिणाम स्वरूप भारत में जो परिवर्तन हुए उनको प्रेमचंद ने बहुत बारीक एवं तात्विक दृष्टि से देखा और परखा था। जो परिवर्तन भारतीय समाज के लिए घातक था उसका उन्होंने खुलकर विरोध किया परंतु साथ ही साथ जिन परिवर्तनों ने सामाजिक सुधार आंदोलनों को नई दिशा प्रदान की, उनके प्रबल पक्षधर भी बने। वह निश्चय ही हिंदी साहित्य में सामाजिक क्रांति के अग्रदूत हैं। वस्तुतः प्रेमचंद एक संवेदनशील रचनाकार हैं, वह सामाजिक विसंगतियों को समाज के अंतिम तह तक जाकर पड़ताल करते हैं और जो समाज के लिए विष का कार्य करता है उसका वह प्रबल खंडन करते हैं।सम्पूर्ण जीवन वह समाज को सत्यम, शिवम, सुंदरम की ओर ले जाने का भरसक प्रयास करते हैं। यही तो उनकी विलक्षणता है तभी तो लोग उन्हें आदर्शोन्मुख यथार्थवादी लेखक मानते हैं।

सन्दर्भ

1. *डॉ0 नगेन्द्र, हिन्दी साहित्य का इतिहास, मयूर पेपर बैक्स नोएडा–1999, पृष्ठ संख्या–574*
2. *सत्या राय, भारत में उप निवेशवाद, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय, निदेशालय दिल्ली वि0वि0–1995, पृष्ठ संख्या–18*
3. *वही, पृष्ठ संख्या–37*
4. *प्रेमचन्द, गोदान, अनुपम प्रकाशन पटना–2000, पृष्ठ संख्या–05*
5. *वही, पृष्ठ संख्या–105*
6. *वही, पृष्ठ संख्या–180*
7. *प्रेमचन्द, रंगभूमि, सरस्वती प्रेस दिल्ली–1993, पृष्ठ संख्या–473*
8. *सत्या राय, भारत में उप निवेशवाद, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय, निदेशालय दिल्ली वि0वि0–1995, पृष्ठ संख्या–90*
9. *प्रेमचन्द, गोदान, अनुपम प्रकाशन पटना–2000, पृष्ठ संख्या–124*
10. *सत्या राय, भारत में उप निवेशवाद, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय, निदेशालय दिल्ली वि0वि0–1995, पृष्ठ संख्या–104*
11. *प्रेमचन्द, गोदान, अनुपम प्रकाशन पटना–2000, पृष्ठ संख्या–49*
12. *वही, पृष्ठ संख्या–17*
13. *प्रेमचन्द, रंगभूमि, सरस्वती प्रेस दिल्ली–1993, पृष्ठ संख्या–251*
14. *वही, पृष्ठ संख्या–435*

मङ्गलम् -वर्ष 13(02) भाग-XXV, अगस्त 2022
ISSN-0976-8149 पृ.-143-149

कानपुर नगर की मलिन बस्तियों में प्राथमिक शिक्षा सम्बन्धी अवरोधों का अध्ययन

डॉ० गीता श्रीवास्तव *

प्रस्तावना

'जब भारत आजाद हुआ था, तब यहाँ की करीब 80 प्रतिशत आबादी गरीबी रेखा से नीचे थी। आजादी के 75 साल बाद गरीबी रेखा के नीचे गुजर–बसर करने वाली आबादी घटकर 22 फीसदी पर आ गई है, लेकिन अगर इसे संख्या में देखा जाए, तो कोई खास फर्क नहीं आया है। आजादी के समय 25 करोड़ लोग गरीबी रेखा से नीचे निवास कर रहे है।''

अत्यधिक निर्धनता के कारण ग्रामीण निवासी बहुत अधिक संख्या में रोजगार की तलाश में नगरों में आते हैं। इससे नगरों में आवासीय समस्या उत्पन्न हो गई है। औद्योगिक नगरों में जनसंख्या का दबाव अत्यधिक बढ़ गया है। मलिन बस्तियों औद्योगिक नगरों और महानगरों की ही उपज है। इन नगरों में व्यक्ति को छोटा या बड़ा रोजगार तो मिल जाता है, पर रहने को आवास नहीं मिलता और ये लोग अपनी निम्न आय की वजह से कोई भी आवास किराये पर लेकर रहने में असमर्थ रहते हैं। इसलिए इन्हें जहाँ कहीं भी कोई खाली स्थान मिल जाता है वहीं पर ये अपनी झोपड़–पट्टी बना लेते हैं। वहाँ पर इन लोगों को पानी, प्रकाश, शौचालय आदि की कोई सुविधा नहीं होती है। इसी कारण ये मलिन बस्तियाँ आसपास के वातावरण को भी बुरे ढंग से प्रभावित करती हैं। इन बस्तियों में स्वास्थ्य, शिक्षा और सामाजिक उत्थान की अनेक समस्यायें उत्पन्न हो जाती हैं। मलिन बस्तियों में शिक्षा का महत्व होते हुए भी वहाँ के लोग शिक्षा की ओर ध्यान नहीं देते हैं और वहाँ के बच्चे समाज की मुख्य धारा से नहीं जुड़ पाते हैं।

कानपुर भारत का एक औद्योगिक नगर हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका की अलाभकारी संस्थ ''जनसंख्या संक्रमण समिति'' के अनुसार कानपुर विश्व के उन पाँच नगरों में से एक है जहाँ पर विकटतम जीवन परिस्थितियाँ हैं। इसका क्षेत्रफल 337 वर्ग किलोमीटर एवं जनसंख्या 2485490 है। कानपुर नगर में जनसंख्या घनत्व 7375 व्यक्ति प्रतिवर्ग किमी0 है। वास्तव में इस शहर की अधिकांश जनसंख्या आस–पास के पूर्वी, पश्चिमी जिलों से ही नहीं अपितु देश के सुदूर अंचलों से भी रोजगार की तलाश में पलायन करके आई हुई है। जिसके परिणाम स्वरूप कानपुर नगर में एक तरफ जहाँ औद्योगिक क्षेत्र का

**असिस्टेण्ट प्रोफेसर, बी.एड. विभाग,डी.एस.एन.पी.जी.कॉलेज, उन्नाव (उ०प्र०)*

विकास हुआ वहीं दूसरी तरफ रेलवे लाइन, गंगा नदी के किनारे, फैक्ट्रियों के आस–पास अपनी अल्प आय के कारण मजदूर द्वारा झुग्गी–झोपड़ियाँ बसा ली गई हैं। जहाँ पर न्यूनतम मूलभूत सुविधाओं जैसे – पानी, नाली, खड़ंजा, शिक्षा, स्वास्थ्य की सुविधाओं का नितान्त अभाव था। कालान्तर में इन्हीं झुग्गी–झोपड़ियों ने मलिन बस्तियों का रूप धारण कर लिया। मलिन बस्तियों मं रहने वाले व्यक्तियों की दयनीय दशा के लिए अनेकों कारण उत्तरदायी हैं किन्तु मलिन बस्तियों में रहने वाले व्यक्तियों की दयनीय स्थिति का प्रमुख कारण इन बस्तियों में व्याप्त अशिक्षा ही है। मलिन बस्तियों में प्राथमिक शिक्षा विषयक सम्भावनाओं को बढ़ाने के लिए भारत सरकार तथा अन्य सामाजिक संस्थाओं के द्वारा बहुत बड़े पैमानें पर विकास कार्य किये जा रहे हैं, संचार माध्यमों के द्वारा भी इस प्रकार का बहुत अधिक प्रचार किया जाता है। लेकिन इस सरकारी तथा सामाजिक संस्थाओं द्वारा किए जाने वाले शैक्षिक कार्यों और योजनाओं का कितना लाभ हो रहा है? क्या यह प्रयास मलिन बस्तियों में रहने वाले बच्चों को शैक्षिक सुविधायें प्रदान कराने में सहायक हो रहे है? प्राथमिक शिक्षा ही जीवन की आधार शिला है। एक प्रश्न यह भी उठता है कि क्या इन मलिन बस्तियों में प्राथमिक शिक्षा की स्थिति संतोषजनक है, यदि नही ंतो प्राथमिक शिक्षा में अवरोध के कारण क्या है? उन्हें किस प्रकार से दूर किया जा सकता है।

शोध कार्य के उद्देश्य

1. मलिन बस्तियों में प्राथमिक शिक्षा की स्थिति का अध्ययन करना।
2. मलिन बस्तियों में प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में आने वाले अवरोधों के कारणों का अध्ययन करना।

शोध कार्य की परिकल्पना

1. मलिन बस्तियों में प्राथमिक स्तर पर स्थिति विशेष संतोषजनक नहीं हैं।
2. मलिन बस्तियों में बालक एवं बालिकाओं की प्राथमिक शिक्षा विभिन्न अवरोधों के कारण प्रभावित हो रही है।

अध्ययन क्षेत्र–प्रस्तुत शोध कार्य का अध्ययन क्षेत्र कानपुर महानगर है।

शोध अभिकल्प –

(ए) शोध विधि – इस शोध कार्य में 'विश्लेषणात्मक सर्वेक्षण' शोध विधि का प्रयोग किया गया हैं।

(बी) न्यादर्श तथा न्यादर्शन– इसमें **'उद्देश्यानुसार न्यादर्श पद्धति'** के आधार पर समगत 413 मलिन बस्तियों में से लगभग 10 प्रतिशत अर्थात 40 मलिन बस्तियों का चुनाव किया गया है तथा इन्हीं मलिन बस्तियों के 100

अभिभावकों तथा 100 बच्चों का उद्देश्यानुसार पद्धति के आधार पर ही चुनाव कर विभिन्न प्रकार की सूचनायें प्राप्त की गई हैं। जिनपर शोध कार्य आधारित है।

(सी) अध्ययन के उपकरण– प्रस्तुत शोध कार्य में निम्नलिखित उपकरणों का प्रयोग किया गया है–

1. अनुसूची – शोध कार्य में व्यक्तिगत तथ्यों एवं तत्सम्बन्धित सूचनाओं के लिए अनुसूची प्रविधि को अपनाया गया है।

इसमें 2 अनुसूचियाँ बनाई गई है –

क. अनुसूची नं0 1– मलिन बस्तियों में प्राथमिक शिक्षा की स्थिति को जानने के लिऐ बनाई गई।

ख. अनुसूची नं0 2– मलिन बस्तियों में प्राथमिक शिक्षा में अवरोधों का कारण जानने के लिए तैयार की गई। इसे 100 अभिभावकों तथा 50 बालक एवं 50 बालिकाओं से भरवाई गई।

2. साक्षात्कार – मलिन बस्तियों में प्राथमिक शिक्षा की स्थिति पर विशेष जानकारी हेतु मलिन बस्तियों में प्राथमिक शिक्षा से सम्बन्धित कुछ अधिकारीगणों, प्राथमिक शिक्षा से सम्बन्धित संस्थाओं के अध्यापक–अध्यापिकाओं, कुछ अभिभावकों तथा मलिन बस्तियों में रहने वाले कुछ बालक–बालिकाओं का साक्षात्कार लिया गया है।

विभिन्न संमको की प्राप्ति एवं मलिन बस्ती विषयक अनेक तथ्यों, संकलित मौलिक सूचनाओं की पुष्टि हेतु केन्द्रीय सरकार एवं राज्य सरकारों के विभिन्न मंत्रालयों, अर्द्धसरकारी संस्थाओं, सामाजिक संस्थाओं राष्ट्रीय एवं प्रादेशीय अनुसन्धान संस्थाओं एवं वैयक्तिक शोधकर्ताओं के प्रकाशनों तथा आयोग एवं समितियों की रिपोर्ट व पत्र–पत्रिकाओं शोध पुस्तकों, अधिनियमों आदि में प्रकाशित सामाग्री का भी यथा स्थान समुचित प्रयोग किया गया हैं।

सांख्यिकीय विश्लेषण – प्राप्त तथ्यों के वर्गीकरण एवं विश्लेषण के लिए प्रतिशत विधि का प्रयोग किया गया है।

प्रदत्तों का विश्लेषण एवं व्याख्या–मलिन बस्तियों में प्राथमिक शिक्षा की स्थिति जानने के लिए सर्वोत्तम की गई 40 बस्तियों में से 35 बस्तियों में तथा उनके आस–पास लगभग 52 स्कूल हैं तथा 5 बस्तियों में एक भी स्कूल नहीं है। मलिन बस्तियों में प्राथमिक स्कूलों के होते हुए भी वहाँ पर रहने वाले सभी बच्चें स्कूल नहीं जाते है तथा जितने बच्चे स्कूल में प्रवेश ले भी लेते है, उनमें से लगभग एक तिहाई बच्चे ही प्रतिदिन स्कूल में उपस्थित रहते है अधिकतर बच्चे तो उसी दिन स्कूल जाते हैं जिसदिन उन्हे पुष्टाहार या वजीफा

इत्यादि मिलना होता है।

इस प्रकार सर्वेक्षण से ज्ञात हुआ कि सरकारी तथा गैर सरकारी संस्थाओं के द्वारा किये ता रहे प्रयासों के बावजूद अभी भी मलिन बस्तियों से प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में अनेक अवरोध है जो कि प्राथमिक शिक्षा को प्रभावित कर रहे हैं। प्राथमिक शिक्षा को प्रभावित कर रहे हैं। प्राथमिक शिक्षा को प्रभावित करने वाले अवरोधों का विवरण निम्नवत है –

तालिका – 1

अभिभावकों द्वारा प्रथम वरीयता प्राप्त सर्वोच्च, अवरोध

क्र0सं0	अवरोध	वरीयता				
		ए	बी	सी	डी	इ
1.	निर्धनता	50	9	5	3	12
2.	धनार्जन सम्बन्धी कार्य	13	4	2	3	2
3.	घरेलू कार्य की वजह से	11	6	10	8	9
4.	माता–पिता दोनों का कार्य पर जाना	11	10	6	5	2
5.	माता–पिता की अशिक्षा	7	27	6	15	11
6.	प्राथमिक स्कूलों का अभाव	7	7	6	1	6
7.	परिवार में बच्चों की अधिक संख्या	5	4	21	13	0
8.	सरकार द्वारा चलाई जा रही योजनाओं का ज्ञान न होना	4	9	7	7	0

उपरोक्त तालिका को देखने से ज्ञात होता है प्राथमिक शिक्षा में अवरोध के कारणों में अभिभावकों ने निर्धनता को सर्वोच्च प्राथमिकता दी है। 50: अभिभावकों ने निर्धनता, 13: अभिभावकों ने बालश्रम, 11: अभिभावकों ने घरेलू कार्यो की वजह से, माता–पिता की अशिक्षा एवं प्राथमिक स्कूलों के अभाव को 7: अभिभावकों ने सर्वोच्च अवरोध माना, 5: अभिभावकों ने परिवार में बच्चों की अधिक संख्या तथा 4: अभिभावकों ने यह माना कि उन्हें सरकार द्वारा चलाई जा रही योजनाओं का ज्ञान नहीं हो पाता है जिसकी वजह से भी प्राथमिक शिक्षा में अवरोध उत्पन्न होता है।

तालिका – 2

बालकों द्वारा प्रथम वरीयता प्राप्त सर्वोच्च, अवरोध

क्र0सं0	अवरोध	वरीयता				
		ए	बी	सी	डी	इ
1.	निर्धनता	15	2	6	0	1
2.	प्रेरणा तथा प्रोत्साहन का अभाव	13	3	2	0	0
3.	परिवार में बच्चों अधिकांश संख्या	9	5	9	0	0
4.	धनार्जन सम्बन्धी कार्य	7	0	0	4	6
5.	माता–पिता दोनों का कार्य पर जाना	7	0	0	1	7
6.	विद्यालय का गृह कार्य न कर पाना	7	0	2	2	3
7.	प्राथमिक स्कूलों का अभाव	7	0	3	0	1
8.	माता–पिता की अशिक्षा	5	18	2	0	6

उपरोक्त तालिका (2) देखनें पर ज्ञात होता है कि मलिन बस्तियों में प्राथमिक शिक्षा में अवरोध के कारण बालकों ने भी निर्धनता को ही सर्वोच्च प्राथमिकता दी है। 30ः बालकों ने निर्धनता, 26ः बालकों ने प्रेरणा तथा प्रोत्साहन का अभाव, 18ः बच्चों ने परिवार में बच्चों की अधिक संख्या, 14ः बच्चों न कहा कि व घर के कार्य, धनार्जन सम्बन्धी कार्य, प्राथमिक स्कूलों का अभाव तथा विद्यालय का गृहकार्य न कर पानें तथा 10ः बच्चों ने कहा कि माता–पिता की अशिक्षा से उनकी शिक्षा में अवरोध उत्पन्न होता है।

तालिका – 3

बालिकाओं द्वारा प्रथम वरीयता प्राप्त सर्वोच्च, अवरोध

क्र0सं0	अवरोध	वरीयता				
		ए	बी	सी	डी	इ
1.	निर्धनता	14	10	3	2	0
2.	माता–पिता दोनों का कार्य पर जाना	12	6	0	0	1
3.	घरेलू कार्यो की वजह से	9	2	0	9	5
4.	प्रेरणा तथा प्रोत्साहन का अभाव	9	0	2	6	6
5.	धनार्जन सम्बन्धी कार्य	5	6	2	2	7
6.	माता–पिता की अशिक्षा	4	8	9	1	8
7.	विद्यालय का गृह कार्य न कर पाना	4	0	2	1	2
8.	सरकार द्वारा चलाई जा रही योजनाओं का ज्ञान न होना	4	0	0	2	0

उपरोक्त तालिका (3) देखने से ज्ञात होता है कि मलिन बस्तियों में प्राथमिक शिक्षा में अवरोध के कारणों में बालिकाओं ने भी निर्धनता को ही सर्वोच्च वरीयता दी है। 28ः बालिकाओं ने निर्धनता, 24ः बालिकाओं ने माता–पिता दोनों का कार्य पर चले जाना, 18ः बालिकाओं ने घरेलू कार्यो तथा प्रेरणा एवं प्रोत्साहन के अभाव, 10ः बालिकाओं ने धनार्जन सम्बन्धी कार्यों तथा 5ः बालिकाओं ने विद्यालय का गृह कार्य न कर पाने तथा सरकारी योजनाओं का ज्ञान न होने को प्राथमिक शिक्षा में अवरोध का सर्वोच्च कारण बताया।

शोध परिणाम

शोध अध्ययन से प्राप्त परिणामों को देखने पर ज्ञात हुआ कि –

1. मलिन बस्तियों में प्राथमिक शिक्षा की स्थिति सन्तोष जनक नहीं है।
2. प्राथमिक स्तर पर मात्र एक तिहाई बच्चे प्रतिदिन विद्यालय में उपस्थित रहते हैं।
3. शहर की 15ः मलिन बस्तियों के आस–पास कोई प्राथमिक विद्यालय नहीं है।
4. मलिन बस्तियों में प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र निर्धनता सबसे बड़े अवरोध के रूप में ज्ञात हुई।
5. तत्पश्चात माता–पिता की अशिक्षा, बालश्रम, घरेलू कार्यों की वजह से प्रेरणा तथा प्रोत्साहन का अभाव तथा प्राथमिक विद्यालयों का अभाव भी प्राथमिक शिक्षा में अवरोध के प्रमुख कारणों के रूप में ज्ञात हुए।
6. बालको द्वारा बालश्रम, प्रेरणा तथा प्रोत्साहन का अभाव तथा परिवार में बच्चों की अधिक संख्या होना प्राथमिक शिक्षा में अवरोध का प्रमुख कारण माना है।
7. बालिकाओं ने माता–पिता दोनों के कार्य पर चले जाने के कारण घरेलू कार्यो में अत्यधिक संलग्न रहना ही प्राथमिक शिक्षा में अवरोध का प्रमुख कारण माना है।
8. मलिन बस्तियों में प्राथमिक शिक्षा से सम्बन्धित अधिकारियों ने माता–पिता की अशिक्षा, प्रेरणा तथा प्रोत्साहन का अभाव तथा जागरूकता के अभाव को प्राथमिक शिक्षा में अवरोध का प्रमुख कारण माना है।
9. मलिन बस्तियों में प्राथमिक स्कूल के शिक्षक–शिक्षिकाओं ने माता–पिता की अशिक्षा, प्रेरणा तथा प्रोत्साहन का अभाव, बालश्रम, निर्धनता तथा विद्यालय सम्बन्धी आवश्यक सामाग्री के अभाव को प्राथमिक शिक्षा में अवरोध का प्रमुख कारण माना है।

निष्कर्ष की व्याख्या

इस शोध कार्य में परिणामों को देखते हुए हम यह कह सकते हैं कि मलिन बस्तियों में प्राथमिक शिक्षा की स्थिति बहुत सन्तोषजनक नहीं है। मलिन बस्तियों में प्राथमिक शिक्षा में अवरोध के लिए अनेक कारण उत्तरदायी हैं। किन्तु सबसे बड़ा कारण निर्धनता, बालश्रम, अशिक्षा, प्रेरणा और प्रोत्साहन का अभाव एवं जागरूकता का अभाव ही है अधिकांश मलिन बस्तियों में प्राथमिक स्कूल नहीं है तथा जिन बस्तियों में विद्यालय हैं भी उनमें शिक्षा प्राप्त करने के लिए आवश्यक समझी जाने वाली न्यूनतम सुविधायें भी नहीं है। सर्वेक्षण में यह भी पाया गया कि प्राथमिक स्कूलों तथा आंगनबाड़ी केन्द्रों में आवश्यकतानुसार कमरे भी नहीं हैं कुछ विद्यालय तो खुले सीान में हैं, कुछ विद्यालयों में केवल एक ही कमरा है, लगभग एक–तिहाई स्कूलों में एक ही अध्यापक है, विद्यालयों में चटाइयाँ, मेज व कुर्सियों का अभाव है अधिकांश विद्यालय बिना चॉक डस्टर तथा बिना शौचालय के चल रहे हैं।

प्राथमिक शिक्षा व्यवस्था की यह खामियाँ हालाँकि प्रत्यक्ष रूप में इतनी स्पष्ट नहीं हैं किन्तु समाज व अर्थव्यवस्था को भीतर ही भीतर खोखला बनाती जा रही है। बालिकाओं की शिक्षा के पक्ष में जिन अभिभावकों से बात की गयी उनमें से कुछ ने ही माना कि प्राथमिक शिक्षा एवं बच्चों के लिए अनिवार्य होनी चाहिए कुछ अभिभावक ने लड़कों के लिए ही अनिवार्य माना उनकी दृष्टि में लड़कियाँ पढ़ाई करेंगी तो घर का काम कौन करेगा? लड़की को कौन–सा पढ़ लिखकर नौकरी करनी है। यह सब उनकी संकुचित मानसिकता और जागरूकता के अभाव के कारण ही है। जब तक मलिन बस्तियों में रहने वाले लोग स्वयं जागरूक नहीं होंगे तथा शिक्षा के महत्व को स्वयं नहीं समझेंगें तब तक उनका पूर्णरूप से शैक्षिक विकास हो पाना सम्भव नहीं है।

सन्दर्भ

1. *https://www.aajtak-in<news>story*
2. *Pathana, V.K. Mallika-The slums of vishkha-Pathanam An Inter Disciplinary study, Bangelore institute of psychological research 1991.*
3. *Rao, K.S. M.S.A. Rao Cities of slums*
4. *Desai, A.R. & S.D.Pillai- 'Slums and Urbanisation' Popular Prakashan Bombay. 1970.*
5. *Lewis Oscar- 'Five Families' Penguin Books, 1961.*
6. *डॉ० कपिल एच०के०–अनुसन्धान विधियाँ, एच०पी० भार्गव पब्लिकेशन, आगरा*
7. *शर्मा–विनय मोहन– शोध प्रविधि, नेशनल पब्लिशिंग हाउस*
8. *बेस्ट, जॉन डब्ल्यू–''शिक्षा में अनुसन्धान''*
9. *अदावल सबोध ''शिक्षा की समस्यायें''*
10. *समाचार पत्र–पत्रिकायें, दैनिक जागरण एवं आज, प्रतियोगिता दर्पण, इण्डिया टूडे, योजना, रोजगार योजना, समाज कल्याण वी०पी० जौहारी–भारतीय शिक्षा और उसकी समस्यायें, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा*

मङ्गलम् -वर्ष 13 (02) भाग-XXV,अगस्त 2022
ISSN-0976-8149 पृ.-150-156

अशोक वाजपेई की काव्य–दृष्टि

*डॉ० संतोष कुमार पांडेय **

काव्य दृष्टि वस्तुतः किसी कवि का वह व्यक्तिगत दृष्टिकोण है जो अनुभूति के स्तर पर उसके दिलो–दिमाग में परत दर परत काल की विभिन्न समयावधियों में धीरे–धीरे संचित और घनीभूत होता रहता है और जिसकी आधार भूमि पर कोई भी कवि काव्य सृजन की ओर उन्मुख होता है। यह आधार भूमि समय, स्थान, परिवेश,समाज और परिस्थितियों से प्रेरणा ग्रहण कर प्रत्येक कवि के लिए अलग–अलग काव्य दृष्टि का निर्माण करती है। कविता हमारे अंतःकरण की अमित सौंदर्य सृष्टि है ,कविता का जैविक संबंध मानव के जीवन से होता है ,उसके जीवन से ऊर्जा पाकर ही कोई कवि महान कविताओं का सृजन करता है।

हिंदी के समकालीन कवियों में तमाम ऐसे कवि हुए जिन्होंने समय और समाज की नब्ज को बड़ी ही बारीकी से विश्लेषित कर अपनी कविताओं में उन्हें अभिव्यक्ति दी, उन्ही में से एक अशोक वाजपेई जी ने भी अपनी काव्य दृष्टि से समकालीन हिंदी कविता को एक नई ऊर्जा, स्फूर्ति और प्रेरणा प्रदान की है।

अशोक वाजपेई की कविताएं हमारे समय के सबसे प्रौढ़ कवि एवं प्रखर आलोचक की कविताएं हैं। उनकी कविता अपने समय से सीधे संवाद करती दिखती है। वह समाज की अशिव शक्तियों से लोहा लेती हुई समय के कपाल पर एक अमिट छाप छोड़ती है। कविता एक मायने में समय का प्रतिरोध भी है इसलिए वह समय को पार कर आगे बढ़ने की कोशिश करती है। अशोक वाजपेई अपने काव्य संग्रह 'समय के पास समय' में समय को आज के भूमंडलीकृत विश्व बाजार के संदर्भ में कुछ यूं परिभाषित करते हैं –

'मुझे कहां इतनी फुर्सत कि आलू दस रुपए के बजाय नौ रुपए के भाव पर मांगते इस कुबड़े ग्राहक को छोड़कर कुछ देर अचरज या इत्मीनान या डर से इस शताब्दी को बीतता देखूं।'[1]

समय के इस परिवर्तन ने मनुष्य की मनुष्यता को बेदखल कर रख दिया है। मनुष्य अपने नश्वर जीवन को जीने के लिए दूसरों को मारता फिरता है। मनुष्य की इस स्वार्थपरता पर कवि ने अपनी कविता 'मछुआरे' में इस दर्द को साझा किया है कि सब कुछ को मारने पर उतारू होने की प्रवृत्ति के खिलाफ कुछ बचाना ही दुनिया की बेहतरी है –

**असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, फीरोज गांधी कॉलेज रायबरेली (उ०प्र०)*

'सबसे पहले मछुआरे में भी ममता थी
और बिल्कुल आखिरी मछुआरा भी
सुंदर को कुछ ना कुछ बचाएगा
तभी न आदमी कहलाएगा।'[2]

अशोक बाजपेई की ऐसी ही कविताओं को देखकर सुधीश पचौरी लिखते हैं कि कवि सामाजिक बुराइयों से पृथ्वी को बचाना चाहता है वह अशिव का विनाशक और शिव का रक्षक होकर अपनी भूमिका का निर्वाह करना चाहता है। कवि और रचनाकार गहरी सर्जनात्मक प्रक्रिया के संपर्क वाद से समय काल के संचारी और संचारित मूल्यों को नए–नए रूप दे रहे हैं। कार्यकारी क्षमताओं से खंडन मंडन तथा हस्तक्षेप से अपने को ओझल कर साहित्य का यशोविस्तार कर रहे हैं, तोड़ने जोड़ने को कृत संकल्प हो नए आयाम प्रस्तुत कर रहे हैं।[3]

अशोक वाजपेई की कविताएं इस क्रूर समय में स्मृतियों को सहेजने का कार्य करती हैं। मां की मृत्यु पर कवि इन्हीं स्मृतियों को संजोता दिखता है। मां की मृत्यु पर गहरा अवसाद प्रकट करते हुए कवि ने एक उपमान के द्वारा मां की मृत्यु को इस प्रकार देखा है –

'उसने दस्तक होने पर दरवाजा खोला
और रामायण के पाठ को बीच में ही छोड़कर
चली गई जैसे बच्चों के लिए दूध गर्म करने।'[4]

अशोक बाजपेई ने अपनी कविता में मृत्यु को न रुकने वाली ट्रेन के रूप में चित्रित किया है। इस ट्रेन पर बैठकर मां चली गई पिता भी गए और सभी को जाना है। अशोक बाजपेई की कविताओं में मृत्यु एक सफर है देखिए कैसे–

'बिना उम्मीद के इस सफर में दिदिया भी कहीं होगी दुबकी बैठी या ऐसे ही कोने में कहीं खड़ी और पता नहीं उसने काका की खोज की भी या नहीं दोनों अभी इसी ट्रेन में हैं जो बिना कहीं रुके न जाने किस ओर चली जा रही है हहराती हुई।'[5]

अशोक वाजपेई की चिंता सब को सहेजने की चिंता से जुड़ी हुई है। घर परिवार मां पिता आस–पड़ोस सब से जुड़ने की संवेदना ही अशोक वाजपेई की काव्य दृष्टि के सर्वाधिक नजदीक है। अरुण कमल ने इस संबंध में लिखा है कि 'अशोक वाजपेई के कविताओं की मूल भूमि है ठेठ निम्न मध्यवर्गीय कस्बाई जीवन, जिसके प्रति एक अविच्छिन्न अनुराग इन कविताओं में मिलता है ।दैनंदिन के मानव संबंध मां–बाप ,भाई– बहन ,बेटा बेटी घर परिवार पुराने मोहल्ले और साथ–साथ बढ़े रूख–पात पशु–पक्षी यही वह जीवन है जो शुरू से अंत तक

अशोक वाजपेई की कविताओं का आश्रय है।[6]

'इन सब को सहेज कर कविता बनाता हूं
संसार की नश्वरता के विरुद्ध अपनी लड़ाई में शब्दों की अक्षरता से
एक मोर्चा कुछ देर के लिए सही जीत जाता हूं।'[7]

अशोक वाजपेई भी इस दुनिया के जीवन में इसके सुख दुख हर्ष विषाद आशा निराशा को स्वीकार करते हुए ही अपने होने को और उसके आनंद की अनुभूति कराते हैं और अंततः जीवन के सबसे बड़े होने की अनुभूति।[8] अशोक वाजपेई की काव्य दृष्टि जीवनानुभव के समस्त अनुगूंजों को समाहित करती चलती है उनके संवेदनों की सूक्ष्मता उनकी लिखी गई कविता मां से समझी जा सकती है। काव्य यात्रा का आरंभ मां की पवित्र गोद से होता है लेकिन काव्य यात्रा के बीच में मां का सहारा उठ जाता है बची रह जाती है सिर्फ स्मृतियां। ऐसे विकट समय में कवि का विश्वास देखिए–

'दूसरों के लिए जीवन भर मरने के बाद अब वह जरूर स्वर्ग में होंगी दूसरों के लिए स्वर्ग।'[9]

अशोक बाजपेई की विरासत भावना बहुत–बहुत विराट है। कवि अपने पिता से पाए हुए विरासत का ऋणी तो है ही, वह इस नए जमाने में एक गोरिल्ला शुरुआत भी करता है। वह यह कि विरासत के इस प्रसंग में स्त्री सशक्तिकरण को संदर्भित करते हुए अपनी मां से पाए हुए विरासत का भी जिक्र करता है–

'कभी–कभी मुझे लगता है कि
मुझमें बाकी है हार कर भी
अपनी लड़ाई जारी रखने की जिद
जो मेंरी मां की आदत थी।'[10]

काव्य सृजन प्रक्रिया के अंतिम चरण में कार्यान्विति के समय मां मां नहीं रहती, पुरखे पुरखे नहीं रहते कवि द्वारा इनके माध्यम से पाए हुए सत्य का बयान प्रमुख हो जाता है।[11] मां की ममता विषयक कविताओं पर सुधीर सुधीश पचौरी लिखते हैं कि 'मां को लेकर जो अतिरिक्त संवेदनशीलता है उसमें क्या ये कहा जा सकता है कि पिता का जो डॉमिनेशन है और उसका जो असर मां पर पड़ता है, जो मैंने पढ़ते हुए अंदाज लगाया कि पिता का एक जबरदस्ती करने वाला स्वभाव है और मां एकदम निरीह कोमल स्वभाव की महिला है, शायद परेशान रहने वाली महिला रही होगी जिसे यह अतिरिक्त सिंपैथी देते हैं।'[12] इसी बात को आगे बढ़ते हुए सुधीश पचोरी अन्यत्र लिखते हैं कि मां को

लेकर अशोक की कविताओं में एक टेंडर्नेस है।[13] अशोक बाजपेई की कविताओं में पीढ़ियों को सहेजने की एक व्यापक चिंता दिखाई पड़ती है। कवि के अनुसार यदि पूर्वज बच्चों के संरक्षक हैं तो वही बच्चे भी पूर्वजों के संरक्षक हैं।

'बच्चे खेल रहे हैं अपने निरंतर होने
अमर होने का एक अंतहीन खेल
पुरखों के साथ और
मृत्यु को पराजित करते हुए
बच्चे गा रहे हैं।'[14]

इसमें कोई दो राय नहीं कि अशोक बाजपेई ने पिता, मां, पोते, नाती, नातिन, दीदी आदि पर कविताएं लिखकर हिंदी कविता की घर वापसी की है। कविता को उन तमाम बंधनों से मुक्ति दी है जो उसे देशज आधुनिकता से दूर कर रहे थे।

' अपने कारागार से निकलकर
तब हम किसके द्वार पर दस्तक देंगे
कहां से आएगी वह प्रतिध्वनि
जो हमें घर लौटाएगी।'[15]

आज की उपभोक्तावादी संस्कृति में मनुष्य भौतिकता की चकाचौंध में इतना व्यस्त हो गया है कि उसे सब कुछ एक बाजार नजर आने लगा है जिसके कारण मनुष्य से मनुष्य के बीच रिश्ते दरक कर टूट रहे हैं। मीडिया, महंगाई, सूचना की अपरंपार आवाजाही, अर्थ की प्रबलता, रिश्तों में खोखलापन आदि सभी इस भूमंडलीकरण की देन है जिनसे मानवीय संस्कृति बुरी तरह प्रभावित हो रही है। ऐसे बेचौन कर देने वाले माहौल को लेकर अशोक वाजपेई जी की चिंता बड़ी वाजिब है।

'कोई अंतर नहीं रह जाएगा
गर्मियों में तपती धूप
और तुम्हारे पुराने सपनों में
तुम्हें दोनों से परेशानी होगी
तुम्हारे पास कोई भाषा नही
शब्दों की एक निष्करुण परंपरा भर
रह जाएगी और भविष्य
एक भूले हुए विदेशी व्याकरण की तरह।'[16]

सामाजिक समरसता के प्रबल पक्षधर अशोक बाजपेई अपनी एक कविता बढ़ई में बढ़ई के द्वारा देखे गए सपने का चित्रण करते हुए भारतीय समाज की विविधताओं को एक रंग में पिरोने का सूत्र देते हैं।जहां न होगी कोई जाति, न धर्म न ब्राह्मण, न दलित बल्कि सर्वे भवंतु सुखिनः का संदेश देते हैं–

'मैं कभी–कभी सपना देखता हूं कि
मैंने आसमान के बराबर
एक मेज बनाई है और उस पर सबको
खाने का न्योता दिया है

हर रंग के लोगों को ब्राह्मण और अछूत को चिड़ियों, सिंहों, गिलहरियों, नक्षत्रों को बूढ़े देवताओं, सैनिकों, नाइयों और मछुआरों को नातियों, पातियों सबको दुनिया को इस दुनिया उस दुनिया को जो बीत चुकी है कई सदियों को।'[17]

वर्तमान समय में सत्ता और राजनीतिज्ञ सभ्य समाज के विध्वंसक बनकर प्रस्तुत हो रहे हैं राजनीति अपना हित साधने में समाज की चूले हिला दे रही है। हर तरफ आपाधापी, भागम भाग, लूटमार, हत्या, बलात्कार मूल्यों का अतिक्रमण दिखाई पड़ता है, ऐसे विकट समय को परिभाषित करते हुए अशोक वाजपेई अपनी कविता कुम्हार में कीचड़ के माध्यम से कहते हैं–

'मिट्टी का कीचड़ होता तो फिर भी रास्ता निकलता इस कीचड़ में तो खून नफरतें जिंदगी की कई वहसते ,विलाप ,आंसू और बदले एक दूसरे से सने हुए हैं और कभी–कभी ऐसा लगता है कि पता नहीं कितने मरे हुए लोग इस कीचड़ में से आर्ट बढ़ कर रहे हैं एक रियराती सी आवाज में बेसुरा सा कुछ गा रहा है और उसे बार–बार दबाती है क्रूर हंसी'[18]

लेकिन कवि कोई सामान्य आदमी नहीं है वह विशिष्ट है विधाता ने उसे कुछ और ही जिम्मेदारी दी है,वह इन उबाऊ परिस्थितियों से भाग खड़ा होने की नहीं सोच सकता।उसे पूरा विश्वास है कि ऐसे कठिनतर समय में भी कविता के पास ऐसे हथियार है जो कभी खुटल्ल नहीं होते–

'फिर मैं समय को
इस बीत रही शताब्दी को छीलकर
ठोक और पीटकर कीलो से जोड़कर
किसी ऐसी चीज में क्यों नहीं बदल सकता जिसमें सारी दुनिया और सारे लोग
एक साथ समा जाएं एक दूसरे के पड़ोसी हो जाए एक घबरा कर उठे

तो कई सहारा देने आगे बढ़े एक सपना देखे तो कई वैसा ही सच बटोर कर सामने लाएं।'[19]

कवि आश्वस्त है कि समय कितना ही कुटिल क्यों न हो गया हो राजनीति भले ही आसुरी हो गई हो लेकिन अंततः इस बिगड़ी हुई दुनिया को बचाने आदमी ही आएगा । मानवता ही प्रबुद्ध होगी अत्याचार दुराचार आपाधापी आदि से मुक्ति देने वाला आखिरकार मनुष्य ही है और कोई नहीं–

'आदमी ने कुछ भी किया हो
कितना ही अत्याचार या दुराचार
उसके पास कुछ तो होता है जो
टूटने फूटने के बावजूद बचाने के काबिल होता है और जिसे
सहजने वाला दूसरा आदमी
निकल ही आता है।'[20]

एक संपूर्ण मनुष्य की कल्पना पर भरोसा करते हुए अशोक कविता के प्रति अपनी उम्मीद बचाए हुए हैं जिसकी जड़ें संस्कृति में दूर तक फैली हैं इस उम्मीद ने एक तरह से कहा जाए अशोक की कविता का टोन निर्धारित किया है।21अशोक बाजपेई की काव्य दृष्टि समकालीन कविता के प्रतिपक्ष की दृष्टि है इसीलिए जब कविता आंदोलन के कवियों ने सबकुछ को एब्सर्ड घोषित कर रखा था उस चुनौतीपूर्ण समय में भी अपने पहले काव्य संग्रह में कवि ने उस अनास्था और ऊलजुलूल से दो–दो हाथ करने की ठानी और खुलकर कहा–

' गुर्राहट है चीख है शोर है
वह जो कभी संगीत था युवा अधरो पर
चेहरे बनने का करुण चेष्टा में बिखरा
चीजों का एक विषम ढेर है
यूं ही चुप रहो और मुझे घृणा करने दो।'[22]

अशोक वाजपेई की कविताओं में अनुभूति और परिवेश का अद्भुत सामंजस्य दिखाई पड़ता है। उनकी कविताओं में अनुभूति की प्रामाणिकता का आधार परिवेश ही है जहां रहकर कवि अपनी संवेदनाओं को सिंचित कर उसे काव्य के रूप में आवाम को सौंप देता है। यह परिवेश वैयक्तिक सुख दुख से निर्मित तो है जरूर परंतु उसका निष्पादन कविताओं में सार्वभौमिक सत्य को चित्रित कर जाता है। इनकी कविताएं उस काव्य दृष्टि का प्रमाण हैं जिनमें मानवीय अनुभूति की प्रधानता,कोरे काल्पनिक मिथ्याडंबरो की उपेक्षा, पारंपरिक मूल्यों से संपृक्त यथार्थ का आग्रह, मानव संस्कृति के मूल्य प्रेम, करुणा, दया सहानुभूति,

परदुखकातरता, अपनी जड़ और जमीन की ओर लौटने की अदम्य जिजीविषा का सघन मिश्रण मौजूद है।

सन्दर्भ

1. *समय के पास समय, अशोक बाजपेई, पृष्ठ संख्या 31, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, सन् 2000 ईस्वी।*
2. *वही पृष्ठ संख्या 25*
3. *अशोक बाजपेई पाठ कुपाठ, संपादक सुधीश पचौरी, पृष्ठ संख्या 103, प्रवीणा प्रकाशन नई दिल्ली, सन 1999 ईस्वी।*
4. *एक पतंग अनंत में, अशोक बाजपेई, पृष्ठ संख्या 16 ,राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली 1984 ईस्वी।*
5. *वही पृष्ठ संख्या 15*
6. *कविता और समय, अरुण कमल, पृष्ठ संख्या 142, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, सन 2002 ईस्वी।*
7. *तत्पुरुष, अशोक वाजपेई, पृष्ठ संख्या 62 राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, सन 1989 ईस्वी।*
8. *अशोक बाजपेई पाठ कुपाठ, पृष्ठ संख्या 303 ,प्रवीणा प्रकाशन नई दिल्ली, 1999 ईस्वी*
9. *एक पतंग अनंत में, अशोक बाजपेई पृष्ठ संख्या 18*
10. *समय के पास समय, अशोक बाजपेई, पृष्ठ संख्या 51*
11. *पाठ कुपाठ, संपादक सुधीश पचौरी, पृष्ठ 358*
12. *वही पृष्ठ 551*
13. *वही पृष्ठ 551*
14. *एक पतंग अनंत में, अशोक बाजपेई, पृष्ठ संख्या 25*
15. *अगर इतने से, अशोक बाजपेई पृष्ठ संख्या 29, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, 1986 ईस्वी।*
16. *एक पतंग अनंत में, अशोक बाजपेई पृष्ठ संख्या 79*
17. *समय के पास समय, अशोक बाजपेई पृष्ठ संख्या 21*
18. *वही पृष्ठ 15*
19. *वही पृष्ठ 22*
20. *वही पृष्ठ 27*
21. *पाठ कुपाठ, संपादक सुधीश पचौरी, पृष्ठ संख्या 369*
22. *शहर अब भी संभावना है, पृष्ठ संख्या 51 भारतीय ज्ञानपीठ नई दिल्ली, 1966 ईस्वी*

मङ्गलम् -वर्ष 13 (02) भाग-XXV,अगस्त 2022
ISSN-0976-8149 पृ.-157-170

मध्य हिमालय की लघु परम्पराओं का ऐतिहासिक अध्ययन

(टौंस घाटी में धार्मिक परम्पराओं के परिपेक्ष्य में)

*डॉ० सुशील कुमार कगड़ियाल **

मध्य हिमालय के पश्चिम में स्थित टौंस घाटी क्षेत्र अपनी परम्पराओ के लिये गढवाल मे ही नही अपितू सम्पूर्ण भारत मे प्रसिद्व है यहॉ की लोक परम्पराओ मे यहॉ का सामाजिक, धार्मिक एवं सॉस्कृतिक जीवन परिलक्षित होता है। सम्पूर्ण गढवाल में अनेक लोक देवतोओं के साथ ही महाभारत के चरित्र नायकों को देवत्व प्रदान किया गया है यमुना नदी की सहायक टौंस नदी घाटी के स्रोत प्रदेश (सुपीन घाटी) में जहाँ दुर्योधन की पूजा होती है, वहीं टोंस नदी के उद्गम स्थल रूपिन–सुपिन संगम क्षेत्र महाराजा कर्ण व लोक देवता पोखू से सम्बन्धित है। जबकि नैटवाड का रूपिन घाटी क्षेत्र शेडकुडिया तो टौंस नदी घाटी का निचला क्षेत्र लोक देवता महासू से सम्बन्धित हैं।

नैंटवाड़ मे रूपिन व सुपिन नदियो का संगम है। यही से यह नदी टौंस कहलाती है। रूपिन का उदगम स्थल मांजी वन के भराडसर से तथा सुपिन का बंन्दरपुॅछ की पश्चिमी ढाल स्वार्गरोहण से है। यह पंचगाई, बढोर, बडास होते हुये नैटवाड़ मे मिलती है तथा आगे रॅवाई जौनसार बावर होते हुये ये नदी कालसी[1] मे यमुना मे समाहित हो जाती है।

प्रस्तुत शोध पत्र में मध्य हिमालय के पश्चिम में स्थित टौंस घाटी क्षेत्र को लिया गया हैं जो कि रॅवाई क्षेत्र (उत्तरकाशी जनपद) व जौनसार बाबर (देहरादून जनपद) के नाम से जाना जाता हैं। यह विषम भौगोलिक पारिस्थिकी क्षेत्र अनेक अत्याधुनिक सुविधाओ से वर्तमान समय तक भी वंचित है यही मुख्या कारण है कि यहॉ की मौखिक लोक परम्पराऍ (लघु परम्परा) कुछ हद तक आज भी जीवंत है। हिमांचल प्रदेश से जुडें होने के कारण यहां की सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक परम्पराओ पर गढवाल की अपेक्षा हिमांचली प्रभाव देखने को मिलता हैं।

लोक परम्परा की एकसूत्राता का अर्थ प्राचीन से चिपकाव नहीं है, क्योंकि परम्परा में स्वीकार, अस्वीकार दोनों चलते रहते हैं। कुछ चीजें छूटती जाती हैं, कुछ जुड़ती जाती हैं, पर एकदम लोप किसी का नहीं होता। परम्परा शब्द को कई परिभाषाओं से गुजरना पड़ा है जिस वजह से

** असिस्टेण्ट प्रोफेसर, इतिहास विभाग, रा०स्ना० महाविद्यालय नई टिहरी, टिहरी गढ़वाल (उत्तराखण्ड)*

इसे पहचानना कठिन हो गया है। इस उलझाव का जोखिम उठा कर सबसे पहले यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि परम्परा मात्रा, ट्रेडीशन का अनुवाद बन गया है।[2]

जीवंत लोक परम्पराओं से आशय है, कि जो परम्परायें हमारे लोक

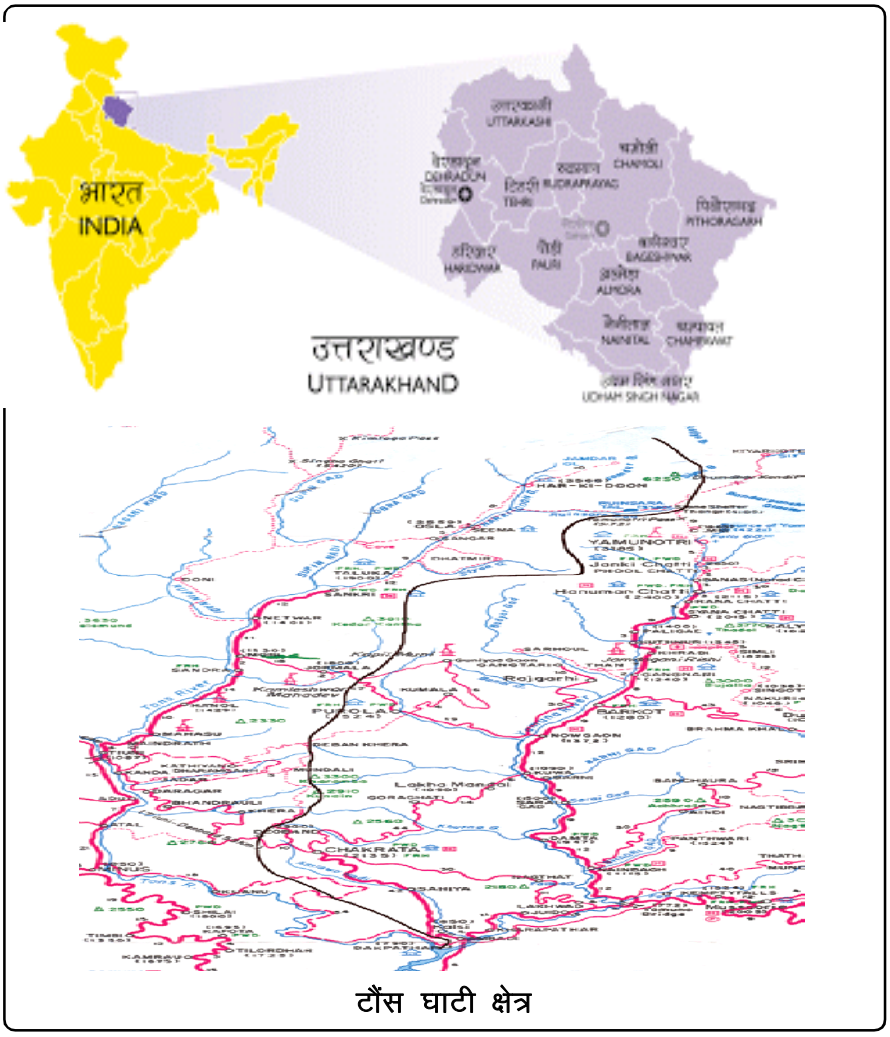

टौंस घाटी क्षेत्र

में सदियों से चली आ रही हैं; यह सम्भव हो सकता है कि मौखिक लोक–परम्पराओं के स्वरूप में धीरे– धीरे बदलाव आया है। उनका जो स्वरूप आज से पचास साल पहले रहा होगा, वह आज हमें दिखाई नहीं देता लेकिन उसके अतीत के स्वरूप को हम महसूस कर सकते हैं; क्योंकि उसका कुछ अंश आज भी लोक में प्रचलित है। जहाँ तक मध्य हिमालय के

अंचल विशेष, पश्चिमी में स्थित टौंस घाटी की जीवन्त लोक–परम्परा की बात करे तो ये परम्पराये स्थनीय देवताओ से सम्बन्धित है तथा लघु परम्परा के अन्तरर्गत आती हैं।

लघु परम्परा (Little Tradition) एंव वृहद परम्परा (Great Tradition) जैसे सामाजिक अवधारणो का प्रयोग सर्वप्रथम अमेरीकी मानवशास्त्री रॉवर्ट रेडफील्ड[3] ने किया, लघु परम्पराओं को परिभाषित करते हुए कहा कि ये अधिकांशतः स्थानीय, प्रकृति पर आधारित धर्म, शिल्प, मौखिक व अनक्षर लोगों की थाती होती है।[4] ये परम्परायें जीवन को गॉव में जीने का ढंग बतलाते हैं।[5] राबर्ट रैडफील्ड ने कहा कि भारतीय सभ्यता के अन्दर धर्म से संबंधित उच्च परम्परायें कुछ विशिष्ट वर्ग को परिलक्षित करती है या जो धर्मग्रन्थो व आदिग्रन्थो पर आध ाारित है जिन्हें वृहत परम्परायें कहते है।[6] मिल्टन सिंगर ने रैडफील्ड की बात को आगे बढ़ाते हुए कहा कि स्थानीय सभ्यता के अन्दर लघु परम्परायें, वृहत परम्पराओं से लगातार सम्पक्रित होने के कारण प्रभावित होती रहती है।[7] कुल मिलाकर कहॉ जा सकता है कि जिस धार्मिक क्रिया कलापो रीति–रिवाजो, लोकगीत, लोकनृत्य एंव जादू–टोना इत्यादि क्रियाओ का लिखित साहित्य नही है, इसका विकाश मुख्यत अशिक्षित कृषक समाज से होता है तथा इसका हस्तान्तरण मौखिक रुप से होता है।[8]

लघु परम्पराओ का प्रचलन स्थानीय स्तर पर किसी विशेष स्थान मे ही देखने को मिलता है अलग–अलग स्थानो की लघु परम्पराये भी अलग–अलग होती है। संक्षेप मे यही कह सकते है कि ये कम व्यवस्थित, स्थानीय, अलिखित व कम चिन्तनशील है। गढवाल हिमालय के गॉवो में भी अनेक लघु परम्पराए प्रचलित है जिनका कोई लिखित इतिहास नही है ये मौखिक रुप से पीढी दर पीढी गतिमान है जिनमे कुछ चिजे छूटती चली जाती रही हैं और कुछ जुडती लेकिन उनका मूल एक हैं, इनका हस्तान्तरण भी मौखिक रुप से होता है। मैसेन्जर ने मौखिक परम्पराओं की उपयोगिता को दर्शाते हुये कहा कि भारत के अन्दर मौखिक परम्पराओं का विशष्ट योगदान रहा है तथा धर्म तथा संस्कृति से सम्बद्ध उच्च परम्परायें ज्यादतर मौखिक रूप से संरक्षित है।[11] मौखिक लोक परम्परायें स्थानीय बोलियों का साहित्य हैं जिसमें ग्रामीण इलाकों में बोली जाने वाली मात्र भाषायें सम्मिलित हैं जो कि सॉस्कृतिक दृष्टि से टौंस घाटी को एक विस्तृत आधार प्रदान करती हैं, इस क्षेत्र के सांस्कृतिक वैशिष्ठय तथा उनकी मूलभूत सांस्कृतिक दृष्टि को समझने के लिए उनकी मौखिक लोक परम्पराओं का अध्ययन आवश्यक हो जाता है, जिसमें प्रत्येक शब्द एक सामाजिक यथार्थ को अपने संकेतो के द्वारा व्यक्त करता है।

भारत वर्ष में पहले से ही ग्राम देवताओं तथा ग्राम देवियों की प्रधानता में

रही है। ग्राम देवता लगभग समस्त भारत वर्ष में पूजे जाते रहे है जो कि सभी गाँवों में विद्यमान हैं।[10] इस परिपेक्ष्य में टौंस घाटी के लगभग सभी गाँवों में ग्राम देवता व देवियाँ जो कि उस समुदाय विशेष का रक्षक देवता होता है तथा उस समुदाय की समृद्धि व खुशी के निमित पूजा जाता है ये घाटी क्षेत्र कृषि प्रदान हैं, पशुधन की रक्षा एंव उनकी समृद्धि के लिये भी इन स्थानीय देवी–देवताओ को समय–समय पर पूजा जाता हैं। गेट ने भी स्पष्ट किया हैं कि प्रत्येक गॉव का एक रक्षक देवता वहॉ की खुशहाली के लियें पूजा जाता हैं गेट की उक्त अवधारणा गढ़वाल के कई गाँवों में सही प्रतीत होती है। टौंस घाटी में अधिकांश देवताओ को इसलिए पूजा जाता है कि ताकि वे भूत–प्रेत, रोगों व जादू–टोना पर नियंत्रण तथा स्थानीय जनमानस सहित उनके मुख्य आर्थिकी के द्योतक भेड, बकरी की रक्षा करते हैं। इन लोक देवताओं को थोड़ा बहुत ही जिक्र हमारे धर्मशास्त्रो में देखने को मिलता है। इनके नाम, प्रकार तथा पूजन पद्धति अलग–अलग स्थानों पर अलग–अलग है, परन्तु समाज में इनकी उपयोगिता समान प्रकार से प्रतित होती है।[12]

प्रत्येक समुदाय की पहचान उसके विशिष्ट नाम से होती हैं। सामान्यतः समुदाय के नाम के पीछे अपना इतिहास एवं परम्परा होती हैं, इसी विशिष्ट नाम के कारण एक समुदाय दूसरे समुदाय से अपनी पृथक पहचान रखता हैं। जैसे टौंस घाटी क्षेत्र में रॅवाई में निवास करने वालो को रवॉल्टा और जौनसार बाबर वालो कों जौनसारी कहॉ गया है। इन क्षेत्री समाज में कुछ सॉस्कृतिक विभिन्नताऍ भी देखी गयी हैं। निशचित रूप से कहॉ जा सकता है कि लघु परम्पराओ का एक स्थानीय क्षेत्र होता हैं। एक छोटे से क्षेत्र के अन्दर जो विश्वास धीरे–धीरे विकसित होता है उन्हे कुछ समय बाद एक धार्मिक कृत्य का रूप प्राप्त हो जाता हैं। इसके परिणामस्वरूव ऐसे विश्वास और धार्मिक कृत्य ही लघु परम्परा का रूप धारण कर लेते हैं। टौंस घाटी की लघु परम्परा निरक्षर कृषको की परम्परा है जो कि बाद में विकसीत होकर स्थायित्व प्राप्त करती हैं, इसमें मुख्यत लोक गीत, लोक कथाऍ, रीति–रिवाज, स्थानीय मेले, कहावतें, जादू टोने की क्रिया के साथ–साथ क्षेत्र में व्याप्त सॉस्कृतिक क्रियाऍ आदि का लिखित रूप नही हैं, ये मौखिक रूप से पीढी दर पीढी हस्तान्तरित हीती रहती हैं।

जीवंत लोक परम्पराओ में लोक देवता (Folk Deity)

जीवंत लोक परम्पराओ से आशय है कि जो परम्परायें हमारे लोक में सदियो से चली आ रही है। जिसमें पूर्ववती का समावेश तो है पर उसमे आगे जाने की बात भी है पूर्ववर्ती का सातत्व है, अधिपत्य नही।[13] यह बात सही है कि पीढी–दर–पीढी गतिमान हैं जो कि हमारे पूर्वजो द्वारा हमे मौखिक रूप से

हस्तान्तरित होती हैं। इसमें कुछ चीजे छूटती जाती है और कुछ जुड़ती है पर लोप किसी का नही होता। जहां तक मध्य हिमालय की जीवंत लोक परम्पराओं की बात है तो यह कहने में संकोच न होगा कि यह पूरा क्षेत्र महाभारत के नायक और खलनायको को देवत्व प्रदान किये हुए हैं।

पोखू देवता (न्याय का देवता)

उत्तरकाशी जनपद के रॅवाई क्षेत्र मे टौंस घाटी के मोरी विकासखण्ड के अंतरर्गत सिंगतुर पट्टी का नैटवाड गांव जो कि रूपिन सुपिन के संगम

नैटवाड का पीखू मन्दिर

पर अवस्थित है, यही पर पोखू देवता का प्रसिद्ध छत्र–शैली का काष्ठ मन्दिर (पैंगोडा शैली) अवस्थित है। जनमानस में पोखू को यक्ष देवता के रूप में मान्यता प्राप्त है जो कभी क्षेत्र विशेष "फतेहपर्वत" तथा "पंचगाई" पट्टियों को जाने वाले मार्गों की रक्षा करता था।[14] लोक–मान्यता है, कि इस मार्ग से जाने वाले किसी भी व्यक्ति को सर्वप्रथम पोखू देवता की आज्ञा लेनी पड़ती हैं तभी वह "फतेहपर्वत" या "पंचगाई" की ओर जा सकता है।

लोक मान्यता है कि पोखू देवता एक नरभक्षी राक्षस था जब महासू देवता (स्थानीय देवता) ने मेन्द्रथ नामक स्थान मे एक राक्षस का वद किया और उसका सिर जैसे ही सुपिन के तट पर गिरा तो उसने पुनः राक्षसी रूप धारण कर लिया लोकमान्यता है कि ये नर भक्षी राक्षस हर दिन एक व्यक्ति की बली लेता था। एक दिन जिस परिवार की बली देने की बारी थी उसका एक ही बेटा था। संजोग वश उसी दिन उसके यहॉ पोरा गॉव का बह्माण आया। उस की बुढि माता को देख कर उसने स्वंय बली पर जाने का निर्णय लिया, निर्धारित स्थान पर पहुंचते ही वहॉ पर राक्षस आ गया। बह्माण तंत्र मंत्र विधा का निपुण था उसने अपनी तंत्र विद्या से राक्षस को वश मे कर बलि न लेने के लिये राजी किया। तत्पश्चात उसने

उसे नैटवाड क्षेत्र में देवस्वरूप हर दिन पुजने तथा बकरे की बली लेने को मनाया गया।[15]

पोखू देवता समस्त रंवाई अंचल में न्याय के देवता के रूप में ख्याति प्राप्त है। यह मान्यता इस देवता को टिहरी रियासत के समय में टिहरी नरेश द्वारा मिली थी।[16] टिहरी नरेश जब किसी झगड़े का निपटारा नहीं कर पाते थे तो उस झगड़े का फैसला पोखू देवता पर छोड़ देते थे।[17] हर झगडे का निपटारा मन्दिर प्रागण में माली द्वारा किया जाता हैं, दोनो पक्षो को माली मन्दिर प्रागण में बैठाकर उस झगडे का निपटारा करता हैं जिस पर विवाद चल रहा है। देवस्वरूप या देव–वाणी मानकर जो फैसला माली द्वारा दिया जाता है वह सभी को मान्य होता हैं।

मन्दिर में देवकक्ष तक पहुंचने के लिए दो दरवाजों से होकर जाना पड़ता है या ये कहे कि मन्दिर की तलछद योजना में यज्ञमण्डप, मण्डप व गर्भगृह का प्राविधान है। गर्भगृह में अवस्थित पोखू देवता को किसी भी दर्शनार्थी को दर्शन नहीं कराये जाते यहाँ तक कि पुजारी भी जोत (दीपक) को देवता की मूर्ति की तरफ मुंह फेर कर या ये कहे कि पीठ दिखाकर जलाता है। मूर्ति के संबंध में लोकमान्यता है कि यदि व्यक्ति देवता की मूर्ति के दर्शन कर लेता है तो देवता उसका भी भक्षण कर लेता है। जैसा कि लोकमान्यता हैं कि किसी पुजारी द्वारा मूर्ति के दर्शन करने की चेष्ठा की गयी फलस्वरूप उक्त पुजारी मंदिर से बहार ना आ सका, यानि कि देवता ने उसका भक्षण कर दिया उसका देहान्त प्रवेश द्वार से वहार निकलने से पहले ही हो गया, ये एक संयोग रहा हो या हकीकत पर उसके पश्चात से ही मुर्ति के दर्शन पूजारी भी नही करता हैं। यह भय का वातावरण समस्त क्षेत्र वासियों में देखा गया हैं। वर्तमान समय में शोध के दौरान इस देवता से सम्बधित अनेक जानकारिया शोधार्थी को प्रात्त हुई हैं जिस से यह कहॉ जा सकता है कि पोखू देवता इस क्षेत्र का मान्य देवता है।

कर्ण देवता से संबंधित जीवंत परम्परायें

रवांई क्षेत्र में महाभारत के चरित्र नायकों को देवत्व प्रदान किया गया है। जो कि इस क्षेत्र में प्रतिष्ठित लोक देवताओं के स्वरूप से ज्ञात होता है। अध्ययन क्षेत्र में टोंस घाटी की सिंगतूर पट्टी में महाराजा कर्ण की पूजा की जाती है, तथा कर्ण इस पट्टी का ईष्ट देवता है। कर्ण देवता का मन्दिर नैटवाड़ से 2 किमी0 उत्तर–पूरब में देवरा गाँव में अस्थित हैं, जो कि 11 वीं शताब्दी ई0 का बना हुआ माना जाता है।[19] यह मन्दिर गाँव के मध्य में छत्र–शैली (पैगोड़ा) प्रकार से पुनः निर्मित किया गया प्रतीत होता है। हिमालय के ही नेपाल, भूटान, सिक्कम, हिमाचंल प्रदेश एंव पश्चिम गढवाल हिमालय में पैगोड़ा शैली का बड़ा

ही सामर्थ परिचय मिलता ह।[20]

मुख्य मन्दिर के देव–मण्डप में कर्ण की धातु प्रतिमा के साथ शल्य की प्रतिमा भी विद्यमान है। मन्दिर के दाहिने ओर अन्न भण्डार तथा पंचायत घर भी है। मन्दिर के एक ओर गणेश की मूर्ति है तथा दूसरी ओर पांच पाण्डवों की स्मृति में 6 गोपस (प्रस्तर निर्मित मन्दिर समान आकृतियां) बने हुए हैं। जिसे स्थानीय लोग पांच पाण्डव तथा एक द्रोपदी का 'गोपस' मानते हैं।

सिंगतूर पट्टी के लोग जो टौंस की ऊपरी उपत्यका में निवास करते हैं, कर्ण को एक अराध्या देवता के रूप में मानते हैं। वे कर्ण को **"राजा कर्ण"** के नाम से पुकारते हैं। महाभारत– महाकाव्य में कर्ण को पाण्डवों तथा कौरवों के बीच की एक महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में प्रस्तुत किया गया है; एक बार पुनः कर्ण यहां भी मध्यस्थ की भूमिका में नजर आता है। पाण्डव सिंगतूर के नीचे वाले भागों में निवास करते हैं जबकि कौरव ऊपरी भागों (सूपिन घाटी) में निवास करते हैं। इसमें से प्रत्येक उपक्षेत्र को पुनः दो हिस्सों में बाँटा गया प्रतीत होता है। जिसमें राजा कर्ण का मन्दिर अवस्थित है। जहाँ सभी चार भू–क्षेत्र आपस में मिलते हैं। देवरा गाँव मध्य में अवस्थित हैं, प्रत्येक दिन ब्राह्मण पुरोहित, कर्ण की पूजा करता है। पुजारी ब्राह्मण वर्ग मे नौटियाल जाति का ही होना चाहिए जो अनिवार्य रूप से मन्दिर के नजदीक ही निवास करता हो। ऐसा प्रायः माना जाता है कि ये पुजारी गाँव के बाहर बहुत कम ही निवास करते हैं, क्योंकि देवता उन्हें ऐसा करने की अनुमति नहीं देता है।[21] कर्ण का आदेश है, कि कोई भी पुजारी रोजगार के लिए अन्यत्र नहीं जायेगा। नही तो उसे धोर विपत्ति का सामना करना पडेगा[22], फलस्वरूप इस क्षेत्र के नौटियाल जाति के लोग जो कि मन्दिर के पुजारी है का पलायन नही हुआ वो लोग इस मन्दिर से ही अपनी आजीविका चलाते है तथा वर्तमान समय में कृषि–पशुपालन भी उनकी आजीविका का आधार हैं।

न्याय के देवता

कर्ण की जो छवि लोक में हैं, वह एक नैतिक रूप से सर्वश्रेष्ठ देवता की है। राजा कर्ण का दोहरा चरित्र एक राजा तथा दुसरा त्यागी के रूप में परिलक्षित होता है। स्थानीय झगड़ों को निपटाने में कर्ण महाराज की भूमिका सर्वोपरि होती है। कर्ण का **'पश्वा'** (माली) थोड़ी देर सबकी बातों को सुनता है तथा एक तरफ बाजगी ढाक से क्वारी को बजाता रहता है, तब पश्वा अपनी कमीज उतारता कर मुट्ठी भर राख अपनी हथेली पर रखता है,, तत्पश्चात् अपने बदन पर उस राख को मलता है, राख को उठाकर मलना इस बात की ओर संकेत करता है कि पश्वा अपने अंतिम संस्कार की ओर जा रहा है, तथा अब वह जो भी बोलेगा वह अंतिम सत्य होगा। लोकमान्यतानुसार मृत्यु के समय

प्रत्येक व्यक्ति सत्य बोलता हैं। यह स्थिति तब आती है जब किसी गाँव की समस्या को उस गाँव के वृद्ध व्यक्ति, पंच, मुखिया भी हल नहीं कर सकते तथा वे किसी भी प्रकार से सर्वसम्मत फैसला निकालने में सक्षम नहीं होते।[28] दूसरे शब्दों में हम इस निर्णय में पहुंचते हैं कि रंवाई के इन लोक देवताओं को आज भी राजा के रूप में देखा जाता है; जिसके लिए एक सामाजिक–स्वीकृति भी देखने को मिलती है। यही वजह है, कि इनके अपने–अपने क्षेत्र बंटे हुए हैं। ये अपने–अपने क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करते हैं।

लोक देवता महासू

महासू देवता समस्त हिमाचंल प्रदेश, जौनसार एवं रँवाई क्षेत्र का प्रसिद्ध अराध्या देवता है।[24] महासू देवता का मुख्य मंदिर हनोल (जनपद देहरादून) रंवाई क्षेत्र की सीमा पर स्थित है। इसी प्रकार मध्य हिमालय के टौंस घाटी

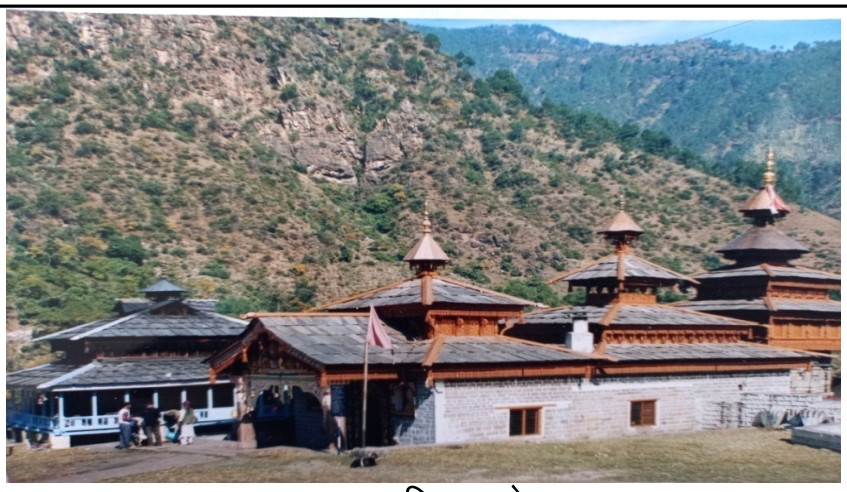

महासु मन्दिर इनोल

क्षेत्र में महासू के कई काष्ठ निर्मित छत्र व मंजिल प्रकार मन्दिर अवस्थित हैं। पैगोडा़ शैली से निर्मित हनोल के काष्ठ मन्दिर का प्राचीन गर्भगृह भाग प्रस्तर निर्मित हैं। यहॉ देवता के बर्तन व हथियार रखे है तथा लकडी के सिहासन पर चार भाई महासु की धातु प्रतिमा पुजा हेतु रखी गयी है। मंदिर के पिछले भाग मे बीरखम्भ है, लोकमान्यता हैं कि ये अनिष्टकारी शक्तियो से देवता की रक्षा करता है।

पूर्व समय में महासू देवता गढ़वाल में नहीं जाना जाता था। लोकमान्यता है कि इस देवता को यहां लाने का श्रेय **"मैन्द्रथ"** गाँव के **"ऊना भाट"** नामक ब्राह्मण को जाता है। ऊना भाट नामक व्यक्ति अपने क्षेत्र की रक्षा हेतु विपत्तियों का सामना करते हुए कुल्लु–कश्मीर से महासू देवता को उत्तराखण्ड के इस

भू–भाग पर लाया और महासू देवता ने रँवाई, (जनपद उत्तरकाशी) जौनपुर (जनपद टिहरी) तथा जौनसार बावर क्षेत्र (जनपद देहरादून) को अत्याचारी राजाओं के अत्याचार से मुक्ति दिलाई जिस कारण महासू देवता यहां का पूज्य देवता बन गया। स्थानीय जागर गीतों, पवाड़ों तथा स्थानीय बुजुर्ग व्यक्तियों से लिए गये साक्षात्कार तथा पॅवार वंशी शासक श्यामशाह ने 1322–26 ई0 रँवाई में तिलकचन्द का नाती बेणी रौत जो कि महासू का अनुयायी था को भड के रूप में राजदरवार श्रीनगर बुलाया था।[25] उपरोक्त तथ्यो से स्पष्ट होता है कि महासू देवता का आगमन इस क्षेत्र में आज से लगभग 700 वर्ष पूर्व हुआ था। इस क्षेत्र पर उस समय गढवाल के पंवार वंशीय शासक जिनकी राजधानी श्रीनगर थी का शसन था।

मौखिक परम्पराओं में परिलक्षित "महासू" देवता

महासू देवता की उत्पत्ति से सम्बन्धित विभिन्न मौखिक लोक–परंपराओं से परिलक्षित उसका संबध महाशिव एवं नागवंश, शिवपार्वती और नागशक्ति से भी माना जाता है। फ्रेजर[26] ने भी इन की उत्पति शिव–पार्वती और नाग–शक्ति से मानी हैं। महासू मन्दिरो में स्पष्ट तौर पर दृष्टिगत् होता है, कि नाग तथा विष्णु को मन्दिर के बाहर स्थापित किया गया जबकि महासू को मन्दिर के अन्दर, रखा गया जो कि हनोल से प्रमाणित होता है, हाण्डा[27] ने कहा है कि गढवाल के अन्यत्र निवास करने वाले लोगो की तरह यमुना टौंस घाटी के लोग नाग व विष्णु की पुजा करते थे लेकिन बाद के काल मे महासू की पुजा करने लगे। यहॉ भगवान विष्णु सहित अनेक छोटे–छोटे प्रस्तर निर्मित मंदिर वाये हिस्से मे विद्यमान है।

महासू देवता से संबंधित कई पौराणिक मान्यताएं बतलाती हैं कि मूलतः उसका संबध कश्मीर से था तथा उसे नाग–देवता के रूप में पूजा जा रहा था जहाँ नाग सम्प्रदाय अत्यधिक प्रभावी था। ऐसा प्रतित होता हैं कि कश्मीर में महासू सम्प्रदाय महाशिव के गूढ़ शैव–सम्प्रदाय में परिवर्तन के दौर से गुजरा होगा।[28] वर्तमान में जुब्बल, बुशहर, सिरमौर, (हिमांचल प्रदेश) जौनसार बावर तथा रँवाई में महासू देवता का सत् विद्यमान है, वहां महासू देवता इतना प्रभावशाली है कि यदि किन्हीं दो पक्षों में झगड़ा चल रहा हो तो मुकदमें की जरूरत नहीं है। कोई एक पक्ष भूमि से एक ढेला मिट्टी या मकान से एक पत्थर निकालकर महासू के चौंथरे में रख दे और जब तक महासू का आदेश नहीं होगा कोई उस विवादास्पद चीज का उपयोग नहीं करेगा। एट्किन्स लिखते हैं कि इस प्रथा के कारण उस सारे क्षेत्र में आधे मकान खेत बंजर पड़े मिले थे। क्षेत्र भ्रमण के दौरान ऐसे अनेक भवन व खेत देखे गये जो कि विरान व बजंर थे जिस पर देवता का स्वामित्व था।[29]

महासू देवता अपने क्षेत्र में न्याय के देवता के रूप में प्रसिद्ध हैं, लोग अपने साथ हुए अन्याय को देवता के दरबार में प्रकट करते हैं; जिसका निर्णय देवता के अतिरिक्त न्यायालय भी नहीं कर सकता। यदि कोई व्यक्ति देवाज्ञा का उल्लंघन करता है उस पर देवता दोष लगा देता है और उसकी जमीन जायदाद पर स्वयं कब्जा कर लेता है, यह जमीन सदा के लिए बंजर पड़ी रहेगी इसे **'असाई भूमी** कहा जाता है।[30]

शेडकुड़िया महाराज

शेडकुड़िया देवता समस्त रुपिन घाटी क्षेत्र का प्रसिद्ध देवता है। इसका मुख्य स्थान दौणी है, लेकिन यह देवता छः महीने दोणी, छः महीने सट्टा, एक वर्ष भीतरी, एक वर्ष खन्ना, एक वर्ष मसरी तथा एक वर्ष खन्यासाणी गॉव में रहता है। शेडकुड़िया महाराज चार महासू देवताओं का बजीर है तथा चालदा

खन्ना का शेडकुड़िया मंदिर

महासू का वीर है जो कि चालदा के साथ चलता है।[31] पश्चिमी गढ़वाल हिमालय के फतेहपर्वत क्षेत्र में शेडकुड़िया महाराज की पूजा–अर्चना लगभग सम्पूर्ण चौदह गाँवों में की जाती है, वैसे इस देवता की पूजा महासू क्षेत्र में वीर के रूप में भी होती है, लेकिन फतेहपर्वत क्षेत्र में शेडकुड़िया की पूजा मुख्य देवता के रूप में होती है यह यहां का कुलदेवता भी हैं।

दुर्योधन / सोमसू :

दुर्योधन 22 गाँवों में पूजा जाता है, जो तीन पट्टियों पंचगाई, अडोर व बड़ासू के अर्न्तगत आते हैं। रेकचा, राला, पॉव, साँकरी, सावनी, सटुड़ी और हरिपुर (पुयंचा) गाँव को छोड़कर, प्रत्येक गाँव में देवता के काष्ठ और प्रस्तर निर्मित मन्दिर अवस्थित है।

दुर्योधन/सोमसू भ्रमण करने वाला देवता है। साल भर वह अपने स्वामित्व व प्रभावित गाँवों में भ्रमण करता है। प्रत्येक वर्ष यात्रा का आरंभ 21 जुलाई

दुर्योधन मंदिर जाखोल

(आषाढ़) को होता है। यात्रा आरंभ होने से पूर्व कृषक तथा विभिन्न गाँवों के बुजुर्ग लोग पुजारी के चयन हेतु जखोल गाँव में एकत्रित होते हैं, साथ ही साथ धामी (shaman), दरबान (Porter), कंण्डी (Basket) उठाने वाले जो धार्मिक अनुष्ठानों संबंधी वस्तुओं को ले जाते हैं; बाजगी जाम–रानी (Palanquin bearers) और पाँच सयाणा या, पाँच सम्मानित गाँव के लोगों का भी चयन होता है।

मुख्य पुजारी सफेद वस्त्र धारण कर लटु पकड़े रहता है, तथा लाल रंग के कपड़े को ओढ़े रखता है। यात्रा की पहली रात्रि दुर्योधन देवता की पूजा और गीत, नृत्य आदि होता है, जो रात्रिभर चलता है, इसे जागरण कहा जाता है। सुबह तक दुर्योधन/सोमसू देवता के सभी धार्मिक अनुष्ठानों को पूर्ण कर लिया जाता है, तत्पश्चात् दुर्योधन की डोली को विभिन्न आकर्षक रंगो के कपड़ों से सजाया जाता है। देवता संबंधी अन्य सामग्रियों व मूर्ति को एक कंण्डी में रख दिया जाता है जो स्थानिय भाषा में "कोट पीली" कहलाती है। बाजगियों (वाद्य यंत्र बजाने वाले लोग) के संगीत के साथ यात्रा का आरंभ होता है। देवता की वापसी यात्रा को "रक्षा फेर" कहा जाता है, देवता उन्हीं मार्गों व गाँवों से होकर जाता है, जिस मार्ग से पहले वह गया था।

देवता की यात्रा 14 जनवरी (मकर संक्रांति) को जखोल में संपन्न होती है। यात्रा कर रहे देवता को किसी व्यक्ति विशेष के घर में आमंत्रित करने को "देवगति" कहा जाता है; यह पहले से ही तय होता है कि अगले वर्ष किस गाँव में किस व्यक्ति के यहां देवता विश्राम करेगा? परंतु यदि उस गाँव में प्रदूषण हो तो इस स्थिति में लोक विश्वास है कि उस गाँव में किसी की मृत्यु या बच्चे के

जन्म (अशुद होना, इन दोनो ही प्ररकरण में 11 दिनो तक घर पर या घर के बहार परिवार का कोई भी सदस्य शुभ कार्य नही करता हैं।) की संभावना होती है।[32] ऐसी स्थिति में देवता को वहां रुकने के लिए मना किया जाता है। जितने समय तक देवता किसी अमुक व्यक्ति के घर पर रहता है, उसको पूजने का सारा खर्च उस व्यक्ति को उठाना पड़ता है। इससे पहले कि देवता आगे की ओर बढ़े, वह गाँव के मन्दिर में घूमने जाता है। यदि उस गाँव में मन्दिर नहीं है, तब देवता का माली स्थानीय झगड़ों को सुलझाता है। भक्तगण नृत्य करते हुए देवता की डोली को अपने कंधों पर उठाते हैं। लोकमान्यता है कि देवता स्वयं ही यात्रा में मार्गों का निदर्शन करता है। जब देवता आराम करता है तो एक मेले का आयोजन गाँव के लोगों के द्वारा किया जाता है। ऐसे आयोजन के अवसर पर सिहांसन को **"रथ"** कहा जाता है, जो कि मन्दिर के आँगन में ही होता है तथा इसके ऊपर देवता को बैठाया जाता है ताकि लोग उन्हें सम्मान दे सकें। देवता के ठहरने के दौरान लिवाड़ी, फिताड़ी, काशला, रेकचा, राला, डाटमीर गॉव में देवता को रथ के ऊपर रखा जाता है।

जिस व्यक्ति पर दुर्योधन की आत्मा आती है (**माली**), वह व्यक्ति नाच कर जो कुछ भी आदेश वहाँ की प्रजा को देता है, वहीं इस क्षेत्र के लोग करते हैं। एक ही देवी–देवता को मानने वाले विभिन्न ग्रामों के निवासी आपातकाल में एक दूसरे को सहयोग करते थे। वे लोग अपने भौगोलिक, सामाजिक, आर्थिक व धार्मिक क्षेत्र में दूसरे पड़ोसी ग्रामों का हस्तक्षेप पसन्द नहीं करते है। दूसरे देवता की परिसीमा में रहने वाले ग्रामीणों द्वारा अपने देवता की सीमा में निवास करने वाले लोगों के प्रति वे हस्तक्षेप नहीं चाहते है।[33]

उक्त कथनो से विधित होता हैं कि गढवाल हिमालय के गॉवो में विशेष कर टौंस घाटी क्षेत्र में लोक संस्कृति पश्चात्यीकरण के बीच भी कुछ हद तक जीवंत हैं। यह संस्कृति यहॉ के ग्रामीण, जनजातीय अशिक्षित और परम्परावादी समूह का प्रतिनिधित्व करती हैं। यहां अनेक लघु परम्पराए प्रचलित है जिनका कोई लिखित इतिहास नही है, यह यहॉ के विचार और भावनाओ की एक अदृष्य श्रृखला हैं। जिसे एक पीढी दूसरे पीढी को देती हुई चली जाती हैं। इसका निर्माण मुख्यतय यहॉ के ग्रामीण समाज की लोक विशेषताओ से हुआ हैं। जैसे – लोक गीत, लोक नृत्य, लोक कथाएँ, लोक कहावते व लोगो के रीति–रिवाज आदि। टौंस घाटी की ये लोक परम्पराएँ मुख्यत मौखिक हैं तथा इनमें सामूहिकता की भावना हैं। जो कि किसी ना किसी रूप से समाज के प्रत्येक व्यक्ति को जोडे रखती हैं। यह यहॉ के पिछडे हुए समाज की सम्पति हैं तथा क्षेत्र की वास्तविक संस्कृति को जानने का सशक्त और विश्वसनीय माध्यम है। इसका सीधा संबंध यहॉ के कृषक समाज से हैं। औधोगीकरण, नगरीकरण, विज्ञान और

तकनीकी ज्ञान में प्रगति होने से टौंस घाटी क्षेत्र में भी अनेक प्रकार के परिवर्तन हो रहे है फलस्वरूप यहॉ के ग्रामीण समाज पर भी इसका काफी प्रभाव पड़ रहा हैं। जिसके चलते यहॉ की लोक संस्कृति धीरे–धीरे धूमील होती जा रही हैं। टौंस घाटी क्षेत्र में बहुत सी ऐसी घटनायें है जिससे सम्पूर्ण क्षेत्र प्रभावित हुआ हैं। इन घटनाओं से जुड़ी भावना का बाद में ग्राम्यीकरण हो जाता है। फलस्वरूप क्षेत्र में विशेष अवसरो पर घटित ये घटनाये पूज्य होती हैं। प्रस्तुत अध्ययन में ऐसी घटनाओ को नही लिया गया हैं।

सन्दर्भ

1 *एपि0 इ0, खण्ड़–2, पृष्ठ–447.*

2 *भारतीय परम्परा, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल, प्रथम संस्करण, 1989 पृष्ठ–1*

3. *रैडफील्ड, राबर्ट : द लिटिल कम्यूनीटीज : व्यूप्वाइटस फार द स्टडी ऑफ द ह्यूमन होल्स, शिकागो यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस, 1955. पृष्ठ–55.*

4. *वही, पृष्ठ–42.*

5. *मजमूदार, डी0एन0: कास्ट एण्ड कम्यूनीकेषन इन एन इंडीयन वीलेज, एशिया पब्लिसिंग हाउस, 1958. पृष्ठ–24.*

6. *रैडफील्ड, राबर्ट : पूर्वोक्त 1956. पृष्ठ– 55.*

7. *मिल्टन सिंगर, : द कल्चरण पैटर्न ऑफ इंडीयन सिवीलाइजेषन, इन फोर ईष्टर्न क्वाटर्ली, वाल्यूम 15, 1955. पृष्ठ 84*

8. *जे0 पी0 सिंह, :आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन, (द्वितीय संस्करण) 2016 दिल्ली, पृष्ठ– 408.*

9. *मेसेन्जर, जी0सी0, : फोक रीलीजन, इन फोकलोर एण्ड फोकलाइफ, सम्पादन आर0 एम0 डार्सन, द यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस, शिकागो, 1972 पृष्ठ–220.*

10. *श्रीनिवास, एम0एन, : रिलीजन एण्ड़ सोसायटी एमोग द कोरेगस ऑफ साउथ इण्ड़िया, ऐशियन पब्लिसिग हाउस मुम्बई, 1952 पृष्ठ–179.*

11. *गेट ई0 एम0 : सेन्ससेस ऑफ इण्ड़िया, 1901, पृष्ठ–215.*

12. *मेन्ड़लवामे डी0 जी0 : इन्टरोडेक्षनः प्रोसेस एण्ड स्टेक्चर इन साउथ एशिया रिजन, (इन रीजन इन साउथ ऐशिया, एड़वर्ड वी0 हापर ऐडिटर 2005 चच.5. 20) यूनिवर्सिटी ऑफ वाशिंगठन प्रेस, पृष्ठ–10.*

13. *मिश्र विद्यानिवास : : पूर्वोक्त, 1989, पृष्ठ–1*

14. *कगडियाल एस0 के0 : पश्चिमी गढवाल हिमालय की स्थापत्य विरासत का अध्ययन (उद्भव, विकाश एंव जीवन्त परम्परा कें संदर्भ में) अ0प्र0शो0प्र0 हे0ब0ग0 विश्वाविद्यालय श्रीनगर गढवाल 2005 पृष्ठ–286.*

15. *वही, पृष्ठ–287.*

16. *वही, पृष्ठ–286.*

17. *वही, पृष्ठ–286*

18. *कगडियाल,एस0 के0: पूर्वोक्त 2005, पृष्ठ–287, साक्षात्कार– बाजगी, भुलगीदास, साक्षात्करदाता ग्राम देवरा, जनपद–उत्तरकाशी दिनांक 26–03–07.*

19. कगडियाल,एस0 के0, : पूर्वोक्त 2005, पृष्ठ–136,137,
20. वैद्य किशोरीलाल, : हिमाचंल के मन्दिर : एक सांस्कृतिक अध्ययन, 1995, दिल्ली, पृष्ठ–57.
21. सैक्स एस0 विलियम : डान्सिंग द सेल्फ प्रसनिहेड एण्ड परफोरमेन्स इन पाण्ड़व लीला ऑफ द गढवाल, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस न्यूर्याक, 2002, पृष्ठ–105.
22. कगडियाल एस0 के0, सकलानी पी0 एम0 व अन्य : कर्ण मन्दिर देवरा : स्थापत्य एवं परम्पराएँ, डॉ हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर की शोध पत्रिका अंक–62, 2010, पृष्ठ–92.
23. कगडियाल एस0 के0, : पूर्वोक्त 2005, पृष्ठ–292.
24. वही, पृष्ठ–297.
25. वही, पृष्ठ–300,301.
26. फ्रेजर : 1823, हिमालयन माउण्टेन, लन्दन, पृ 0 71.
27. हाण्ड़ा ओ0 सी0 एण्ड जै न, मधु : 2003 आर्ट एण्ड आक्रि टेक्चर आफ उत्तरांचल भावना सुमस एण्ड प्रिन्टस. दिल्ली पृष्ठ–101,102.
28. हाण्ड़ा ओ0 सी0 एण्ड : 2003 आर्ट एण्ड आक्रिटेक्चर आफ उत्तरांचल जैन, मधु भावना सु मस एण्ड प्रिन्टस. दिल्ली पृष्ठ–101.
29. एटकिन्सन ई 0टी0 : 1873, हिमालयन गजेटियर, भाग–3, पृ 0 375.
30. रावत प्रलहाद सिंह : 1998–99 "हनोल का महासू देवता", पृ 0 77.
31. कगडियाल एस0 के0, : पूर्वोक्त 2005, पृष्ठ–308.
32. वही, पृष्ठ–312.
33. विजल्वाण, राधेश्याम (रवांल्टा), : 2003 मध्य हिमालय की रियासत में ग्रामीण जनसंघर्षों का इतिहास (रियासत टिहरी गढ़वाल 'घाड़ा व 'ढड़क') विजल्वाण प्रकाशन पुरोला (उत्तरकाशी) पृष्ठ 74,75.

मङ्गलम् -वर्ष 13(02) भाग-XXV, अगस्त 2022
ISSN-0976-8149 पृ.-171-176

कोविड–19 और ''सर्वेभवन्तुसुखिनः के भाव को साकार करती लोककला संस्कृति

पूजा श्रीवास्तव *

सारांश

भारतीय लोक कला संस्कृति वास्तव मे 'सर्वेभवन्तु सुखिनः' के भाव को साकार करती हुई कोविड–19 की विकट परिस्थिति में एक प्रेरना–पुंज बन कर हमारे सामने प्रकट होती है, जिसकी आशामयी किरणों ने हमारे निराशा से भर हृदयों को आलोकित करने का सफल प्रयास किया और इस कार्य को सफल बनाने में हमारे लोक कलाकारों ने विशेष भूमिका निभाई जिसमें अम्बिका देवी, श्रीप्रकाश जोशी, अपिन्द्रा सेन, द्वारका प्रसाद जी, तुलसी निम्बार्क जी, धनीराम जी, चित्रकार विजय आदि का नाम विशेष रूप से सामने आया, जिन्होंने कोरोना महामारी के कारणों, बचाव व सुरक्षा के नियमों को अपने चित्रों द्वारा समझाया तथा साथ ही यह भी बताया कि समाजिक दूरी बनाते हुए कैसे एक दूसरे से संपर्क रख सकते है। अपने चित्रों में नायक–नायिकाओं को मास्क पहने हुए दिखाकर व सैनिटाईजर का भली भांति उपयोग करते हुए चित्रित किया ताकि समाज के लोग इसकी महत्ता को समझ सकें। इस विकट स्थिति में देश के कलाकारों, साधकों, व अन्य नागरिकों ने जिनसे सबसे ज्यादा प्रेरणा प्रदान की वह है हमारे देश की संस्कृति और योग साधना जिसने इस विचलित कर देने वाले माहौल में हमें आध्यात्मिक शक्ति व योग से जोड़े रखाता कि हम एकाग्र मन से और धैर्य पूर्वक इस महामारी का सामना कर सकें और अंततः यह प्रयास सफल भी हुआ।

सर्वेभवन्तु सुखिनः' का भाव ही लोक संस्कृति का आधार है और 'लोकसंस्कृति के भाव को आज विश्व की परिपाटी पर दिग्दर्शित करती है हमारी लोक कलाएं। वास्तव में लोक कलाएं प्राचीन काल से ही हमारे जीवन का अभिन्न अंग रही है। पीढ़ी दर पीढ़ी अपनी विरासत को आगे बढ़ाती यह सामूहिक रूप से स्रजन शील दिखती है, जो हमारे विकास का आधार है। हमारी संस्कृति, हमारे विचारों को, हमारी अमूल्य धरोहर को आज भी सभ्यता का ऑचल ओढ़ाये जो भारत भूमि की वास्तविक छवि को दर्शाती है, वही है हमारी 'लोककलाएं'।

'युगों–युगों लम्बी परंपरा है हमारी
हम हैं महान संस्कृति के वारिस।''

बिना किसी अविलंब, आश्रय, प्रोत्साहन और प्रलोभन के स्वतंत्र, स्वच्छंद एवं सौम्य गति से निरंतर हमारी महान संस्कृति की अंगुली को थामे लोककला संस्कृति आगे बढ़ती हुई चारों दिशाओं में अपना परचम लहरा रही है। पीढ़ी

* *असिस्टेंट प्रोफेसर, दयानन्द गर्ल्स डिग्री कालेज, कानपुर (उ०प्र०)*

दर पीढ़ी अपने मत, मान्यताओं तथा रीति–रिवाजों आदि मूल्यों को हस्तांतरित करते हुए वर्तमान में लोककला ने अपने स्वरूप को नवीन ढांचे में परिवर्तित भी किया है, अब परिसीमाओं में न सिमट कर उसने आर्थिक रूप से समृद्धि और सुदृढ़ता भी प्राप्त की है। सही परिप्रेक्ष्य में लोककला, लोकनृत्य तथा लोक साहित्य ऐसे महत्वपूर्ण स्रोत है जो सांस्कृतिक रंगमंच, कार्यशालाओं, औद्योगिक एवं लघु उद्योगों के प्रेरणा स्रोत का उद्‌गम स्थान है। वर्तमान समय में भारतीय लोककला को हम अंतराष्ट्रीय पटल पर स्थापित ही नहीं अत्यंत लोकप्रिय भी देख सकते है। लोककलाएं भारतीय संस्कृति की अनेकता में एकता के साथ आध्यात्मिकता के भाव को जोड़े हुए सदा से ही मानव कल्याण का भाव लिये अग्रसर रहीहै।

दो शब्द जो हमेशा से ही भारतीय पहचान के पर्याय बने हुए हैंवह है–संस्कृति और विरासत। कोविड–19 के दौरान कई परिस्थितयां ऐसी आई जिनका भारतवासी व कालाकार के मन मेंप्रतिकूल प्रभाव पड़ा, जिसने हमारे संस्कृति कर्मियों के हृदय को इस एकांत हुए वातावरण में मानोविचलित कर दिया था। अधिकांश रूप में सांस्कृतिक संस्थानों आर्ट गैलरी आदि को बंद कर दिया गया था, जिसने कार्यरत व्यक्तियों को गहराई तक प्रभावित किया है। हताशा भरे इस दौर में कुछ कलाकारों ने अपनी कला को निखारा तो कुछ ने मौन पड़े इस वातावरण में अपनी खोई हुई भावनाओं का मन की किसी को ने में तलाश ने का प्रयास किया तो कुछ घर में मिली किसी भी वस्तु में कला को तराश ने का सलीका ढूंढते रहे। किसी ने अपनी कविताओं के माध्यम से समाज को प्रेरित करने का प्रयास किया तो किसी ने अपने नाटक व नृत्य को प्रेरणा का माध्यम बनाया इन्हीं सब के बीच में कुछ चित्रकार भी उभरकर सामने जाए जिन्होंने अपनी 'प्रांतीय लोककला' को कोरोना महामारी पर विजय कैसे प्राप्त कर सकते है, यह सीख देते हुए समाज को जागरूक करने का सफल प्रयास भी किया कहीं न कहीं अनिरूद्ध सागरजी की कहीं ये पंक्तियां इस बात को सार्थक भी करती है कि :–

''कभी कभी शब्दों में वो ताकत नहीं होती जो आकार में होती है''–––

कोरोना महामारी के भीषण संकट के दौरान जब मनुष्य सिर्फ बातें व परामर्श से दूसरों तक अपनी बात को समझने में असमर्थ लग रहा था तभी इन कलाकारों ने अपने देश की संस्कृति को हृदय में धारण कर पारंपरिक अंदाज में चित्र बनाने आरंभ किये। दस्तकार की प्रवक्ता 'रियागुप्ता' जी ने बताया किभारत के हर राज्य के कोने–कोने में लोक कलाकारों ने पारंपरिक रूप से गांव के चौराहों पर, दीवारों पर ऐसे भित्ति चित्रों को चित्रित किया जिससे आम जनता में जागरूकता पैदा की जा सके।

बिहार के राशिदपुर गांव की एक कलाकार है अम्बिका देवी जी ने अपनी मधुबनी कला के द्वारा कोविड–19 से बचाव व सुरक्षा के पहलुओं को अपने चित्रों द्वारा दर्शाया जिसमें चित्रों में नायक–नायिका को फेस मास्क पहने दिखाया गया है तथा यह भी दर्शाया गया है बाजार आदि में कैसे सामाजिक दूरी बनाते हुए खरीदारी की जा सकती है। ऐसे ही भीलवाड़ा राजस्थान की प्रसिद्ध फड़ चित्रकार श्रीप्रकाश जोशी ने अपने चित्रों के माध्यम से फेस मास्क पहनने का संदेश लोगोंतक पहुंचया। भीलवाड़ा कोविड–19 के शुरूआती दिनों में एक हॉट–स्पॉट रहा था। फड़ चित्रकला जो कि राजस्थान की प्रसिद्ध लोक कला है तथा पारंपरिक रूप से कपड़ों पर की जाती है, कलाकार ने सामाजिक जागरूकता का माध्यम बनाया। इसी प्रकार उड़ीसा के रघुराजपुर की प्रसिद्ध पट् चित्रकार अपिन्द्रा सेन जी जिन्हों नेइस महाकारी के दौर में अपनी पेंटिंग में ऐतिहासिक पात्रो को मास्क पहने हुए दिखाकर कोरोना से बचाव का संदेश दिया।

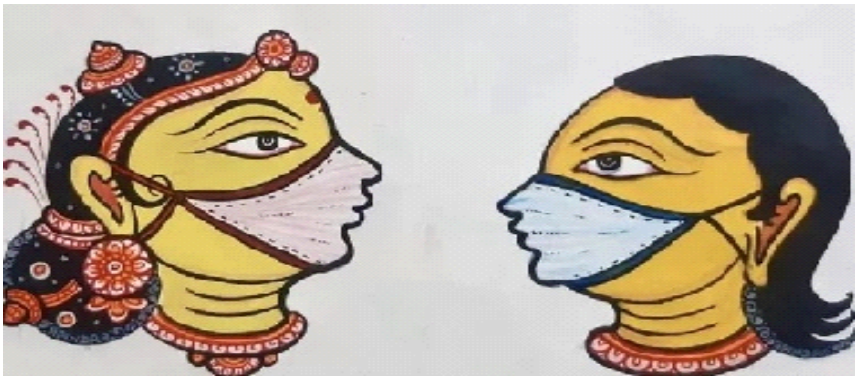

एक और वर्णन कावड़ कला के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। कांवड़ कला लगभग 400 साल पुरानी लोककला संस्कृति है जिसमें खूबसारे रंगों के माध्यम से एक लकड़ी के बॉक्स द्वारा कहानी सुनाने की एक विधा है, इसका जन्म राजस्थान में हुआ। चित्तौड़गढ़ जिले के रहने वाले द्वारका प्रसाद जी ने एक 'कावड़ पैनल' बनाया है जिसके माध्यम से उन्होंने कोविड–19 के मरीजों का अस्पताल में किस तरह से इलाज किया जा रहा है यह दर्शाया है। ऐसे ही कलाकारें में से एक है लघु चित्रकला के कलाकार तुलसीदास निंर्बाक जी जिनके चित्रों द्वारा भी सामजिक संदेश दिया गया जिसमें आपने भगवान कृष्ण को भजन गातेहुए तथा एक संत जो उनके समक्ष नृत्य कर रहा है उसको मास्क पहने दिखाया गया है और साथ ही चित्र में हाथ धाने के लिक्विड सोप की बोतल भी दर्शाई गई है।

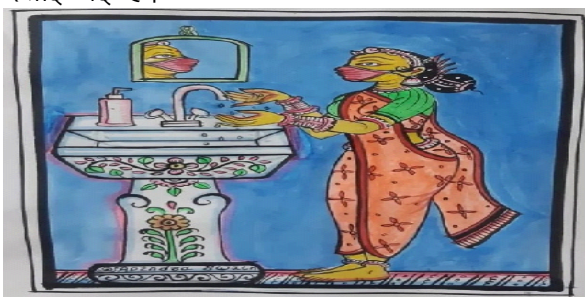

जाने माने अनेक कलाकारें में एक और लोककला कार का नाम इस समय सामने उभरकर आया, कांगड़ा कलम के धनीराम जी अपने कांगड़ा शैली में कोरोना रूपी राक्षस को कैसे पराजित कर सकते है, विषय परचित्र बनाएं है। इनके तीन चित्र जो कोराना पर आधारित हैः–

पहले चित्र में नायक को मास्क पहने हुए कोरोना रूपी राक्षस को तलवार से पराजित करते दिखाया गया है। इस दृश्य में नायक गले में एक

पटका पहने हुए है जिसमें से सैनिटाइजर को बौछारें निकल रही है, इस दृश्य के द्वारा यह समझाया गया है कि किस प्रकार से सेनिटाइजर का इस्तेमाल करके इस बीमारी से बचाव कर सकते है।

दूसरे चित्र में कलाकार ने स्त्रियों को मास्क पहने आपस में बातचीत करते हुए दिखाया है, इसचित्र के द्वारा सोशल डिस्टेंसिंग का अर्थ समझाने का प्रयास किया गया है। तीसरे चित्र में चित्रकार ने प्रधानमंत्री जी के अह्वान द्वारा दीप प्रज्जवलन का चित्र चित्रित किया है, जिसमें छः पात्रों को नायक–नायिका सहित शारीरिक दूरी बनाते हुए दीप प्रज्जवलित करते हुए दर्शाया गया है।

वास्तव में मन को विचलित कर देने वाले इस कोरोना काल में कुछ कलाकारों ने समाज को जागरूक करने वाले चित्रों को बनाकर इस विकट परिस्थिति में देश की सुरक्षा व बचाव के नियमोंको समझाते हुए अपना सहयोग प्रदान किया तो कुछ ने एकांत भरे इस माहौल में योग और साधना से जुड़ने का संदेश दिया ताकि हमारा मन विचलित न होने पाएं। ऐसे ही जाने कितने कलाकार एक प्रेरणा स्रोत बन कर इस समय हमारे सामने आए जिनके लोकचित्रों, गीतो, संगीतों, नृत्यों, नायकों आदि ने कोरोना रूपी महामारी से लड़ने की शक्ति प्रदान की। वास्तव में भारतीय संस्कृति व सभ्यता से जुड़े रहकर कलाकारों ने योग व आध्यात्मिक शक्ति के महत्व को जीवन के लिए उपयोगी बताया तथा यह समझाया कि इनसे जुड़े रहकर हम कैसे इस विकट स्थिति में भी धैर्य धारण कर सकते हैं।

हमारे देश की योग और संस्कृति ही है जो मानव की शारीरिक और मानसिक शक्ति का स्रोत है जो हमारे लिए एक बड़े कवच का काम करती है भारत एक ऐसा देश है जिसने इस विकट परिस्थति में अपने आत्मशक्ति को एकाग्र करके कैसे धैर्य पूर्वक इस महामारी का सामना कर सकते है। यह

लोगोंको समझाया है और इसमें हमारे लोक कलाकारों ने भलीभांति योगदान दिया है और हमेंहमारी संस्कृतियों और मूल्यों से जोड़ने का सफल प्रयास किया है। वास्तव में अपनी लोककला धरोहर के लिए यह कहना उचित ही है:–

'चल न हम उस गांव से आती भीगी की मिट्टी की खुशबू की ओर चलें, चलो हम अपनी संस्कृति की ओर चलें।''

सन्दर्भ

1. *शिखर चंद्र जोशी चित्रकला एवं लोककला (विविध आयाम)– कुमॉऊ विश्वविद्यालय,, प्रकाशक बुक डिपो, बरेली*
2. *कला त्रैमासिक, विशेषांक : लोक जीवन मेंकला, राज्य ललित कला अकादमी, उ०प्र०*
3. *कुमारी कीर्ति शर्मा भारतीय संस्कृति और कला, उगता भारत,www.ugtabhabhart.com*
4. *knowingindia.gov.inèhindi*
5. *www.ikipedia.org.7wiki*
6. *www.jagran.com*
7. *www.bbc.com*
8. *samalochan.blogspot.com*
9. *डॉ० अनिल जोशी, प्रकृति और संस्कृति से होगी कोराना वायरस की पराजय, अमर उजाला, 02 अप्रैल 2020*

मङ्गलम् -वर्ष 13(02) भाग-XXV, अगस्त 2022
ISSN-0976-8149 पृ.-177-181

विष्णु प्रभाकर का कहानी संसार

*डॉ० मनोज कुमार सिंह **

कहानी के उद्‌भव एवं विकास पर नजर घूमाएँ तो कहानी की वास्तविक शुरुआत सरस्वती पत्रिका के आरंभ से ही मानी जाती रही है। लेकिन हिंदी साहित्य में कहानी की एक सुधीर्घ परंपरा रही है। जिसे वैदिक काल से देखा जा सकता है। सर्वप्रथम कहानी का परिचय ऋग्वेद में मिलता है। ऋग्वेद में पुरूरवा–उर्वशी, यम–यमी आदि के संवादों के वर्णन में कथा रूप मिलता है। उपनिषदों में यम, नचिकेता, गार्गी, याज्ञवल्लक्य, श्वेतकेतु, अंगिरा इत्यादि कथाएँ मिलती है। पुराणों में कथाएँ पूजा–पाठ, धर्म–व्रत, पर्व, अवतार महोत्सव आदि पर आधारित है। बौद्ध और जैन धर्म की अनेक जातक कथाओं के बल पर धर्म का प्रसार किया गया। इन्हीं जातक कथाओं के बाद संस्कृत के दो ग्रंथों की रचना की गई– पंचतंत्र और हितोपदेश। इन ग्रंथों के अतिरिक्त वृहत् कथा–श्लोक–संग्रह कथा सरित्सागर बेताल पंचविशतिका, शुक्र सप्तति एवं सिंहासन द्वात्रिशिका इत्यादि संस्कृत के ग्रंथ उपलब्ध होते हैं। जिनमें कथा तत्वों का समावेश हुआ है। मध्यकाल में कथा 'प्रेमाख्यान' काव्य की वार्ता साहित्य में मिलती है। इन काव्यों में पद्‌मावत, चित्रावली, मधुमालती इत्यादि प्रमुख हैं। चौरासी वैष्णवन की वार्ता तथा दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता में कथा तत्व मिलते हैं। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में खड़ी बोली के विकास के साथ ही आधुनिक हिंदी कथा साहित्य का प्रारम्भ हुआ। उन्नीसवीं शताब्दी के आस–पास सरस्वती का प्रकाशन हुआ। इसमें किशोरी लाल गोस्वामी कृत 'इन्दुमति' राजा शिवप्रसाद कृत 'राजा भोज का सपना' आचार्य रामचंद्र शुक्ल की 'ग्यारह वर्ष का समय' बंग महिला की 'दुलाईवाली' चंद्रधर शर्मा गुलेरी की 'उसने कहा था' माधव राव सप्रे की 'एक टोकरी भर मिट्टी' आदि कहानियां अपनी पहल बनाने में सफल रही हैं।

हिंदी कहानी परंपरा में सैकड़ों नाम जुड़े, लेकिन जिन कहानीकारों की कहानियों ने सब को छुआ उनमें जयशंकर प्रसाद, चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, राधिकारमण, विष्णु प्रभाकर, जैनेंद्र कुमार, इलाचंद्र जोशी, विशंभर नाथ कौशिक, अज्ञेय, मोहन राकेश, भीष्म साहनी, कृष्णा सोबती, उषा प्रियंबदा, निर्मल वर्मा, राजेंद्र यादव, कमलेश्वर, मन्नू भंडारी, अमरकांत, कृष्ण बलदेव बैद, रेणु, शैलेश मटियानी, मार्कण्डेय, काशीनाथ सिंह, दूधनाथ सिंह, शिवप्रसाद सिंह, पानू खोलिया, मणि मधुकर, स्वदेश दीपक, रवींद्र कालिया, ममता कालिया, चित्रा मुद्‌गल, सूर्यबाला, दीप्ति खण्डेलवाल, सुधा अरोड़ा, सिम्मी हर्षिता, उदय प्रकाश, स्वयं

* *प्रवक्ता हिन्दी, सेंट जोसेफ कॉलेज, प्रयागराज (उ०प्र०)*

प्रकाश, पंकज विष्ट, शिवमूर्ति, अखिलेश, महेश कटारे, देवेंद्र सत्यार्थी, विजय दान देथा, मधुकर सिंह, रामदरश मिश्र, नमिता सिंह और अचला शर्मा आदि कहानीकारों का नाम उल्लेखनीय है।

1920 के आसपास जो प्रेमचंद ने उर्दू से हिंदी में कहानियां लिखना प्रारंभ किया तो उनकी कहानियों में समन्वय की भावना शामिल थी। उन्होंने अपना कार्य क्षेत्र गांव, शहर, निम्न वर्ग, मध्य वर्ग, किसान, श्रमिक तथा मजदूर एवं परिवार सब को एक साथ बनाया। उन्होंने अपनी कहानियों में मानवतावादी तथा आदर्शवादी दृष्टिकोण अपनाया। उसी मार्ग पर चलने वाले कहानीकारों में विष्णु प्रभाकर का नाम भी लिया जा सकता है जिन्होंने प्रेमचंद की भांति मानवतावादी और आदर्शवादी कहानियां लिखकर कहानीकार के रूप में एक विशिष्ट स्थान हासिल किया। संख्या की दृष्टि से विष्णु प्रभाकर का नाम ठीक प्रेमचंद के बाद बड़े आदर से लिया जा सकता है। उन्होंने ढाई सौ के करीब कहानियां लिखीं जिनमें विविधता देखने को मिलती है। उनकी संपूर्ण कहानियों को आठ खंडों में विभक्त किया गया है–

पहला खंड – मुरब्बी

दूसरा खंड – आश्रिता

तीसरा खंड – अभाव

चौथा खंड – मेरा वतन

पांचवा खंड – एक और कृन्ती

छठा खंड – धरती अब भी घूम रही है

सातवा खंड – पुल टूटने से पहले

आठवां खंड – जिंदगी एक रिहर्सल

विष्णु प्रभाकर कहानीकार होने के साथ–साथ एक सफल नाटककार और उपन्यासकार भी रहे हैं। 'आवारा मसीहा' उनकी बहु प्रसिद्ध जीवनी रही है। जो उन्होंने शरतचन्द्र के जीवन को लेकर लिखी है। विष्णु प्रभाकर एक सचेत कहानीकार रहे हैं। विष्णु प्रभाकर एक प्रगतिशील लेखक रहें हैं लेकिन मानवतावादी दृष्टिकोण उनकी कहानिओं में झलकता रहा।

विष्णु प्रभाकर अपनी कहानी लेखन के प्रेरण के संबंध में 'मेरी कथायात्रा' में लिखते हैं – ''यह तो अब ठीक ठीक याद नहीं। हाँ प्रेरणा की बात अवश्य बताई जा सकती है। मेरे परिवार में मेरी मां पहली पढ़ी लिखी नारी थीं। यह उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम दशक की बात है। उनके पास पुस्तकों का एक बक्स था। उन्हीं को फाड़–फाड़कर मैंने छापे के अक्षरों की महिमा को पहचाना।

कुछ बड़ा हुआ तो पिताजी की दुकान पर टोकरे में भरी खोज निकालीं। वहीं 'किस्सा हातिमताई' और 'स्सिा छबीली मटियारी' से लेकर राधेश्याम कथावाचक की रामायण, प्रेम सागर और सुखसागर तक का पारायण किया। वहीं चंद्रकांता, फिर संतति, फिर भूतनाथ की रोचक कहानियां पढ़ते–पढ़ते सोचता था, कैसे लिखी इन्होंने ये किताबें। क्या मै भी ऐसा लिख सकता हूँ।'' यही बातें उनकी प्रेरणदायी रहीं।।

इनकी प्रारंभिक शिक्षा कभी पंडित जी की पाठशाला तो कभी मौलवी साहब का मदरसा या फिर सरकारी स्कूल जो तीसरी कक्षा तक था में हुई। उसके उपरांत हुए अपने मामा जी के पास हिसार चले गए। वहां रहकर उन्होंने वेद, पुराण, बाईबिल, कुरान, महाभारत, रामायण सब पढ़ डाले। आठवीं में पढ़ते समय उन्होंने बाल सखा पत्रिका के संपादक को पत्र लिखा जो प्रकाशित हो गया, जिससे लिखने की लालसा बढ़ती गई। शुद्ध हिन्दी बोलने के कारण स्कूलों की प्रतियोगिताओं में भाग लेते रहते थे। दसवीं कक्षा के उपरांत आर्य समाज में भाषण देने लगे। धीरे–धीरे एक अच्छे वक्ता के रूप में उनकी हर जगह पहचान होने लगी।

सन 1931 में 'दिवाली के दिन' शीर्षक से उनकी एक कहानी लाहौर के 'हिंदी मिलाप' में प्रकाशित हुई। उस समय वे अपने नाम से कहानियां नहीं लिखते थे। जीवन के अभाव ने उन्हें एक बहु प्रतिष्ठित लेखक बना दिया। वे अपने परिवार की स्थिति के संबंध में लिखते हैं – ''अपने प्रारंभिक जीवन में मुझे वह जीवन जीना पड़ा जो मैं नहीं जीना चाहता था। वही अंतर्द्वंद्व, घुटन और संत्रास रास्ता का कारण बना। बात यह हुई कि सन् 1925 की प्लेग की महामारी में हमारा परिवार नष्ट हो गया। जो कमाऊ पूत थे वे चल बसे। हमारा सब कुछ नष्ट हो गया। दसवीं पास करते–करते परिवार गरीबी के चंगुल में फंस गया। मन था स्वाधीनता संग्राम में भाग लेने और पढ़ने के लिए लाहौर जाने का। कल्पना की जा सकती है तब मेरे मन में क्या हालत हुई।

अन्य महान लेखकों की भांति ही इनका आरम्भिक लेखन पद्य रचनाओं से आरंभ हुआ। इस संबंध में वे लिखते हैं – ''आरंभ में मैने कविताएं लिखीं। वह युग गद्य काव्य का भी था, तो मैंने कुछ गद्य काव्य भी लिखे, फिर कहानी भी लिखी, पर अन्ततः कहानी लिखना ही मुझे रास आया।'' मुंशी प्रेमचंद जी ने 'हंस' पत्रिका में उनकी कई रचनाएं प्रकाशित की। उनके देहावसान के उपरांत जैनेंद्र से उनका परिचय हुआ तथा जिन्होंने उन्हें कहानी लेखन के लिए प्रेरित किया। 'हंस' पत्रिका के माध्यम से उनका परिचय बाबू गुलाब राय, सियारामशरण गुप्त, यशपाल, भगवती प्रसाद बाजपेई, अज्ञेय, भदंत आनंद कौशल्यायन, सुदर्शन, त्रिलोचन, शमशेर बहादुर सिंह आदि सुप्रसिद्ध लेखको से हुआ। जिनका प्रभाव

उनकी कहानियों में देखने को मिलता है। सन् 1953–54 में अंतर्राष्ट्रीय कहानी प्रतियोगिता में उनकी 'शरीर से परे' कहानी को हिंदी विभाग में प्रथम पुरस्कार मिला था।

विष्णु प्रभाकर लगातार पचास वर्ष तक साहित्य रचना करते रहे। पचास वर्ष निरंतर लेखकीय जीवन किसी भी प्रतिभा के जीवन का संक्षिप्त काल नहीं होता। जीवन के कई पड़ावों से गुजरा हुआ इनका कहानी साहित्य अपनी विशेष पैठ रखता है। विष्णु प्रभाकर की कलम सदैव सत् के पक्ष में चलती दिखती है। कही भी उनकी कहानियों में माननीय मर्यादा का हनन या अश्लीलता का चित्रण देखने को नहीं मिलता। अपनी कहानियों के बारे में तभी तो विष्णु प्रभाकर जी लिखते हैं – ''मेरे पास वह कला भले ही ना हो, जो कहानी को कहानी बनाती है, पर झूठ का सहारा मैंने कभी नहीं लिया। इतिहास के मेरा नाम अंकित होकर रह जाए,, ऐसी कोई लालसा मुझे नहीं है।'' बात सत्य भी है कि विष्णु प्रभाकर को एक कहानी के रूप में जो स्थान मिलना चाहिए वह स्थान उन्हें नहीं मिल सका। मन में एक प्रश्न दस्तक देता है कि लगभग ढाई सौ कहानी लिखने वाले लेखक के पास ऐसा क्या नहीं है जो केवल मात्र तीन कहानियाँ लिखने वाले चंद्रधर शर्मा गुलेरी के पास था। दूसरा प्रश्न यह उठता है कि इतने बड़े कहानीकार को उभारने का प्रयास क्यों नहीं किया गया? यदि ज्यादा न कहा जाए तो प्रेमचंद जैसी आदर्शवादिता इनकी कहानियों में भी देखने को मिलती है। अज्ञेय, जैनेन्द्र तथा जोशी जैसी मनोवैज्ञानिकता इनकी कहानियों में भी दिखाई देती हैं। कमलेश्वर, भीष्म साहनी, मन्नू भंडारी, उषा प्रियंवदा तथा राजेंद्र यादव जैसी यथार्थता भी इनकी कहानियों में देखने को मिलती है। नागार्जुन, रेणु, रामदरश मिश्र, शैलेश मटियानी, मार्कण्डेय, काशीनाथ सिंह तथा शिव प्रसाद सिंह जैसी ग्रामीण छटपटाहट भी इनकी कहानियों में दिखाई देती है। फिर प्रश्न यह उठता है कि क्यों हम इतने बड़े कहानीकार को पूरी तरह नहीं जान पाए?

विष्णु प्रभाकर की कहानियों के कथानक बहुत ही सुगठित हैं। कहानियों में आदि से लेकर अंत तक कौतुहल बना रहता है। नयापन, नई शैली, विषय की विविधता उनकी कहानियों की विशेषताएँ रही हैं। वर्तमान जीवन का सजीव वर्णन इनकी कहानियों में दिखाई देता रहा है। इनकी कहानियों का मूल स्वर सामाजिक रहा है। इनका यथार्थवाद आदर्शोन्मुख रहा है। इन्होंने आधुनिकता को ग्रहण करते हुए अपनी कहानियाँ रची हैं। इनकी कहानियों में पाश्चात्य का अनुकरण या संत्रास नहीं दिखाई देता।

विष्णु प्रभाकर की भाषा और शैली अति उच्च कोटि की रही है। इस दिशा में वे आग्रह मुक्त हैं। अपनी बात को स्पष्ट और रोचक ढंग से कहने के

लिए इन्होंने पात्रानुकूल तथा अवसरानुकूल भाषा शैली का प्रयोग किया है। इनकी कहानियों में संस्कृत, उर्दू, फारसी, देशी–देशज आदि शब्दों के मिश्रण से भाषा बड़ी ही प्रवाहमयी हो गई है। इन्होंने अपनी भाषा शैलिओं में नाटकीय, पत्रात्मक, गाथात्मक मिश्रित सभी शैलियों का प्रयोग किया है। इनकी कहानियों के कथोपकथन बड़े ही स्वाभाविक एवं जीवंत होते हैं।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि विष्णु प्रभाकर उच्च कोटि के कहानीकार रहें हैं। उनका कहानी लेखन लगभग पचास वर्षों से भी अधिक का रहा है तथा ढाई सौ से अधिक कहानियां उन्होंने लिखी। अतः विष्णु प्रभाकर जी को मुंशी प्रेमचन्द के बाद का बड़ा कहानीकार कहा जा सकता है।

सन्दर्भ

1. *बलराम, समकालीन हिंदी कहानी, दिल्ली, दिनमान प्रकाशन, 1990.*
2. *प्रोफेसर कुमार कृष्ण, कहानी के नए प्रतिमान, दिल्ली, वाणी प्रकाशन, 2005.*
3. *कीर्ति केसर, समकालीन हिंदी कहानी विविध संदर्भ, दिल्ली, नचिकेता प्रकाशन, 1987.*
4. *राजेंद्र कुमार, स्वातंत्रयोत्तर हिंदी कहानी में ग्राम्य जीवन और संस्कृति।*
5. *कीर्ति केसर, स्वातंत्रयोत्तर हिंदी का समाज सापेक्ष अध्ययन।*
6. *विष्णु प्रभाकर की संपूर्ण कहानियां आठ भाग, प्रभात दिल्ली, 2002.*
7. *डॉ0 सुबेदार राय, स्वातंत्रयोत्तर हिंदी कहानी का विकास, अनुभव प्रकाशन, कानपुर 1981.*
8. *बलराम, समकालीन हिंदी कहानी, दिनमान प्रकाशन दिल्ली, 1990.*
9. *मधुरेश, हिंदी कहानीः अस्मिता की तलाश, आधार प्रकाशन, पंचकूला 1997.*

मङ्गलम् -वर्ष 13 (02) भाग-XXV,अगस्त 2022
ISSN-0976-8149 पृ.-182-186

हिन्दी खण्ड काव्य परम्परा में डॉ० जयसिंह ''व्यथित'' रचित ''राघवेन्द्र''

डॉ० वन्दना त्रिपाठी *

कवि क्रान्त द्रष्टा होते हैं। कवि जन्म लेते हैं, बनाये नहीं जाते। शक्ति, निपुणता, काव्यदि के अंकेषण, एवं काव्यज्ञ विक्षाभ्यास का एकीभूतकरण ही काव्य का हेतु बनता है। तभी उत्तम काव्य का सृजन सम्भव होता है। तीनों को समवेत रूप काव्य उद्भव का सृजन सम्भव होता है। किसी एक हेतु मात्र से ही काव्य सृजन सम्भव नहीं। इस दृष्टि से विचार करने पर ज्ञात होता है कि आलोच्य कवि डॉ० जयसिंह ''व्यथित'' जन्मता कवि हैं। इनकी काव्य विरचनशीलता में उक्त तीनों हेतु पुंजीभूत एवं समुदित रूप में विद्यमान है। ऐसे कवि व्यथित का जन्म उत्तर प्रदेश के सुल्तानपुर जनपद के मुख्यालय से लगभग 30–40 किलोमीटर दक्षिण–पूर्व में स्थित, विक्रमपुर मौजा–तेरये, भरखरे नामक स्थान पर दिनांक 5जनवरी सन् 1937 को गहरवारवंश में हुआ था।[1] डॉ० व्यथित जी का कार्यक्षेत्र गुजरात प्रदेश रहा है। हिन्दी साहित्य की सृजनशीलता की श्रीवृद्धि में अब तक इनकी 26 रचनायें विविध पुरस्कारों एवं सम्मानों से समादृत हो चुकी हैं। हिन्दी काव्य की प्रबन्ध काव्य खण्डकाव्य, कथा, संस्मरण समकालीन हिन्दी गजलें, गद्य लेखन आदि विधाओं के अतिरक्त अवधी और गुजराती भाषा साहित्य को भी आपने समृद्धि प्रदान किया है।

खण्डकाव्य परम्परा के पल्लवन को अग्रगति प्रदान करते हुए कवि व्यथित ने आर्तनाद बालकृष्ण युगदर्पण, युग चिन्तन, कैकई के राम, गीत निर्झर तथा राघवेन्द्र आदि अनेक खण्डकाव्यों की रचनायें की हैं। 'राघवेन्द्र' का प्रकाशन सन् 1993 ई. में शान्ति प्रकाशन, अहमदाबाद–38215 से हुआ। इसमें कुल 326 छन्दों की आवृत्ति हैं। कवि कथ्य सुस्पष्ट है कि भगवान राम अपनी पत्नी सीता के अपहर्ता के हन्ता होने से नहीं अपितु शबरी, अहिल्या, जटायु, निषादराज गुह और वानर राज सुग्रीव की अनन्या प्रीति के कारण राघवेर कहलाए थे। आठ सर्गों में विस्तृत इस खण्ड काव्य का प्रधान विवेचन हहल्योद्धार प्रकारण ही दीख पड़ता है, जो 2 सर्गों में अभिव्याप्त हैं जिससे व्यक्ति होता है कि कवि व्यथित की अन्तर्व्यथा अहल्या की पीड़ा में संसेन्द्रित है। जो व्यथित मन की कराह से व्यक्त होता है–

इिव लोक का दर्भ न करके, पावन बनी अहिल्या थी।
गूँगे के गुड़ जैसी हासत, धन्य हुई जो शल्या थी।

**सहायक अध्यापक पूर्व माध्यमिक विद्यालय, पूरेजालिम डीय रायबरेली (उ०प्र०)*

एक अहिल्या नहीं अरे! यह लाखों की है करुण कथा।
जिधर रठा कर नजर देखते, वहीं सिसकती खड़ी व्यथा।।[3]

रामकथाश्रित काव्य विरचन श्रृँखला में रचित 'राघवेन्द्र' नामक खण्डकाव्य के दर्पण में हमें नूतन जगत की समस्याओं, बाधाओं विसंगतियों आदि के निरसन की सुगमनीय वीथिका प्रशस्त रूप में प्राप्त होती है। नारी, वर्ण विभेद, सामाजिक शोषण पीड़न और सन्माद जैसे समस्याओं आदि के निरूपण हैं। इनके समाधान के मनोहर एवं सुगम मार्ग प्रशस्त हैं, जिन्हें कवि ने अपनी कल्पना से प्रस्तुत करने में सफलता प्रापत की हैं यह काव्य ग्रन्थ भक्ति श्रद्धा तथा कर्मशीलता की पावन वाणी से परिपूर्ण है। प्रतिभा एवं कल्पना का इसमें समवेत प्रयो है। कवि व्यथित ने इसके उद्देश्य को स्वयं स्पष्ट करते हुए लिखा है कि '''राघवेन्द्र की रचना का उद्देश्य सिर्फ इतना ही है कि हम अपने–अन्दर छिपी हुई विसंगतियों से डटकर लोहा लें और जीवन के कलुष को धोकर नवजीवन की नई डगर पर चलना सीखें''।[4]

इतना ही नहीं अपितु कवि व्यथित में आगे और भी स्पष्ट करते हुए कहा है कि,''जब राम शबरी के जूठे बेर खा सकते हैं। अहिल्या को सामाजिक न्याय दिला सकते हैं, पापी इन्द्र जैसों को उसके पापों के प्रायश्चित्त के लिए मजबूर कर सकते हैं, तो हम किस खेत की मूली हैं जो बात–बात में छूत–अछूत अथवा ऊँच–नीच का ढोल पीटते हैं। रा मार्ग पर चलने के लिए हमें राम के आदर्शों को जीवन में उतारना होगा। नफरत को दिल से निकाल कर बाहर फेंकना होगा। उनकी आड़ में अपना उल्लू सीधा करना छोड़ना होगा।''

रघुकुल भगवान श्रीराम को ही राघवेन्द्र के रूप में लोक स्वीकार है, और किसी को नहीं। क्योंकि महाराजा रघु के जगविश्रृत औदार्य श्रीराम में सन्निहित हैं, किसी अन्य में, नहीं। इसी लिए कवि ने अपने काव्य का नामकरण 'राघवेन्द्र' किया है।

ज्ञातव्य है कि इस काव्य का उपविभाजन कुल 8 सर्गों में किया गया है। अहल्या, शबरी, जटायु की मुक्ति निषाद राज गुह, सुग्रीव की प्रीति कर्त्ता भगवान राघवेन्द्र हैं जिनका विपुल एवं सुचारू निरूपण करना इस काव्य का वर्ण्य विषय नहीं है किन्तु उनका सन्दर्भित रूप काव्य में अवश्य दृश्यमान है, जिनसे काव्यकथा की सूत्रबद्धता निखरती है। इसमें राजमन्म कुल 11 पदों में, राम जन्मोत्सव 11पदों में, बाल वर्णन 23 पदों में निरूपित है। राम के विद्याध्यन का 20 छन्दों तथा विश्वमिर के आश्रम के सम्पधमान यज्ञों की रक्षार्थ राक्षस संहार वर्णन को 18 छन्दों में प्रस्तुत किया गया है। अहिल्या उद्धार का वर्णन काव्य के तृतीयांश में तथा सर्गों में विस्तारित है। यही वर्णन कवि के इस मन्तव्य को सिद्ध करने

में सफल दीख पड़ता है कि कवि की अन्तर्मन की व्यथा अहल्या सदृश नारियों की मुक्ति अथवा उद्धार पर केन्द्रित है। वे चिर उपेक्षित नारियों की स्वतन्त्रता की पक्षधरता में आकुल ही नहीं बहुव्याकुल हैं। राम के वैयक्तिक जीवन से श्रेष्ठतर उनके सार्वजनिक जीवन को कवि स्वीकार रकते हुए इस खण्डकाव्य में इसी मान्यता की स्थाना में सत्रशील दर्शित है। इसी उपक्रम में धनुर्भंग एवं राम विवाह क्रमशः 6 एवं 5 छन्दों में, सीता जन्म, एवं हरण में 1–1 छन्द में ही चित्रित किया है, अग्रिम अवशिष्ट छन्दों के माध्यम से निषाद राज गुह, शबरी, जटायु, सुग्रीव आदि पर रामकृपा का वर्णन हुआ है। कवि की यह सोच सभी को नूतन विचारधारा में प्रवाहित करने में सफल रही है–

अज्ञान गोत्र कुल शीला सीता पत्नी उसे बनाए थे।
नई चेतना नई व्यवस्था नया मार्ग अपनाये थे।[6]

इतना ही नहीं, अपितु कवि का यह विचार राघवेन्द्र नामक इस काव्य की रचना के सृजन का उद्देश्य व्यक्त करता है कि–

''राघवेन्द्र की रचना का उद्देश्य इतना ही है कि हम अपने अन्दर छिपी हुई विसंगतियों से डटकर लोहा लें और जीवन के कलुष को धोकर नव जीवन की नई डगर पर चलना सीखें।''[7]

राम भरत का मातृ–प्रेम कवि ने बड़ी सहजता के साथ चित्रित करते हुए कहा है कि–

देख भरत की हालत नाजुक राम फफक कर रोए थे।
वधु प्रेम की गहराई में सुधबुध सब कुछ खोए थे।
पहुँचे राम गुरु के पास जय रघुनन्दन जय श्रीराम।[8]
अवधपुरी सब लौटा जनमन
गुणगाया वे गाये थे।
राम–भरत का मिलन मनोहर
चरण पादुका लाये थे।
भरत बने अब सेवक उसके
जय रघुनन्दन जय श्रीराम।[9]

अन्ततः कवि की उद्भावना काव्यान्त में सुस्पष्ट होती है कि–

भेदभाव से पर राम जी
सबमें सबका रूप निहारें।
रोगी–भोगी शरण गहे जो

फोरन उसको पार उतारें।।[10]

दीपक हैं वे धर्म कर्म के, धन दौलत अभिराम धरा हैं धरे राम को कस कर फिर तो, जय रघुनन्दन जय सियाराम।।

ज्ञातव्य है कि इस काव्य के प्रत्येक चतुर्थ छन्द के अन्त में। ने ''जय रघुनन्दन जय सीयाराम'' की आवृत्ति से अपनी उद्भावना एवं राम भक्ति भावना को उद्घोषित किया है। जो मनोहारी लगता है। काव्य भाषा की शिथिलता तथा छन्दोव्यवस्था की विसंगति से भी काव्य अपने भावों को सम्प्रेषणीयता को गति प्रदान करने में पूर्ण समर्थ हो सका है। रघुनन्दन पद के प्रयोग से कवि अपने आराध्य भगवान श्रीराम के इसी नाम को स्वीकारता है। यह कृति रामकथाश्रित काव्य परम्परा में एक अभिनव चिन्तन और आयाम के मार्ग को प्रशस्त करती है। काव्य की पद्यात्मक तालबद्धता में कवि ने पदे–पदे किन्तु आद्योन्पान्त ''जयरघुनन्दन जय सियाराम'' की संध्वनियों की संयुक्त चारुता से मण्डित कर अपनी रचना कौशल की निजता की स्थापना किया है। इस काव्य में प्रेम और पीड़ा का प्रतिपादन हैं वस्तुतः जहाँ एक ओर संवेदना काव्य को प्राणवान बनाती है, वहीं दूसरी ओर काव्योद्भव में पीड़ा जननी का कार्य करती है। सर्वोदयी विचारधारा के सम्प्रेषक कवि व्यथित का चिन्तन शोषितों, पीड़ितों, दलितों एवं असहायों की पीड़ा पर केन्द्रित है। कवि इसीलिए नये विचार एवं मार्ग के प्रशस्ता के रूप में भगवान राम को सिद्ध कर नये सन्दर्भों में अनुपालनीय बनाने का संदेश देता है–

अज्ञात गोत्र कुल शीला सीता, पत्नी उसे बनाये थे।
नई चेतना नई व्यवस्था नया मार्ग अपनाये थे।[11]

इस प्रकार उपरितन विवेचनों से स्पष्ट होता है कि हिन्दी खण्ड काव्य परम्परा में डॉ० जयसिंह व्यथित विरचित ''राघवेन्द्र'' काव्य राम कथाश्रित कृतियों के कथय एवं तथ्य का एक नूतन आयाम प्रदान करता है। नये विचार एवं चिन्तन को प्रशस्त करता हुआ लोकतन्त्र में राम राज्य की अवधारणा को पुष्टि प्रदान करता है। भक्ति रस प्रधान काव्यों में अपना निज वैशिष्ट्य रखता है।

''जय रधुनन्दन जय सियाराम'' की आवृत्ति से अपनी उद्भावना एवं राम भक्ति भावना को उद्घोषित किया है। जो मनोहारी लगता है। काव्य भाषा की शिथिलता तथा छन्दो व्यवस्था की विसंगति से भी काव्य अपने भावों की सम्प्रेषणीयता को गति प्रदान करने में पूर्ण समर्थ हो सका है। रघुनन्दन पद के प्रयोग से कवि अपने आराध्य भगवान श्रीराम के इसी नाम को स्वीकारता है। यक कृति राम कथाश्रित काव्य परम्परा में एक अभिनव चिन्तन और आयाम के मार्ग को प्रशस्त करती है।

सन्दर्भ

1. द. आचार्य मम्मट कृत–काव्य प्रकाश उल्लास–

   शक्तिर्निपुणता लोकशास्त्र काव्याद्यवेक्षणात्।

   काव्यज्ञ शिक्षयाभयास इति हेतुस्तदुद्भवे।।

2. 'कर्मयोगी' डॉ० जयसिंह व्यथित अभिनन्दन ग्रन्थ गुजरात हिन्दी विद्यापीठ ओढ़व अहमदाबाद–2006 7/2 पाँच जनवरी सन् सैंतीस को हुआ व्यथित जी का अवतार। विक्रमपुर की धरती पुलकित,, पुलकित हुआ निखिल संसार।

   –डॉ० शम्भूनाथ सिंह, अध्यक्ष गणित विभाग, वीर कुंवर सिंह वि.वि. द्वारा बिहार कृत।

3. राघवेन्द्र, पृ०, पद्य–127
4. राघवेन्द्र 'आत्म निवेदन' –पृ०– 4
5. वहीं पृ०–3
6. राघवेन्द्र सर्ग–5, पय–210
7. राघवेन्द्र –आत्मनिवेदन, पृ०–4
8. वहीं ,सर्ग–7, पृ०–296
9. वहीं पद्य–308
10. वहीं, सर्ग–8, पद्य–360
11. राघवेन्द्र पद्य–359

मङ्गलम् -वर्ष 13 (02) भाग-XXV,अगस्त 2022
ISSN-0976-8149 पृ.-187-191

श्री अरविन्द का सामाजिक अनुचिन्तन

डॉ० ऋतेश त्रिपाठी *

भारत की पुण्यभूमि पर अनादि काल से ऋषियों मुनियों एवं साधुजनों का आविर्भाव होता रहा है। जिनके तपःपूत चिन्तनों में देश, समाज, व्यक्ति एवं परिवार विषयक व्यवस्थाओं का निदर्शन प्राप्त होता रहा है। इन्हीं व्यवस्थाओं से हमारे देश और समाज का सञ्चालन एवं नियमन होता चला आया है। भारतीय ऋषि ऋतम्भरा को अपने अनुचिन्तनों से आपूरित करने वाले महर्षियों की पंक्ति में यदि हम श्री अरविन्द जी को सादर स्थान पदान करें; तो इसमें कोई भी अतिशयोक्ति नहीं होगी। जिन्होंने भारतीय राष्ट्रीय स्वतन्त्रता आन्दोलन का प्रथम उद्‌बोधन किया। देश की जनता के हृदय में राष्ट्र प्रेम की भावना भरने का प्रथतः प्रयास किया। व्यक्ति एवं समाज को सन्मार्ग पर चलने का अद्‌भुत संज्ञान एवं प्रेरणा सुझाया। श्री अरविन्द के अद्वितीयता पूर्ण सामाजिक एवं आध्यात्मिक अनुचिन्तनों की अपनी निज विशिष्टता रही है। उनके समाज विषयक विचारों की समाज शास्त्रीय विवेचना किये जाने की सर्वदा अपेक्षा बनी रही है। श्री अरविन्द के सामाजिक संरचना सम्बन्धी चिन्तन बहुव्यापकता से उनके अपने साहित्य में निरूपित एवं संदर्शित हैं। प्रस्तुत शोध–लेख में ''श्री अरविन्द का सामाजिक अनुचन्तिन'' शीर्षांकित विवेच्य विषय के माध्यम से उक्त अपेक्षा सम्बन्धी तथ्यों का अनुरेखन करने का एक प्रयास है।

ज्ञातव्य है कि श्री अरविन्द ने अपना सामाजिक चिन्तन यद्यपि अपने सम्पूर्ण साहित्य में सन्दर्भित एवं संकेति किया है, तदपि उनके द्वारा लिखित "'The Human Cycle" अर्थात् ''मानव चक्र'' नामक ग्रन्थ में विशेष विवेचन किया है।[1] श्री अरविन्द के समाज दर्शन परक तथ्यों के विस्तार असीमित होने के कारण उनका संक्षेपण मात्र ही यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं–

श्री अरविन्द की दृष्टि में हम समाज को दो वर्गों में विभक्त प्राप्त करते हैं। इन दोनों वर्गों को उन्होंने सामान्य (Normal) अथवा औसत तथा आध्यात्मिक (Spiritual) के नामों से उल्लिखित किया है। इन दोनों प्रकार के समाजों के सन्दर्भ में श्री अरविन्द का समग्र सामाजिक विमर्श सम्भव रहा हैं किन्तु यह भी सत्य तथ्य है कि उनकी सामाजिक अवधारणा का विवेचन किसी भी शोध–लेख में ही नहीं, अपितु शोध–प्रबन्ध में भी समेटा जाना सम्भव नहीं है। तथापि उक्त उभयविध समाजों को आधार बनाकर श्री अरविन्द के समाज दर्शन का समाज शास्त्रीय दृष्टि से विवेचन अग्रलिखित क्रम में अवलोकनीय है–

**असिस्टेंट प्रोफेसर,समाजशास्त्र विभाग,सी०एम०पी०,पी०जी० कॉलेज,(इलाहाबाद विश्वविद्यालय) प्रयागराज (उ०प्र०)*

1. सामान्य अथवा औसत (Normal) समाज– श्री अरविन्द जी के अनुसार समान्य अथवा औसत समाज का आरम्भ और अन्त दोनों निम्न प्रकृति से ही सम्भव होता है। यह समाज स्वयं में यह अनुभव करता है कि उसकी इकाई के रूप मे मनुष्य एक कायिक, प्राणिक तथा मानसिक सत्ता मात्र ही है। इस अनुभव के कारण के रूप में यह देखा जाता है कि उक्त तीनों आयामों पर ही यत्किंचित् व्यवहार– सामर्थ्य सम्भव होता है। सामान्य समाज अपनी मानसिक विकास तथा कौशल अथवा पद्धति में विकास एवं गति उत्पन्न करता है। साथ ही अपने में बौद्धिक, नैतिक संस्कृति और सौन्दर्य विधायक तत्त्वों का विकास करता है और प्राणिक सुख साधनों का सृजन भी करता चलता है। चूँकि सतत विकसनशील आर्थिक कुशलता द्वारा सभ्यता की वृद्धि के साथ उपभोग विधि अथवा तरीके जटिल एवं बोझिल होते जाते हैं। इसका परिणाम मनुष्य के नैसर्गिक उत्साह का मन्द हो जाना होता है। रुग्णता और उनके उपचार की औषधियों के उपयोग का सतत क्रम उद्भूत हो जाता है। सामाजिक जनजीवन में दिखावा और बनावट आने लगती है। सम्पूर्ण सामान्य सामाजिक जीवन निज विकास के कारण ही मृतप्राय होने लगता है। तब यह नहीं ज्ञात हो पाता है कि मानव सभ्यता की प्रक्रियागत त्रुटि, चूक अथवा दोष कहाँ है? इससे कैसे उबरें? वस्तुतः सभ्यता का ऐसा तथा कथित विकास समाज की जीवनी शक्ति को नष्ट कर देता है। प्रकृति का सहयोग भी समाज के लिए रुक जाता है। ऐसा समाज जब तक यह अनुभव करता है कि सामाजिक समस्यायों इतनी अधिक उत्पन्न हो गयी हैं कि उनका समाधान ही सम्भव नहीं है, तब तक समय समाप्त हो जाता है। समाज में असंख्य आवश्यकतायें एवं अभीप्सायें जन्म लिए रहती हैं। जिनकी सम्पूर्ति के लिए कृत्रिमताओं का ऐसा तानाबाना बना लिया जाता है, जिससे बाहर निकल पाना आसान नहीं रह जाता। लक्ष्य हीनता की ऐसी विकट स्थिति के अन्तर्गत जनजीवन का भटकाव होना स्वाभाविक है।

ऐसी स्थिति में बौद्धिक घोषणायें इस सभ्यता की असफलता के लिए होने लगती हैं। साधारण समाज उन घोषाणाओं पर विश्वास करने लगता है और ऐसी परिस्थिति में जो भी समस्या का समाधान उपस्थित किया जाता है, वह मनुष्य को यन्त्रवत निर्मित कर देने का एक प्रयास हो जाता है।

वस्तुतः ऐसी स्थिति को जन्म इसलिए प्राप्त होता है कि सामान्य समाज में अध्यात्मिक तत्त्व की सर्वथा उपेक्षा कर दी जाती है। जो मनुष्य में विद्यमान सतत सत्ता के रूप में आत्मा ही होती है। मानव का स्वस्थ्य शरीर, सक्रिक मन और उसकी सबल जीवनी शक्ति मनुष्य को निश्चित सीमा तक ही ले जाती है, उस निश्चित सीमा के आगे नहीं; जबकि मनुष्य के अन्तस् में सत्य आत्म उपलब्धि तथा सन्तुष्टि परक प्रगति हेतु, उस सीमा से परे कुछ अधिक और भी

अभीप्सा रहती है। इसीलिए श्री अरविन्द ने अपनी स्पष्ट घोषणा की है कि ''ये तीन (अर्थात्– शरीर, प्राण और मन) पूर्ण मनुष्यत्व का निर्माण नहीं करतीं। मात्र इनको सदा सर्वदा के लिए लक्ष्य नहीं बनाया जा सकता।''[2] श्री अरविन्द ने सामान्य समाज को ही लक्षित कर अपने विचार व्यक्त किया है कि– '' लेकिन मानव समाज जिन व्यक्तियों से बनता है; उनके मन, हृदय और प्राण के समायोजन की अपूर्णता के सिवा स्वयं व्यक्ति के मन और प्राण ऐसी शक्तियों से परिचालित होते हैं, जिनका आपस में मेल नहीं बैठता उनमें मे बैठाने के हमारे प्रयत्न अपूर्ण होते हैं और उससे भी ज्यादा अपूर्ण होती है; उनमें से किसी एक को भी सर्वांगीण या सन्तोष रूप में जीवन में कार्यान्वित करने की हमारी शक्ति।''[3] प्रंसगतः पुनः श्री अरविन्द जी के तथ्य को यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है, जिसमें कहा गया है कि–''समाज भी सबकी सेवा के लिए है, उन्हें अपने उचित सम्बन्ध, शिक्षा प्रशिक्षण, आर्थिक अवसर जीवन को उचित ढाँचा देने के लिए है।..... |.....अर्वाचीन काल में सारा जोर जातियों के जीवन की ओर; पूर्ण समाज की खोज की ओर उसके बाद समूचे रूप में मानव जाति के सम्यक् संगठन और वैज्ञानिक यन्त्रीकरण पर एकाग्र हो गया है। अब प्रवृत्ति यह मानने की ओर है कि व्यक्ति समूह का एक सदस्य है; जाति की एक इकाई है; जिसके जीवन को संगठित समाज के सर्वमान्य लक्ष्यों और सम्पूर्ण हित के अधीन होना चाहिए।[4]

अन्यथा की स्थिति में सामान्य समाज ने सुविधा, उपभोग एवं ऐन्द्रिक साधनों के नितनूतन आविष्कार एवं नूतन प्रयोगों का परिणाम निराशाजनक ही हो जाता है। ऐसे औसत या सामान्य समाज के निर्माण और विघटन से मानव जीवन निराशामय रह जायेगा। अतः स्पष्ट होता है कि श्री अरविन्द की दृष्टि में ऐसे समाज से मानव का आत्मिक उत्सर्ग सम्भव ही नहीं होता।

2. आध्यात्मिक (Spiritual) समाज– श्री अरविन्द की सामाजिक अवधारण में आध्यात्मिक समाज एक ऐसा मानव समाज है; जिसमें सच्चा और पूर्ण आध्यात्मिक लक्ष्य यह स्वीकृति प्राप्त करेगा कि मनुष्य न तो केवल मन न केवल प्राण और न केवल शरीर ही है। वह तो एक आत्मा है, जिसका आगमन संसार में दिव्य पूर्णता हेतु हुआ है। अन्यथा आत्मा पृथ्वी पर आती ही नहीं। इस तथ्य को स्वीकार करने तथा इसमें आस्था रखने वालों द्वारा इसे चरितार्थता प्रदान करने के लिए उद्यत और तत्पर रहने वाले लोगों का समाज ही श्री अरविन्द अभिमत '' आध्यात्मिक समाज'' कहलाता है।

आध्यात्मिक समाज की विशेषता एवं उसके नियम विधानों को स्पष्ट करते हुए श्री अरविन्द जी ने लिखा है कि ''आध्यात्मिक समाज का सिद्धान्त होगा वृहद् स्वाधीनता। सच्चे आध्यात्मिकीकरण की सम्भावना की ओर मानव

समाज के विकास का लक्षण होगा स्वतन्त्रता की वृद्धि। इस अर्थ में दासों के समाज को आध्यात्मिक बनाने का प्रयास कभी भी सफल नहीं हो सकता।''[5] वस्तुतः श्री अरविन्द का यह विश्वास रहा है कि मानव विकास की वर्तमान अवस्था के जिस संकट ने सामाजिक ओर राजनीतिक अराजकता को जन्म दिया है, उसका समापन तभी सम्भव है, जब आध्यात्मिक समाज की स्थापना होगी। जो आध्यात्मिकता पर पूर्णतः आधारित होगा। ऐसा समाज ही जन जन को स्वतन्त्रता पूर्वक निर्भयता से जीवन यापन के लिए उपयुक्त होगा। ऐसा समाज समृद्ध और सुन्दर जीवन के लिए हेागा। उनका यह भी विचार रहा है कि उक्त स्थिति वाले समाज से भी उन्नत राजनीतिक कलह, सन्त्रास; टकराव तथा अन्तर्विरोध और संघर्ष तभी समाप्त प्राय होगा। जब व्यक्ति की आत्मा में एकात्म चेतना का जागरण होगा। यही चेतना समाज में परस्पर सहयोग, एकता सहानुभूति और सामंजस्य को विकसित कर देगी।

इस प्रकार हम देखते है कि श्री अरविन्द ने वृहद् स्वाधीनता की चर्चा करते हुए कहते हैं कि स्वाधीनता का अर्थ दासता से मुक्ति पाना है; जो अनेक प्रकार की हैं। उनसे मुक्ति लेनी होगी। य़द्यपि उनमें बन्धन भी अनेक है, उनसे मुक्ति पानी होगी। आध्यात्मिक समाज और उसका व्यक्ति जिस बन्धन को स्वीकारता है, वह उसकी अपनी निज प्रकृति और अभीप्सा का बन्धन है। जो श्रेष्ठ आन्तरिक विधान का प्रतिनिधित्व करता है; उनके विचार में हम यह भी पाते है कि आध्यात्मिकता वैज्ञानिक भौतिकवाद से पीछा नहीं छुड़ाती, न भागती है। आध्यात्मिकता का लक्ष्य समाज में एक प्रबल चर्च या पुरोहिताई के मिथ्या धर्म तन्त्र की नहीं, बल्कि सच्चे आन्तरिक धर्मतन्त्र, आन्तरिक पुरोहित, पैगम्बर और राजा के धर्मतन्त्र की स्थापना करना। श्री अरविन्द के ''सामाजिक विकास का मनोविज्ञान'' (The Psychology of Social Development) में उल्लिखित तथ्यों से यह सुस्पष्ट होता है कि उनका अभिमत समाज उन लोगों का समाज है, जो सच्ची आध्यात्मिकता का अर्थ समझते हैं। आध्यात्मिकता को बिना अवधारित किए बिना आध्यात्मिक समाज'' के आदर्श को समझना सम्भव ही नहीं हैं। आध्यात्मिक समाज का यह लक्ष्य होगा कि मनुष्य के समक्ष प्रकाश, शक्ति, सौन्दर्य शिव, आनन्द तथा अमरत्व के रूप में उसकी अन्तःस्थ दिव्यता का वह प्रकाशन एवं प्रकटीकरण करे तथा मनुष्य के बाह्य जीवन में भी भगवान के साम्राज्य का निर्माण कर देना जो व्यक्ति के अन्तस् में प्रकट होता है।[6]

पूर्वतन विवेचनों के आधार पर निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है कि श्री अरविन्द का सामाजिक चिन्तन क्रमशः सामान्य (Normal) अथवा औसत समाज तथा आध्यत्मिक समाज इन दो रूपों में विभक्त है। औसत समाज अधोमुखी एवं निम्न जनों का समाज हैं, तथा आध्यात्मिक समाज उनका आदर्श समाज का

रूप है। इसी की अभीप्सा में श्री अरविन्द ने आध्यात्मिक ज्योति से जनजन को आलोकित होने तथा उससे संसार को भी प्रकाशित करने की कामना की है। क्योंकि आध्यात्मिकता हमारी सम्पदा है। हम अप्रतिम आध्यत्मिक सम्पदा के स्वामी हैं। इसी ज्योंति से स्वयं ज्योतित होकर विश्व समाज को आलोकित करना हमारा सर्वश्रेष्ठ दायित्व है। इससे दिव्य आध्यात्मिक समाज का निर्माण होगा। इसी भाव से श्री अरविन्द ने कहा है कि–''यह सम्भावना है कि जीवन और समाज की यान्त्रिक धारण से वापसी की पेंग में मानव मन धार्मिक भाव और धर्म द्वारा शासित या अनुमोदित समाज में फिर से शरण ले।''[7] जिसके परिणाम स्वरूप धरती पर सत्याधारित आध्यात्मिक समाज स्थापित होगा। जिसमें कोई दुःख, न भय और न कोई सन्त्रास होगा। निर्भय जीवन योग्य मानव समाज बनेगा।

सन्दर्भ

1. *The Human Cycle- Sri Aurobindo Ashram Pondichery. 1949 Ist Edi, and IInd Edi- Sri Aurobindo Library Newyark. 1950*
2. *द्रष्टव्य है– चेतना के शिखर–पृ०–196 पर उद्धृत अंश ले०–सुरेश चन्द्र त्यागी, आशिर प्रकाशन पुदुच्चेरी सन्–2022 ई०*
3. *दिव्य जीवन–पृ०–1022 श्री अरविन्द, अरविन्द आश्रम पांडिचेरी–पंचम संस्करण–सन् 2014 ई०*
4. *तदेव– पृ०–1022–1025*
5. *तदेव– पृ०–197 पर उद्धृत विचार साभार गृहीत*
6. *The Human Cycle - (मानव चक्र)* की भूमिका पर आधारित, अरविन्द आश्रम पाण्डिचेरी सन् 1949ई०

   तथा ''आर्य''*The* Psychology *of Social Devlopment* (सामाजिक विकास का मनोविज्ञान) निबन्ध माला दि०–15अगस्त 1916ई० से 15 जुलाई 1918ई०तक प्रकाशित धारावाहिक
7. *दिव्य जीवन– पृ०–1035 एवं सामाजिक विचार धारा पृ०–516–521 विवेक प्रकाशन, जवाहर नगर दिल्ली–7 सन् 2003ई०*

मङ्गलम् -वर्ष 13(02) भाग-XXV, अगस्त 2022
ISSN-0976-8149 पृ.-192-195

औपनिवेशिक काल में जनजातियों में सामाजिक परिवर्तन

*डॉ० धीरज कुमार चौधरी **
*सुरेश कुमार ***

सारांश

अन्य समाजों की तरह जनजातीय समाज में भी परिवर्तन होते रहे हैं। यह सच है कि परिवर्तन की मजबूत शक्तियाँ सबसे पहले औपनिवेशिक काल में अस्तित्व में आईं और यही कारण है कि जनजातीय समाज का औपनिवेशिक रूपान्तरण भारतीय उपमहाद्वीप में मानवशास्त्रीय अध्ययनों की दृष्टि से अध्ययन और अनुसंधान का एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है। इस तरह के अध्ययन का सबसे स्पष्ट पक्ष यह है कि मुख्यतः जनजातीय आबादी वाले वन क्षेत्रों पर औपनिवेशिक राजसत्ता कायम होने के बाद अनेक छोटे बड़े विद्रोह हुए।

प्रमुख बिन्दु:– औपनिवेशिक, उपमहाद्वीप, मानवशास्त्रीय, अनुसंधान, राजसत्ता, वाणिज्यीकरण, बिचौलिए, मिशनरी, ईसाईयत।

औपनिवेशिक शासन के आरंभ होने से पहले जनजातीय समुदाय भारतीय सभ्यता के केन्द्रों से भौगोलिक एवं सांस्कृतिक दृष्टियों से पूर्ण रूप से अलग–थलग रहे हैं। जनजातीय लोग अपनी आस्थाओं, प्रथाओं तथा परम्पराओं के कारण हिन्दू नहीं थे। कई मानवशास्त्रियों ने जनजातीय समुदायों का वर्गीकरण किया है और इस क्रम में सांस्कृतिक प्रक्रिया को आधार बनाया है। संथाल, उराँव, मुण्डा, गोण्ड आदि जनजातियों को हिन्दू सामाजिक व्यवस्था के प्रति सकारात्मक झुकाव या अभिमुखन वाली जनजातियों की कोटि में रखा जा सकता है। यद्यपि उनकी आबादी का बड़ा भाग जातीय ढाँचे में न तो पहले समाविष्ट था और न अभी है, फिर भी बहुत हद तक उन्होंने अपने हिन्दू पड़ोसियों के धार्मिक प्रतीकों, सारतत्व और विश्वदृष्टि को अपना लिया है।[1]

मध्य भारत के जनजातीय समुदायों में तीन प्रमुख प्रवृत्तियाँ दिखाई देती हैं। इनमें से पहला औपनिवेशीकरण और कृषक जातियों द्वारा बस्तियों की स्थापना थी जिन्हें मुगल शासकों और जमींदारों ने भूमि पर अधिकार का दावा करने के लिए प्रोत्साहित किया। इस उद्देश्य से उन्हें और आप्रवासियों की अन्य कोटियों के लोगों को अनेक प्रकार के प्रलोभन दिए गए। मध्यकाल में झारखण्ड और गोंडवाना ऐतिहासिक क्षेत्र के रूप में उभरे। पुनः भील, मीगा, कोल और गोंड जैसी अनेक जनजातियों को मुगल साम्राज्य ने प्रमुख समुदायों के रूप में मान्यता दी। तीसरे तथ्य के रूप में हम यह देखते हैं कि राज्य का

** एसोसिएट प्रोफेसर, ईश्वर शरण पी0जी0 कॉलेज प्रयागराज (उ०प्र०)*
**** शोध छात्र, ईश्वर शरण पी0जी0 कॉलेज,प्रयागराज *(उ०प्र०)***

उत्थान एक महत्वपूर्ण स्थिति से होकर गुजरता है। मध्य भारत में राज्य निर्माण की एक महत्वपूर्ण स्थिति अधिकृत भूमि से होकर कृषि का विस्तार और मैदानों के कृषकों द्वारा एक अभिनव कृषि प्रौद्योगिकी का सूत्रपात था। कुल मिलाकर औपनिवेशिक व्यवस्था की स्थापना से पहले भी एक जटिल सामाजिक आर्थिक प्रणाली जनजातीय मध्य भारत के कुछ हिस्सों में विकसित हो चुकी थी।[2] औपनिवेशिक शासन की स्थापना के साथ ही भारत में अधिकांश जनजातीय समाजों का भौगोलिक एवं सांस्कृतिक अलगाव समाप्त हो गया। ब्रिटिश शासन ने पुराने सामाजिक संगठन, कृषि प्रणाली तथा सामाजिक आर्थिक मूल्यों के स्थान पर जनजातीय समुदायों के लिए अपरिचित नई व्यवस्था स्थापित करके नई समस्याएँ पैदा कर दीं। सामाजिक नियंत्रणों और परिवर्तन के अभिकरणों के पुराने स्वरूपों को संशोधित कर दिया गया। वाणिज्यीकरण के नए रूपों का सूत्रपात हुआ। भूमि न केवल सम्पत्ति बन गई बल्कि निजी सम्पत्ति में तब्दील हो गई। कानून के नए विधान अस्तित्व में आ गए जिसने उत्पादन, उपभोक्तावाद और धन/मुद्रा तथा अर्थव्यवस्था के वाणिज्यीकरण की शुरुआत हुई जिसका उद्देश्य मूलतः उनके अपने शोषक हित की रक्षा व संपोषण करना था।[3] ब्रिटिशकाल की सबसे प्रमुख विशेषता उत्पादन की सामूहिक प्रणाली का पतन और भूमि पर निजी अधिकार का आरंभ थी। कृषक प्रणाली के विकास का अगला चरण बाजार द्वारा जनजातीय अर्थव्यवस्थाओं में घुसपैठ था। ब्रिटिश शासन ने बहुत हद तक गैर मौद्रिक अर्थव्यवस्थाओं में धन की माँग पैदा कर दी ताकि वे भूराजस्व और अन्य शुल्कों का भुगतान कर सकें, विभिन्न प्रकार के व्यय कर पायें और अपने लिए आवश्यक सामान खरीद सकें। विनिमय या लेनदेन का पारंपरिक रूप समाप्त हो गया। इस बात का कुछ प्रमाण है कि जनजातियों के कुछ वर्गों ने सीमित पैमाने पर व्यापारिक महत्व की वस्तुओं का उत्पादन आरंभ कर दिया। बाजार के साथ बिचौलिए, व्यापारी और महाजन आ गये, जिसमें दीकू (विदेशी/बाहरी लोग) की अवधारणा कृषि सम्बन्धों को समझने की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। दीकू औपनिवेशिक व्यवस्था का जीव था जो प्रशासनिक मामलों में बिचौलिए की, महाजन की, अग्रिम उधार की प्रणाली के माध्यम से अनाज के उत्पादन को नियंत्रित करने वाले व्यापारी की और भूमि पर कब्जा करने वाले की अलग–अलग भूमिकाएँ निभाता था।[4]

परिवर्तन के एक अभिकर्ता के रूप में ईसाई धर्म भी मुख्यतः उत्तर पूर्व के क्षेत्रों और मध्य प्रदेश, बिहार एवं बंगाल के क्षेत्रों में काफी प्रभावकारी था, चूँकि ईसाई धर्म अनेक जनजातीय क्षेत्रों में जनकल्याण का सबसे पुराना अभिकरण था।[5]

आधुनिकीकरण की दृष्टि से ईसाई मिशनों की भूमिका भी उन जनजातीय

क्षेत्रों में जहाँ उनका गहरा प्रभाव था, सामाजिक परिवर्तन की एक महत्वपूर्ण विशेषता साबित हुई है। दुर्भाग्यवश ईसाई धर्म और उपनिवेशवाद के बीच हमेशा काफी नजदीकी सम्बन्ध रहा है।[6]

राजनीतिक स्तर पर मिशनरियों ने औपनिवेशिक प्रशासकों के साथ नजदीकी साँठगाँठ कायम करके ब्रिटिश शासन को उचित ठहराया और भारत के पिछड़े समुदायों में अपने लिए समर्थन और प्रभाव के नए आधार बनाने के प्रयास किये। आरंभिक चरणों में मिशनरी गतिविधियों ने जनजातीय व्यवस्था में खलल डाला। ईसाई धर्म के प्रभाव में आने वाले जनजातीय समुदायों के अनेक मूल्य, मान्यताएँ और संस्थाएँ नष्ट हो गईं। स्पष्टतः मिशनरी केवल गिरजाघरों की ध ार्मिक सभाओं को कार्यस्थल बनाना चाहते थे।[7]

ब्रिटिशकाल में जनजातीय समुदायों में सामाजिक परिवर्तन के किसी भी विश्लेषण के सन्दर्भ में जनजातीय आन्दोलनों की भूमिका की उपेक्षा नहीं की जा सकती। ब्रिटिशकाल ने जिन परिवर्तनों का सूत्रपात किया उनके प्रति अनेक जनजातियों ने भिन्न–भिन्न तरह से प्रतिक्रिया जताई। अपने लम्बे आपेक्षिक अलगाव की वजह से जनजातीय समुदायों ने अपना निजी सामाजिक ढाँचा और सामाजिक नियंत्रण विकसित कर लिया था और उनके प्रति वे काफी संवेदनशील थे। शायद यही कारण है कि इन परिवर्तनों के विरुद्ध उन्होंने अन्य लोगों की तुलना में ज्यादा मजबूती से और बहुधा हिंसक ढंग से प्रतिक्रिया व्यक्त की जिससे उन्होंने करीब 100 विद्रोह किये जिसमें 40 विद्रोह काफी हिंसक थे। मिशनरियों तथा समसामयिक ब्रिटिश समाचार पत्रों का खयाल था कि वे आन्दोलन भूमि सम्बन्धी विवाद पर ही छिड़े थे जिसने बाद में धार्मिक रूप ग्रहण कर लिया।[8] सांस्कृतिक परिवर्तनों के फलस्वरूप मुण्डा जनजाति में आज की सामाजिक परंपराओं, धार्मिक आस्थायों जैसे पाँच नीवरणों, सरना पूजा, मण्डा यात्रा, कर्मा पूजा आदि को देखकर निश्चित एवं निरपेक्ष रूप से यह निष्कर्ष प्राप्त किया जा सकता है कि समस्त मुण्डा जनजाति के पूर्वज बौद्ध थे।[9] वे पुष्यमित्र शुंग, शशांक तथा अन्य ब्राह्मणवादियों के आतंको, अत्याचारों और अन्यायों से जान बचाने के लिए जंगलों की शरण लेते चले गये।[10]

प्रसिद्ध इतिहासकार रामचन्द्र गुहा ने समाचार पत्र के एक लेख में लिखा है, ''आदिवासी ज्यादा तकलीफ झेल सकते हैं, जबकि दलित ज्यादा संधर्ष कर सकते हैं।''[11] आज बी0आर0 अम्बेडकर को गुजरे छः दशक से अधिक हो गए हैं फिर भी वह पूरे भारत में दलितों को शिक्षित करने, संगठित करने और भेदभाव के खिलाफ आन्दोलन करने के लिए प्रेरित करते हैं। इस तरह हम निःसन्देह कह सकते हैं कि जैसे बाबा साहेब अम्बेडकर देश में दलितों के सर्वमान्य प्रेरणा पुरुष हैं ठीक वैसे ही नेतृत्व की जरूरत जनजातीय समुदाय को भी है।

सन्दर्भ

1. *हसनैन नदीम, जनजातीय भारत, जवाहर पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली–110016, सन् 2017, पृष्ठ संख्या 320, 321, 322*
2. *कुमार सुरेश सिंह, मध्य भारत में जनजातीय समाज का रूपान्तरण, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली–110002, सन् 2003, पृष्ठ संख्या 158, 161*
3. *सरकार सुमित, आधुनिक भारत 1885–1947, राजकमल प्रकाशन, 1–बी, नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली–110002 सन् 2018, पृष्ठ संख्या 61, 72*
4. *शुक्ल रामलखन, आधुनिक भारत का इतिहास, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, ई0ए0 मॉडल टाउन, दिल्ली–110009, सन् 1998, पृष्ठ संख्या 203, 205*
5. *ग्रोवर बी0एल0, आधुनिक भारत का इतिहास, एस चन्द एण्ड कम्पनी लिमिटेड, रामनगर, नई दिल्ली–110055, सन् 2018, पृष्ठ संख्या 178, 182*
6. *गुहा रामचन्द्र, भारत गाँधी के बाद, पेगुइन रैण्डम हाउस इण्डिया प्रा0लि0, गुडगाँव–122002, सन् 2011, पृष्ठ संख्या 325*
7. *चन्द्र विपिन, भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, सन् 2015, पृष्ठ संख्या 12, 13, 14*
8. *डॉ0 कुमार सुरेश सिंह, उल्गुलानः बिरसा मुण्डा और उनका आन्दोलन, सम्यक प्रकाशन, 32/3 पश्चिमपुरी, नई दिल्ली–110063, पृष्ठ संख्या 86, 87, 88*
9. *डॉ0 धर्मकीर्ति, समस्त मुण्डा जाति बौद्ध थी, सम्यक प्रकाशन, 32/3, पश्चिमपुरी, नई दिल्ली–110063, सन् 2021, पृष्ठ संख्या 30, 31*
10. *ई0 लंकेश महेश कुमार, आदिवासियों का असली दुश्मन कौन, सम्यक प्रकाशन, 32/3, पश्चिमपुरी, नई दिल्ली–110063, सन् 2019, पृष्ठ संख्या 31*
11. *गुहा रामचन्द्र, नेतृत्व जो जनजातियों को नहीं मिला, लेख हिन्दुस्तान, प्रयागराज, 30 अक्टूबर 2019, पृष्ठ संख्या 12*

मङ्गलम् -वर्ष 13 (02) भाग-XXV,अगस्त 2022
ISSN-0976-8149 पृ.-196-202

प्राचीन सिल्क रोड एवं बेल्ट एंड रोड परियोजना का भारत के साथ संबंध

*डॉ० सुभाष शुक्ला**
*उमा पाण्डेय***

सारांश

इक्कीसवीं शताब्दी के दौरान विश्व के विशालतम परियोजनाओं में से एक परियोजना,'बेल्ट एंड रोड परियोजना' के नाम से जानी जाती है। जिसकी घोषणा 'वन बेल्ट वन रोड' परियोजना के नाम से वर्ष 2013 में की गई थी।इसका निर्माण चीन के द्वारा किया जा रहाहै। हालांकि यह परियोजना सैकड़ों वर्ष पूर्व ऐतिहासिक सिल्क रोड को पुनः अस्तित्व मेंलाने की एक पहल है। बेल्ट एंड रोड परियोजना को जानने के लिए प्राचीन सिल्क रूट को जानना अत्यंत आवश्यक है। हमें सर्वप्रथम इसके इतिहास को जानना होगा कि प्राचीन सिल्क रूट किन परिस्थितियों में अस्तित्व में आया, कौन से वंश तथा राजाओं के द्वारा इसके विकास में योगदान दिया गया, किसके द्वारा बनाया गया एवं इसका विघटन किस प्रकार हुआ? रोड के इतिहास में कई वंशों ने अपने–अपने तरीके से इसके विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाईहै। कई देशों को जोड़ने वालायह'प्राचीन रेशम मार्ग' ऐतिहासिक काल में यातायात का एक प्रमुख केंद्र था, इससे जुड़ने वाले अन्य देशों के साथ ही साथ भारत देश का भी इस रोड के साथ गहरा संबंध है।जिसके कारण भारत एवं चीन के मध्य संबंधों में घनिष्ठता देखी गयी। शोध पत्र द्वारा सिल्क रोड से ओबीओआर तक की यात्रा के साथ ही इस रूट का चीन के लिएमहत्व एवं भारतीय दृष्टिकोण को बखूबी दर्शाने का प्रयास किया गया।

शब्द कुंजी–प्राचीन सिल्क रोड, बेल्ट एंड रोड परियोजना (ओबीओआर),भारत, चीन, बौद्ध धर्म।

प्राचीन सिल्क रोड

इतिहास में कुछ नाम ऐसे होते हैं जिनकी पहचान सदियों पुरानी होती है। यूं तो दुनिया में बहुत सी सड़के है लेकिन जो पहचान सिल्क रोड को मिली शायद ही किसी रोड को मिली हो। इसके द्वारा कई देश जुड़े हुए थे पर यह पूर्व से पश्चिम को जोड़ने वाली एक विशेष सड़क थी। इस मार्ग के द्वारा वस्तुओं के व्यापार के साथ ही संस्कृत का भी आदान–प्रदान हुआ। विशेष तौर पर चीन द्वारा रेशम का व्यापार किए जाने के कारण इस सड़क का नाम 'रेशम मार्ग' प्रसिद्ध है।

**पर्यवेक्षक, वैश्वीकरण एवं विकास अध्ययन केन्द्र, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज*
***शोध छात्रा, राजनीति विज्ञान विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज*

ऐतिहासिक सिल्क रूट की समय सीमा का अनुमान(114 ईसा पूर्व– 1450 सीई) लगाया जाता है। सिल्क रूट को चीनी भाषा में 'सिलू' भी कहा जाता था। (Camboz, Anil. 2016;6) सिल्क रोड का नाम सर्वप्रथम चीन में हान राजवंश द्वारा रखा गया उसी दौरान 'चीन की महान दीवार' का भी निर्माण हुआ था।सिल्क रोड की उत्पत्ति जर्मन शब्द 'सेडेनस्ट्रेश' से हुई जिसे 1877 ईसा पूर्व में फर्डिनेंड वॉन रिचथोफेन द्वारा लोकप्रिय बनाया गया था।'दसिल्क रोड' नामक पहली पुस्तक 1938 में भूगोलवेत्ता स्वेन हेडन के द्वारा लिखी गयी। (Elliseeff,Vadime.2001;29)

दूसरी सहस्त्राब्दी ईसापूर्व में मध्य यूरेशिया अपने घुड़सवारी के लिए प्रसिद्ध था,जिसके उत्तरी स्टेप्स में ओवरलैंड स्टेपी रूट, सिल्क रोड से बहुत पहले उपयोग में था जिससे सिल्क रोड प्रेरित है। इसी प्रकार कजाकिस्तान में बेरेल कब्रगाह जैसे पुरातत्विक स्थलों ने पुष्टि की कि सिल्क रोड के माध्यम से खानाबदोशी केवल घोड़ों का व्यापार कर रहे थे बल्कि उत्कृष्ट कलाकृतियों का भी प्रचार कर रहे थे। (Xinru,Liu.2010;26)

1070 ईसा पूर्व में चीनी रेशम मार्ग के कुछ अवशेष मिस्र में प्राप्त हुए, मध्य एशिया ने भी सिल्क रोड व्यापार के प्रभावी कार्यों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। मलेशिया से सोने का व्यापार किया जाता था। इसी प्रकार साक्ष्य के रूप में पता चलता है कि चीन में जानवरों के आकार की कलाकृतियाँ एवं बेल्ट पर पहलवान के रूपांकनों को काला सागर क्षेत्र से लेकर इनर मंगोलिया और शानक्सी में युद्धरत राज्यों के पुरातत्विक स्थलों तक फैले सीथियन कब्र स्थलों में पाया गया है।सीथियन संस्कृति के विस्तार का भी पता सिल्क रोड के माध्यम से चला।सोग्डियन दलालों ने चीन और मध्य एशिया के बीच व्यापार को सुविधाजनक बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी।सिल्क रूट के विकास में फारसी साम्राज्य का अहम रोल था जिसने अपनी सबसे बड़ी सीमा पर मानचित्र में 'रॉयल रोड' के नाम से दर्शाया था तथा इसे संरक्षित भी किया था। (Frankopan,Peter;2017.p87)

प्राचीन रेशम मार्ग (329 ईसा पूर्व– 10सीई) के करीब यूनानी साम्राज्य का विस्तार देखा गया जिसमें सिकंदर महान का नाम शामिल है, जिसका मैसेडोनिया साम्राज्य का मध्य एशिया में विस्तार था। यूनानी अगले तीन शताब्दियों तक मध्य एशिया में रहे, ऐसे संकेत है कि 200 ईसा पूर्व के आस–पास चीन और पश्चिम के बीच पहला संपर्क ज्ञात हुआ। (Sogdian Trade;Retrieved from 7Aug2021) शास्त्रीय यूनानी दर्शन को भारतीय दर्शन के साथ समन्वित किया गया था।

ऐतिहासिक सिल्क रूट, जिसका 130 ईसा पूर्व के करीब चीन द्वारा विस्तार माना जाता है। इसी प्रकार मध्य एशिया में भी चीनी विजय के माध्यम से रोड का विस्तार हुआ। हाँन राजवंश के द्वारा भूमध्य सागरी फरगना घाटी से जुड़े होने के साथ ही उनका अगला कदम तारिम बेसिन और हेक्सी गलियारे से चीन के लिए मार्ग खोलना था। (Miho MuseamNews.2009) चीनीयों द्वारा ही सिल्क रूट को अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के एक प्रमुख मार्ग के रूप में शुरू किया गया था। इस रोड के माध्यम से चीन ने पश्चिमी दुनिया और भारत के साथ अपने संबंधों को मजबूत किया।

प्राचीन रेशम मार्ग के प्रमुख उपयोगों में से भारत द्वारा बौद्ध धर्म का प्रचार–प्रसार है। पहली शताब्दी ईस्वी के आसपास व्यापारियों भिक्षुओं और यात्रियों द्वारा उठाए गए व्यापार मार्गों के साथ उत्तरी भारत से बौद्ध धर्म का प्रसार तेजी से हुआ। ओवरलैंड और समुद्री सिल्क रोड आपस में इस प्रकार जुड़े हुए थे कि विद्वानों द्वारा इसे 'बौद्ध धर्म का महान चक्र' नाम दिया गया। (Kamboz,Anil.2016) इसी प्रकार रोमन साम्राज्य (30 ईसा पूर्व–तीसरी शताब्दी सीई), बीजान्टिन साम्राज्य छठी–चौदहवीं शताब्दी, तांग राजवंश सातवीं शताब्दी,सोग्डियन तुर्क जनजाति इस्लामी युग का विकास सिल्क रोड के साथ अपनी एक पहचान जोड़ता है।

13 वीं–14 वीं शताब्दी की शुरुआत में मंगोल साम्राज्य में तैमूर ने पूरे एशिया से कारीगरों एवं बुद्धिजीवियों को समरकंद ले गए, जिसमें सिल्क रोड की अहम भूमिका थीजिसको उपयोग में लाया गया। मंगोल व्यापार मार्ग पर अपना नियंत्रण स्थापित करना चाहते थे। मंगोलों ने पूरे यूरेशियन महाद्वीप, पश्चिम में कालासागर और भूमध्य सागर दक्षिण में हिन्द महासागर में भूमि एवं समुद्री मार्ग विकसित किये।

कुछ अध्ययन से पता चलता है कि'ब्लैक डेथ' नामक बिमारी जिसने 140 के दशक के अंत में यूरोप को तबाह कर दिया, मंगोल साम्राज्य के व्यापार मार्गों के साथ ही मध्य एशिया से यूरोप तक पहुंचा है। मंगोल साम्राज्य के विखंडन ने सिल्क रोड की राजनीतिक,सांस्कृतिक, और आर्थिक एकता को ढीला कर दिया तथा सिल्क रोड का भी विघटन हो गया। कुछ ऐसी सभ्यताएं थी जिसने सिल्क रोड को बारूद द्वारा ध्वस्त कर दिया और 18 वीं शताब्दी में संभावित साम्राज्य के पतन के बाद रेशम का व्यापार लगभग पूर्णतःसमाप्त सा हो गया, इस प्रकार सिल्क रोड की अंतर्राष्ट्रीय विस्तार का अंत हुआ। (Gascoigne, Bamber. Gascoigne Christina. 2003) भारत का सिल्क रोड के साथ गहरा जुड़ाव रहाहै, चीन के अलावा जो भी सभ्यताएं एवं शासकों ने सिल्क रोड के विस्तार में अपनी भूमिका निभाई है उनका विकास भारत की पवित्र भूमि से ही

हुआ है।

जेरी एच. बेंटले के अनुसार सिल्क रोड के साथ धर्मों और सांस्कृतिक परंपराओं के प्रसार ने समन्वयवाद को जन्म दिया। इसी संबंध में रिचर्ड फोल्ट्ज का भी कहना है कि, किस प्रकार से सिल्क रोड व्यापारिक गतिविधियों में न केवल आर्थिकवरन् विचारों, धर्मों एवं संस्कृति की सुविधा प्रदान की। सिल्क रोड के माध्यम से पारसी धर्म, यहूदी धर्म, इस्लाम धर्म, ईसाई धर्म एवं बौद्ध धर्म का संचरण हुआ। 781 ईसा पूर्व में एक खुदा हुआ स्टील नेस्टोरियन ईसाई मिशनरियों को सिल्क रोड पर आते हुए दिखाताहै, इसके माध्यम से ही'सेरीएक' भाषा का भी विस्तार हुआ। (Xinru,Liu.2010)

सिल्क रोड पर इन सभी धर्मों में विशेष तौर पर बौद्ध धर्म का विस्तार एक अभूतपूर्व घटना मानी जाती है। इसके माध्यम से ही सिल्क रोड संपूर्ण एशिया में फैल गया। इसकी शुरुआत भारत से ही हुई। चीनी तीर्थयात्री भारत के बौद्ध धर्म से प्रभावित होकर सिल्क रोड के माध्यम से ही भारत आए तथा चीन में बौद्ध धर्म का प्रचार–प्रसार किया। बौद्ध मठों के खुलने के कारण सिल्क रोड पर सुव्यवस्थित बाजार आवास और भंडारण के साथ साक्षरता और संस्कृ ति के केंद्र बन गए।

कई कलात्मक वस्तुओं का भी प्रचार सिल्क रोड के माध्यम से प्रसारित हुआ, उदाहरण के तौर परलैपिसलजुली, सुनहरे धब्बे वाला एक नीला पत्थर था जिसे पाउडर बनाने के बाद पेंट के रूप में इस्तेमाल किया जाता था। बुद्ध की मूर्ति के प्रतीकात्मक कलाएं रेशम मार्ग द्वारा ही विश्व प्रसिद्ध हुई। (Elisseeff, Vadime. 2001)

बेल्ट एंड रोड परियोजना

प्राचीन सिल्क रूट की प्रसिद्धि को देखकर चीन के राष्ट्रपति शी जिनपिंग द्वारा इसे पुनः अस्तित्व में लाने का निर्णय किया गया। वर्ष 2013 में कजाकिस्तान के एक दौरे के उपरांत चीन द्वारा इसकी घोषणा की गई, उस समय इसे'वन बेल्ट वन रोड' फोरम के नाम से जाना जाता था परंतु वर्ष 2016 में परियोजना का नाम परिवर्तित कर 'बेल्ट एंड रोड' इनीशिएटिव कर दिया गया। इसे'न्यू सिल्क रोड' के नाम से भी जाना जाता है। (Miller,Tom.2017)

न्यू सिल्क रोड के माध्यम से एशिया,यूरोप, अफ्रीका जैसे बड़े महाद्वीप आपस में जुड़ते हैं। इक्कीसवीं शताब्दी के इस वैश्वीकरण के दौरान यातायात एवं व्यापार को सुगम बनाती हुई यह परियोजना जल तथा स्थल दोनों मार्गों में फैली हुई है। इसके अंतर्गत रेलवे, सड़क बंदरगाह एवं बुनियादी आवश्यकताओं के अनुसार ढांचो का निर्माण किया जा रहा है, इस प्रकार यह विश्व की एक

विशालतम परियोजना का खिताब हासिल करती है।

बेल्ट एंड रोड पहल के अंतर्गत छः आर्थिक गलियारे साथ ही समुद्री गलियारा भी शामिल किया गया है, (Sachdeva,G.2018) जिसमें–

1. न्यू यूरेशियालैण्ड ब्रिज (पश्चिमी चीन से पश्चिमी रूसतक)।
2. चीन–मंगोलिया–रूस गलियारा (उत्तरी चीन से पूर्वी रूस तक)।
3. चीन–मध्य–पश्चिम एशिया गलियारा (पश्चिमी चीन से तुर्की तक)।
4. इंडो–चाइना प्रायद्वीपीय गलियारा (दक्षिणी चीन से सिंगापुर तक)।
5. चीन–पाकिस्तान गलियारा सीपीईसी(दक्षिणी चीन से पाकिस्तान तक)।
6. चीन–भारत–म्यांमार गलियारा बीसीआईएम (दक्षिणी चीन से भारत तक)।

एवं साथ ही समुद्री गलियारे के रूप में सिंगापुर भारत से भूमध्य सागर तक मार्ग सम्मिलित किया गया है। वर्तमान में बेल्ट एंड रोड इनिशिएटिव के मानचित्र से बीसीआईएम गलियारे को बाहर कर दिया गया क्योंकि भारत द्वारा लगातार इस पहल का विरोध किया जा रहा है। भारत का कहना है कि इस परियोजना के माध्यम से निर्मित बीसीआईएम गलियारा उसके पूर्वी क्षेत्रों पर चीन द्वारा कब्जा करने की एक रणनीति है। (Vanda,Ashok,2004;12)

चीन का कहना है कि यह एक ऐसी परियोजना है जो संपूर्ण विश्व की तस्वीर बदल देगी। इसके माध्यम से देशों के मध्य प्राचीन सिल्क रूट की भाँति ही व्यापार एवं यातायात सुलभ हो सकेंगे, सांस्कृतिक आदान–प्रदान का विकास होगा, राष्ट्रों के मध्य ज्यादा पूंजी अभिसरण और मुद्रा एकीकरण की सुविधा होगी, मुद्रा विनिमय एवं तरलीकरण आसान होगा। मुख्यतया चीन के लिए इसके महत्व की चर्चा करें तो विश्लेषकों द्वारा यह अनुमान लगाया जा रहा हैकि चीन का ओबीओआर परियोजना के पीछे वास्तविक कारण उसके स्वयं के हित है जैसे, घरेलू विकास को बढ़ावा देना। (Sawhney,Pravin.Ghazals,Wahab.9jan2017) चीन अपने यहाँ के कम विकसित सीमा क्षेत्रों को इस रोड के माध्यम से अन्य देशों के साथ जोड़ना चाहता है।

बेल्ट एंड रोड पहल के माध्यम से चीनी सामानों के लिए बाजार की तलाश पूर्ण होगी जिससे वह अर्थव्यवस्था के प्रतिस्पर्धी माहौल में सर्वोच्च स्थान रख पाएगा।उत्पादन के मामले में भी अतिरिक्त क्षमता को ओबीओआर मार्गों के साथ क्षेत्रों में प्रभावी ढंग से प्रसारित करने की बेहतर योजना चीन द्वारा बनायी गयी है। (Kennedy,Andrew.2018) इस प्रकार चीन ऐसे बहुत से होने वाले लाभों को ध्यान में रखते हुए न्यू सिल्क रोड जैसी वैश्विक परियोजना का निर्माण कर रहा है। अतः विश्व में देशों के मध्य आदर और विश्वास के एक

नए मॉडल के रूप में बेल्ट एंड रोड परियोजना देखी जा रही है।

70 से अधिक देशों द्वारा बेल्ट एंड रोड परियोजना का समर्थन किया जा रहा है परंतु भारत इस परियोजना के पीछे चीन की एक आक्रामक एवं दूषित मंशा को वरीयता देता है। भारतीय विद्वानों द्वारा यह एक औपनिवेशिक, विस्तारवादी नीति मानी जा रही है जो गरीब देशों को कर्ज देकर उन्हें ऋण जाल में फंसाकर उनके देशों पर अधिकार करने की है। इसी प्रकार भारत को चारों तरफ से घेरकर साउथ एशिया में उसके प्रभुत्व को कम करना एवं विश्व में महाशक्ति के रूप में सामने आना चीन की इस परियोजना का एक हिस्सा प्रतीत हो रहा है। परंतु इन सभी प्रकार के नकारात्मक तथ्यों को अलग कर इसके वास्तविक फायदे की तरफ ध्यान दें तो बेल्ट एंड रोड परियोजना दुनिया के देशों के लिए लाभदायक सिद्ध होसकती है।

निष्कर्ष

इस प्रकार उपरोक्त तथ्यों एवं सिल्क रोड के इतिहास का अध्ययन कर हमने समझा कि प्राचीन सिल्क रोड एवं न्यू सिल्क रोड आपस में समानता रखते हुए भी अपनी विशेषता को खूबसूरती से स्पष्ट करते हैं। यह परियोजना लोगों को लोगों से जोड़ने एवं वैश्वीकरण शब्दों को सार्थक बनाने का कार्य कर रही है जो अवश्य ही चीन की एक बड़ी उपलब्धि है। प्राचीन रेशम मार्ग, जो भारत के साथ मुख्य रूप से बौद्ध धर्म एवं शिक्षा, कला, संस्कृति, सभ्यता, वाणिज्यिक एवं राजनैतिक विकास के सभी माध्यमों द्वारा जुड़ा हुआ है, अपने आप में एक अनोखी पहचान रखता है। चीनीयों द्वारा सिल्क रोड पर विजय प्राप्त करने के उपरांत उसे विस्तार देने के कारण इसे चीनी प्राचीन इतिहास में रखा गया है परंतु कहीं न कहीं इसका उद्भव भारतीय साम्राज्य एवं भारतीय राजाओं से अधिकाधिक रूप से जुड़ता है। इसके ऐतिहासिक विश्लेषण द्वारा भारत एवं चीन की घनिष्ठता का भी अनुमान लगाया जा सकता है जो विशेष रूप से भारत के साथ चीन की धार्मिक एवं सांस्कृतिक संबंधों को बयां करता है।

ऐतिहासिक सिल्क रूट का नवीनीकरण 'वन बेल्ट वन रोड' परियोजना के रूप में किया गया जोप्राचीन सिल्क रूट से भी अधिक एवं तकनीकी सुविधाओं से लैस है। बेल्ट एंड रोड परियोजना चीन की एक महत्वाकांक्षी परियोजना भी मानी जा रही है जिसमें वह दुनियाभर के देशों के साथ भारत को भी जोड़ना चाहता हैं परंतु भारत,बीआरआई फोरम का समर्थन नहीं करता क्योंकि भारत इसे मात्र चीन द्वारा बिछाये गए एक जाल के रूप में देखता है। नई दिल्ली का समर्थन करने वाले कुछ देश और भी है जो इस परियोजना के विस्तार को देखकर अपनी सुरक्षा के प्रति चिंतित हैं। इस वैश्विक समस्या से

निपटने के लिए भारत सरकार द्वारा 'एक्ट ईस्ट पॉलिसी'' नेकलेस ऑफ डायमंड', 'चाबहार परियोजना', 'मौसम परियोजना' आदि नीतियां बनाई गई है जो काफी हद तक कारगर साबित हो रही है परंतु भारत को इसमें और सुधार करने की आवश्यकता है।

संदर्भ

1. *Elisseeff.vadime. (2001). The Silk Roads:Highway of Culture and Commerce.Paris:UNESC.p.29*
2. *Frankopan, Peter. (7March2017). The Silk Road: A New History of the World. USA:Vintage Publication.p.87*
3. *Gascoigne.Bamber, Gascoigne, Christina. (2003).The Dynasties of China:A History.Newyork:Carroll and Graf Publisher an Imprint of Avalon Publishing Group.p.97*
4. *Kamboz, Anil.(2016). Cheen Ki Silk Road Aur Bharat Ki Samudri Kootniti. World Focus: Delhi.p.6*
5. *Kennedy, Andrew. (22 May 2018). The Conflicted Super Power: America's Collaboration with China and India in Global Innovation. Newyork: Columbia University Press.http:// www.onlinelibrary.wiley.com*
6. *Miho Museum News. (March 2009). Eurasian Winds towards Silla.(Shiga) Japan Vol 23*
7. *Miller, Tom. (1Feb 2017). China's Asian Dreams: Impire Building Along New Silk Road.India": Zed Books Ltd.*
8. *Sachdeva.G.(2018). Indian perception of the Chinese Belt and Road Initiative".India: Sage journal. First Published December 4, 2018. https:// journal.sagepub.com*
9. *Sawhney.Pravin Ghazals,Wahab. (9 Jan 2017). Dragon on our Doorstep: Managing China through Military Power. India: Aleph Book Company.*
10. *Sogdian Trade. Incyclopedia Iranica.Retrived from March 2021*
11. *Vanda. Shukla, Ashok. (2004).Security in South Asia Trends and Direction .New Delhi: A.P.H Publishing.12*
12. *Xinru,Liu.(2010).The Silk Road in World History.Newyork: Oxford University Press.p.2*

मङ्गलम् -वर्ष 13(02) भाग-XXV, अगस्त 2022
ISSN-0976-8149 पृ.-203-208

नगरीय प्रशासन एवं सतत् विकास लक्ष्य

*डॉ०ममता शर्मा **
*कु० सपना***

सांराश

भारत में नगरीय प्रशासनका अस्तित्व प्राचीन समय से रहा है भारत एक लोकतान्त्रिक राष्ट्र है लोकतान्त्रिक शासन प्रणालियों में स्थानीय संस्थाओं का विशेष महत्व होता है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् 1950–1992 में नगरीय प्रशासन के अन्तर्गत महानगरों में नगर निगम व उनसे छोटे नगरों में नगरपालिकाएं अपने अपने क्षेत्र में विकास के लिए निरन्तर प्रयासरत हैं भारतीय संविधान में 74 वे संविधान संसोधन व 1992 अधिनियम द्वारा संविधान में भाग 9(क) 18 अनुच्छेद एक अनुसूची 12 जोड़ी गई। जिसमें नगरीय प्रशासन से सम्बन्धित प्रावधानों का उल्लेख किया गया है जिसमें ऐसे विषयो को शामिल किया गया हैं जिन विषयो पर नगरपालिकाएँ कानून बनाकर अपने नागरिको के जीवन को सुखमयी बना सकती हैं वर्तमान समय में औद्योगीकरण एव नगरीकरण के विकास के साथ नगरीय प्रशासन का महत्व बढ़ता जा रहा हैं सरकार द्वारा चलाई जाने वाली नीतियों को जनसाधारण तक पहुँचने में स्थानीय संस्थाये महत्वपूर्ण भूमिका निर्वहन कर रही है। शहरो में सतत् विकास लक्ष्य प्राप्ति हेतु नगरीय प्रशासन का विशेष महत्व हैं गरीबी उन्मूलन, लैंगिक समानता, महिलाओ व लड़कियों को सशक्त बनाना, पर्यावरण की रक्षा, सामाजिक एवं आर्थिक समावेशन को और अधिक कारगर बनाने हेतु सतत् विकास लक्ष्यों में 17 मुख्य लक्ष्य व 169 विशिट लक्ष्यों को शामिल किया हैं इन लक्ष्यों ने 2016 में (डक्ळ) सहस्त्रावादी विकास लक्ष्यों का स्थान ले लिया हैं सतत् विकास विचारधारा दृष्टिकोण का उद्देश्य है कि समाज में रहने वालें व आने वाली पीढ़ी की मूलभूत आवश्यकताओं की हमेशा पूर्ति होती रहे। (तत्कालीन)भारतीय सरकार ने हाल ही में 'सबका साथ सबका विकास' का नारा दिया है जिसका तात्पर्य है 'कोई न छूटे' भारतीय परिपेक्षण तमें देखा जाये तो हा ही में वैश्विक भुखमरी सूचनां..... 2022 में भारत 116 देशों में 101 वे पायदान पर रहा हैं 1506..... स्वच्छता व स्वच्छ जल, में भारत का स्कोर 88 रहा है। सस्ती एवं स्वच्छ ऊर्जा, स्वच्छ पानी व स्वच्छता नवाचार के क्षेत्रों में सुधार के कारण भारत के लिए समग्र स्कोर में सुधार हुआ हैं इन समस्त लक्ष्यों की पूर्ति में नगरीय प्रशासन की महत्वपूर्ण भूमिका हैं जिन्हें सरकार नें 2030 तक पूर्ण करने का लक्ष्य रखा गया है। प्रस्तुत शोध पत्र को पूरा करने में ऐतिहासिक वर्णनात्मक विश्लेषणात्मक एवं तुलनात्मक पद्धति का प्रयोग किया गया हैं मुख्यतः द्वितीय स्त्रोतो का पेयाग किया गया है। प्रस्तुत शोध में नगरीय प्रशासन का अध्ययन किया गया हैं सतत् विकास लक्ष्य का अनुसरण करते हुए स्थानीय संस्थाओं का महत्व बताया गया हैं

मूल शब्द

नगरीयं प्रशासन, सतत् विकास लक्ष्य, पर्यावरण, स्थानीय सरकार, सबका साथ सबका विकास।'

** एसोसिएट प्रोफेसर राजनीति विज्ञान विभाग मेरठ कॉलिज मेरठ (उ०प्र०)*
*** शोधार्थी राजनीति विज्ञान विभाग मेरठ कॉलिज मेरठ (उ०प्र०)*

विषयवस्तु

भारत के इतिहास में नगरीय प्रशासन का अस्तित्व प्राचीनकाल से रहा हैं प्राचीन कालीन प्रशासन में ग्राम को प्रशासन की सबसे छोटी इकाई के रूप में प्रतिस्थापित किया गया था। वर्तमान समय में स्थानीय संस्थाओं का महत्व एव उत्तरदायित्व और अधिक बढ़ गया हैं जितनी प्राचीन भारतीय सभ्यता को माना जाता हैं प्रशासन को भी उतना ही पुराना माना जाता हैं भारत की शासन पद्धति का इतिहास वैदिक युग से होकर सामान्यतः मुगल शासन की स्थापना से समकालीन समय तक फैला हुआ हैं प्राचीन भारत की प्रशासनिक व्यवस्था में प्रान्तीय प्रादेशिक एवं जिला प्रशासन का भी प्रावधान था। सभी राज्यों को भिन्न–भिन्न प्रान्तों में और प्रत्येक प्रान्त को विभिन्न प्रदेशो में व प्रदेशों को जिलों में विभाजित किया जाता था। प्राचीन भारतीय वैदिक साहित्य पुराण, धर्मशास्त्र, रामायण, महाभारत, जैन एव बौद्ध ग्रन्थ अर्थशास्त्र मनुस्मृति शुक्रनीति के अन्तर्गत प्रशासन के कार्य एवं संगठन की झलक मिलती हैं मेगस्थनीज ने अपनी पुस्तक 'इण्डिका' में मौर्या की राजधानी पाटलिपुत्र में सुव्यवस्थित नगरीय प्रशासन का वर्णन किया है, प्राचीन समय में भी स्थानीय सरकारों को वर्तमान की तरह शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों में बाटा गया था। मुगल में भी शहरी स्थानीय शासन की पहल की गई और मुम्बई कलकत्ता मद्रास जैसे नगरों का विकास हुआ, नगरीय प्रशासन के उदभव को ईस्ट इण्डिया कम्पनी की स्थापना के 1666 में स्वीकार किया गया हैं 1687 मद्रास एवं 1726 में कोलकत्ता, बोम्बें में नगर निगम स्थापित किया। गये तथा 17वी सदी के प्रारम्भिक काल तक भारत के लगभग सभी शहरों में नगरीय प्रशासन के अन्तर्गत महानगरों में नगर–निगम व उनसें छोटे नगरों में नगर पालिकाएँ अपने–अपने क्षेत्र के विकास हेतु निरन्तर प्रयासरत है

74 वे संसोधन 1992 के द्वारा स्थानीय स्वायत्त शासन में सवैधानिक प्रशासनिक रूप प्रदान कर दिया गया और अप्रैल 1993 में यह पूर्ण रूप सें अस्तित्व में आया इस संसोधन के द्वारा भारतीय संविधान में भाग प(।) जोड़ा गया जिसमें नगरीय प्रशासन से सम्बन्धित प्रावधानों का उल्लेख किया गया 18 अनुच्छेद व एक नई अनुसूची 12 जोड़ गई, इस संसोधन के पश्चात् नगरीय विकास का लगभग, पूर्ण उत्तरदायित्व स्थानीय नगरीयं संस्थानों पर आ गया।

विकास निरन्तर चलने वाली जटिल एवं बहुपक्षीय प्रक्रिया हैं विकास की अवधारणा समाज के विभिन्न पक्षों से धनिष्ट रूप से सम्बन्धित हैं जैसे सामाजिक आर्थिक राजनीतिक व सांस्कृतिक विकास का सिद्धान्त सर्वागीण विकास पर बल देता है जिसके अन्तर्गत सामाजिक कल्याणकारी सेवाओं के अतिरिक्त वे

समस्त क्षेत्र आते हैं जिन्हें सामाजिक विकास की दृष्टि से प्रांसगिक माना जाता है! जैसे पर्यावरण सम्बन्धी।नीतिंयाँ, शिक्षा, पेयजल, सामाजिक सुरक्षा, आय का समुचित वितरण आदि वर्तमान समय में विकास को मुख्यतः भौतिक संवृद्धि के परिपेक्ष्य में ही देखा जाता हैं विश्व के विविध राष्ट्र आज उच्च आर्थिक विकास दर प्राप्त करने की प्रतिस्पर्घा में संलग्न है लेकिन इसकी किमत सम्पूर्ण मानव जाति, असन्तुलित पर्यावरण ग्लोबल वार्मिग तापमान में वृद्धि के रूप में चुका रही हैं इससे जैव विविधता का नाश (खतरा) सबसे ज्यादा मानव आस्तित्व के संकट के रूप में दिखाई दे रहा हैः समाज के विभिन्न विद्वानों ने विकास की अवधारणा कें होने वाले प्रभावों का विश्लेषण किया और बताया कि वर्तमान में विकास की एक पक्षीय एवं सकीर्ण परीक्षा दी जा रही हैं जिससे केवल आर्थिक वृद्धि से जोड़ा जा रहा हैं इस एकपक्षीय दृष्टिकोण में स्थानीय राष्ट्रीय अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पर्यावरण को काफी नुकसान पहुचाया है जिसके कारण सम्पूर्ण मानव जाति पर खतरा मडरा रहा हैं जलवायु परिवर्तन और बढ़ते तापमान के कारण हिमालय के ग्लेशियर पिघल रहे हैं ये ग्लेशियर दक्षिण एशिया की 120 करोड़ आबादी को जल प्रदान करते है लेकिन बढ़ते शहरीकरण और बढ़ती जनसंख्या के कारण ये ग्लेशियर पिघल रहे है ब्लैक कार्बन बढ़ने व अन्य प्रदूषको के कारण 2025 में पूरी दुनिया के दो तिहाई देशों में जल संकट पैदा हो जायेगा विकास की यह प्रक्रिया केवल आज की आवश्यकताओं की पूर्ति करती है अगर यह प्राक्रतिक इसी गति सेचलती रही तो वह दिन दूर नही जब प्राकृतिक संसाधन समाप्त हो जायेगे व भावी पीढ़ी के लिए कुछ नही बचेगा। अब प्रश्न यह है कि इन समस्याओं के समाधान व पर्यावरण संरक्षण हेतु विकास की किस प्रक्रिया को अनपाया जाये ताकि वर्तमान की आवश्यकताओं को भी पूरा किया जा सकें और आने वाली पीढ़ियों के लिए भी प्राकृतिक संसाधन बचाये जा सके इनके समाधान के लिए सतत् विकासकी आधारणा को उद्य हुआ।

विकास की भाँति सतत् विकास भी एक बहुपक्षीय धारणा है विविध अर्थशास्त्रीयों वैज्ञानिकों और संस्थाओं ने इसे अपने विचार के अनुरूप परिभाषित किया है।

हारवुड ने इसके आर्थिक पक्ष पर प्रकाश डालते हुए ऐसी व्यवस्था के रूप में परिभाषित किया हैं जो अनवरत रूप से व्यापक स्तर पर जनहित के लिए हों तथा मानव व अन्य प्रजातियों के प्रति मैत्रीपूर्ण पर्यावरणीय सन्तुलन बनाने में सक्षम हो 1972 में मानवीय पर्यावरण पर धोषणा स्टॉकहोम सबसे बड़ी उपलब्धि मानी जाती हैं जिसमें 7 से 26 सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया गया इसी सन्दर्भ में जी०एच० ब्रुटलैण्ड की अध्यक्षता में 1983 में ॅवतसक बवउउपेपवद म्दअपतवदउमदज ंदक क्मचंतजउमदजका गठन किया गया 3 वर्ष बाद 1987

में प्राप्त निष्कर्षों की रिपोर्ट ''हमारा साझा भविष्य'' जारी की जिसे ब्रुटलैण्ड आयोग के नाम से भी जाना जाता है इस रिपोर्ट के बाद सतत् विकास की आवधारणा का वैखिक परिपेक्ष में दृष्टिपात हुआ (5) 1987 में बुटलैण्ड आयोग द्वारा प्रकाशित रिपोर्ट हमारा साझा भविष्य" मे सतत् विकास को परिभाषित करते हुए कहा कि सतत् विकास ऐसा विकास है जो भविष्य में भावी पीढ़ियों की आवश्यकताओं से समझौता किये बिना वर्तमान की जरुरतों की पूर्ति करता है" सतत् विकास दुनिया के प्राकृतिक संसाधनों की सीमा के भीतर रहकर सतत्ता पर आर्थिक सामाजिक और पारिस्थितिकी प्रगति ओर क्षमता के विचार के रूप में ध्यान केन्द्रित करने एवं जन तत्वों के आपस में जोड़ने वाले बहुत से स्त्रोतों की माँग करता है। सतत् विकास आर्थिक विकास, सामाजिक विकास एवं पर्यावरण संरक्षंण एवं सुरक्षा के एकीकरण द्वारा लोक कल्याण को सुनिशचित करेगा। सतत् विकास अब पूरी दुनिया का मुख्य सरोकार है मिलेनियम डेवलपमेन्ट गोल्स की स्थापना 2000 में संयुक्त राष्ट्र के मिलेनियम सम्मेलन पर हुई जिसमें संयुक्त राष्ट्र के 193 देशों ने भाग लिया इससे 8 वैश्विक लक्ष्य निध ार्रित किये थे जिन्हें 2015 तक पूरा करने का लक्ष्य रखा गया था। ये लक्ष्यथे भूखमरी तथा गरीबी समाप्त करना सार्वजनिक प्राथमिक शिक्षा, लिंग समानता तथा महिला सशाक्तिकरण, शिशु मृत्यु दर घटाना, पर्यावरण सतत्ता,भ्पअ ।पकेए मलेरिया तथा अन्य बिमारियों से छुटकारा पाना।

2015 में न्यूयार्क शहर में संयुक्त राष्ट्र के तत्वाधान में विश्व के नेताओं की बड़ी सभा का आयोजन किया जिसमें सतत् विकास के लिए एजेण्डा 2030 को अपनाया गया जिसमें 17 लक्ष्य व 169 विशिष्ट लक्ष्यों को शामिल किया गया। ये लक्ष्य अगले15 वर्षों के लिए नीतियों एवं वित्तरोपषण का पथ दर्शन करेंगें। सतत् विकास की प्राप्ति हेतु जिन लक्ष्यों को निर्धारित किया गया है इन्हें आधिकारिक तौर पर वर्तमान समाज एव र्यावरण को बदलने व भविष्य को बेहतर करने वालो के रूप में जाना जाता है। वे वैश्विक लक्ष्य हैं 'शून्य गरीबी शून्य भूखमरी, उत्तम स्वास्थ्य और खुशहाली लक्ष्य, गुणवत्तपूर्ण शिक्षा, लैंगिक संमानता, स्वच्छ जल व स्वच्छता, सस्ती एवं स्वच्छ ऊर्जा, उत्कृष्ट कार्य और आर्थिक विकास, उद्योग नवाचार और बुनियादी ढाँचा, असामानताओं में कमी, संवहनीय शहर और समुदाय, उत्तदायी उपभोग और उत्पादन, जलवायु कार्यवाही जलय जीवों की सुरक्षा, न्याय शक्ति व मजबूत संस्थायें, लक्ष्यों के लिए साझेदारी। सतत् विकास लक्ष्य या एजेंडा 2030 बेहतर स्वास्थ्य गरीबी अन्मूलन एवं सभी के लिए समृद्ध जीवन और शांति सुनिश्चित करने के लिए सर्वगत कार्यवाही का आह्यन करता है।

भारतीय परिपेक्ष्य में सतत् विकास :–भारत शुरुआत से ही सतत् विकास की अवधारणा जुड़ा रहा हैं विकास पर गाँधीवादी नजरिया सतत् एवं टिकाऊ था महात्मा गाँधी ने कहा था कि ''हमारे पास सबकी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पर्याप्त साधन है'' लेकिन हमारे पास कुछ लोगो का लालच पूरा करने के लिए पर्याप्त नही हैं (7) 1992 में प्रधानमंत्री इन्दिरा गाँधी ने स्टाकहोम में मानव पर्यावरण पर हो रहे यू०एन० सम्मेलन में सतत् विकास के लिए पर्यावरण की सुरक्षा के बारे में कहा था कि ''गरीबी की समाप्ति'' विश्व के लिए पर्यावरणीय रणनीति का अभिन्न अगं है। एक राष्ट्र के रूप में भारत विश्व का सबसे युवा देश है उसमें निहित उद्यमशीलता के दम पर परिवर्तन शिखर पर हैं इसके युवाओं को प्रारम्भिक शिक्षा व कार्यवाही में लगें रहने की आवश्यकता हैं ताकि एक दीर्घकालिक गति बनाने और उसे बरकरार रखने में युवा पीढ़ी सफल हो और सतत् विकास लक्ष्य के विगत 10 वर्षो की समय अवधि में देश को इन महत्वकांक्षी लक्ष्यों में सफलता प्राप्त करने में मदद कर सकें 2019–20 में नीति आयोग द्वारा जारी सूंचकाक में भारत को 2018 के स्कोर के आयोग मुकाबले तीन की बढ़ोतरी के साथ 60 अंको का स्कोर दिया गया है। सस्ती व स्वच्छ ऊर्जा, स्वच्छपानी व स्वच्छता, नवाचार के क्षेत्रो में सुधार के कारण भारत के समस्त स्कोर में सुधार हुआ है 'लक्ष्य 10 असमानताओं में कमी' के तहत यह सुनिश्चित करना है कि देश की जनसंख्यसा के नीचे के 40 प्रतिशत आर्थिक सामाजिक दुर्बलों की आय वर्ष 2030 तक. राष्ट्रीय औसत से अधिक हो। विश्व बैंक की रिपोर्ट के अनुसार भारत की उच्च आबादी व धन का असमान वितरण गिन्नी सूचंकाक को निचले स्तर पर रखने के लिए जिम्मेदार हैं तत्कालीन भारतीय सरकार ने 'सबका साथ सबका विकास' का नारा दिया है 'कोई पीछे न छूटे' एस0डी0जी0 10 के परिपेक्ष्य में जन धन योजना, वित्तीय समावेशन, महिला सशक्तिकरण और सामाजिक सुरक्षा की एक व्यापक रणनीति है भारत में नगरीकरण तीव्र गति से बढ़ रहा है। 2001–2011 के मध्य शहरी जनसंख्या में 9.1 करोड़ की वृद्धि हुई हैं यह माना जा रहा है कि 2030 तक भारत में एक–एक करोड़ वाले 6 मेगा शहर होगे।2013–14 के आकड़ों के अनुसार 68 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्र में रहती थी। 17.1 शहरों की तग बस्तियों में भारत सरकार के जवाहरलाल नेहरू राष्ट्रीय शहरी नवीरकण मिशन स्मार्ट सिटी मिशन, अटल पुनजीवन एवं शहरी कायाकल्प मिशन शहरी क्षेत्रों में सुधार की चुनौतीयों का सामना करने के लिए कार्य कर रहे हैं शहर संवहनीय विकास के इंजन हैं शहरों में जनता को आर्थिक और सामाजिक दृष्टि से सम्पन्नता के अवसर मिलते हैं लेकिन यह ऐसे शहरों में ही सम्भव है, जहा लोगों को उत्कृष्ट रोजगार मिल सके। शहर जब अपनी औपचारिक सीमाओं से

बहार तक फैल जाते है तो अनियोजित शहरी बस्तियाँ देश की विकासात्मक योजनाओं तथा सतत् विकास के वैश्विक लक्ष्यों के लिए हानिकारक हो सकती है। सतत् विकास के समस्त लक्ष्यों की प्राप्ति में नगरीय प्रशासन की महत्वपूर्ण भूमिका है।

उपसंहार

सतत् विकास वह दृष्टिकोण है जिससे हम भावी पीढ़ियों के लिए प्राकृतिक संसाधन व पर्यावरण को बचासके। यह आवधारणा समझौता या संधि पर आध ाारित नहीं है बल्कि स्वैच्छिक नैतिक मूल्यात्मक एवं आर्दशात्मक हैं सतत् विकास समाज के विभिन्न पक्षों को समाहित किये हुए हैं इन लक्ष्यो की प्राप्ति मे जितनी भूमिका सरकार की है उतनी जनता का भी उत्तरदायित्व है। कि वह सरकार का सहयोग करे, गरीबी के सभी रूपों की समाप्ति, शिक्षा, स्वास्थ्य सुरक्षा, सामाजिक न्याय, समावेशी विकास, महिलाओं एवं लड़कियों को सशक्त बनाना तथा पर्यावरण से रहा हैं सतत् विकास के आधार स्तम्भ है। इन लक्ष्यों 2030 पूर्णकरने का लक्ष्य रखा गया है इस लक्ष्यों को पूर्ण करने में राज्य स्थानीय प्रशासन दोनों उत्तदायी है।

सन्दर्भ

1. *बन्धोपाध्याय डेवलपमेण्ट ऑफ हिन्दू पालिसी पालिटिकल थ्योरीज द्वितीय भाग पृ०स० 223–24*
2. *यादव, रामगणेश भारत में सामाजिक परिवर्तन एवं विकास ओरयिंत ब्लॉक नई दिल्ली पृ०स० 13*
3. *शर्मा, सुभाष,''पर्यावरण और विकास'' सूचना प्रसारण मंत्रालय भारत सरकार नई दिल्ली 2017 पृ०स० 13*
4. *उपाध्याय, डा० ममता, सुशासन एच सतत् विकास पृ०स० 20*
5. *Michele camping 'GIS for sustainable development' Taylor and Francis group Inform U.S.A 2006-P.P-9.6*
6. *पाण्डें:, जितेन्द्र कुमार, ''सतत् विकास एक बेहतर दुनिया का रास्ता, फरवरी 2014 वर्ल्ड कोफ्स पृ०स० 29*
7. *पूर्वोक्त*
8. *प्रॉ०यू० सी कुलश्रेष्टः शीत शिक्षा टिकाऊ पर्यावरण विकास मासिक वर्ल्ड कोफ्स फरवरी 2014 पृ०स० –59*
9. *दोंदे सुभाष कुमार 'सतत् विकास लक्ष्य (SDS): समीक्षात्मक विश्लेषण International Journal of of Hindi Research You me 6.2026*
10. *सदन प्रीति सार्वजनकि स्वास्थ्य सुविधाओं का 'कायाकल्प'योजना जनवरी 2020 पृ०स०170.19*

मङ्गलम् -वर्ष 13(02) भाग-XXV, अगस्त 2022
ISSN-0976-8149 पृ.-209-216

आपातकाल के दौरान स्वतंत्रता का अधिकार : आलोचनात्मक मूल्यांकन

*सुधाकर कुमार मिश्र**
प्रो० प्रवीण गर्ग ***

सारांश

भारत संसार का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक राज्य है। लोकतंत्र को जनता का, जनता के लिए एवं जनता के द्वारा किया जाने वाला शासन कहलाता है। भारत के लोकतंत्र में आपातकाल को ''काले अध्याय'' की संज्ञा दी जाती है। जनता के मौलिक अधिकार (स्वतंत्रता का अधिकार) निलंबित हो जाते हैं, प्रेस पर प्रतिबंध (अभिव्यक्ति की आजादी) को निलंबित कर दिया जाता है। आपातकाल की स्थिति में राष्ट्रपति नागरिकों को संविधान के भाग–3 द्वारा प्रदान किए गए सांविधानिक उपचारों के अधिकार को स्थगित करते हैं; जिसके फलस्वरूप सरकार कोई भी कानून या आदेश बना सकती है अथवा कार्यकारिणी कोई आदेश दे सकती है, भले ही वह कानून/आदेश संविधान के भाग–3 में दिए गए मूल अधिकारों से विपरीत क्यों न हो?

बीज–शब्द– आपातकाल, लोकतांत्रिक राज्य, निर्वाचन एवं काला अध्याय

परिकल्पना

1. क्या आपातकाल के दौरान नागरिकों एवं व्यक्तियों के मौलिक अधिकार निलंबित हो जाता है?
2. क्या आपातकाल के दौरान कार्यपालिका अधिनायकवाद। अलोकतांत्रिक । स्वैरतंत्र में बदल जाती है?

प्रस्तावना

संघात्मक शासन व्यवस्था के अन्तर्गत केन्द्र सरकार एवं राज्य सरकारें स्वतंत्र होती है। एकात्मक शासन व्यवस्था के अन्तर्गत संघीय सरकार एवं इकाइयों के सरकार के बीच अधीनस्थ का सम्बंध होता हैं एकात्मक शासन व्यवस्था के अन्तर्गत इकाई की सरकार संघ सरकार की अधीनस्थ होती हैं।[1]

भारत के संविधान के अन्तर्गत तीन प्रकार के आपातकाल का उपबंध हैः–

1. युद्ध या वाह्य आक्रमण या सशस्त्र विद्रोह से उत्पन्न आपात;
2. राज्यों में सांविधानिक तंत्र के विफल होने से उत्पन्न आपात;
3. वित्तीय आपात[2]

**असिस्टेण्ट प्रोफेसर राजनीति विज्ञान विभाग, एस.एस.एन. कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय दिल्ली*
***प्राचार्य एस.एस.एन. कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय दिल्ली*

भारत के संविधान के अनुच्छेद 352 यह उपबंधित करता है कि राष्ट्रपति को इस तथ्य का समाधान हो जाए कि सांविधानिक व्यवस्था में गम्भीर आपात विद्यमान है; जिसमें युद्ध, बाह्य आक्रमण या सशस्त्र विद्रोह से भारत या उसके किसी अभिन्न भाग में सुरक्षा संकट में है या ऐसा संकट सन्निकट है तो उद्घोषणा द्वारा इस आशय कि घोषणा कर सकता है। ''सम्पूर्ण भारत के सम्बंध में या उसके किसी ऐसे भाग के सम्बंध में कर सकेगा, जो उद्घोषणा में उल्लिखित किया जाए।''[3] भारत के संविधान में कहा गया है कि संकट की उद्घोषणा आक्रमण होने या विद्रोह होने के पूर्व की जा सकती है, यदि राष्ट्रपति को समाधान हो जाए कि ऐसा कोई संकट सन्निकट है।

अमेरिका के राजनीतिक व्यवस्था के अन्तर्गत राज्य में आन्तरिक अव्यवस्था उत्पन्न होने की स्थिति में राष्ट्रपति उस समय तक हस्तक्षेप नहीं कर सकता है, जब तक सम्बंधित राज्य का विधानमण्डल ऐसा करने के लिए राष्ट्रपति से अनुरोध न करे। यदि राज्य विधानमण्डल सत्र में नहीं है तो यह प्रार्थना उस राज्य के राज्यपाल के द्वारा की जा सकती है।[4]

आस्ट्रेलिया के संवैधानिक व्यवस्था में इसी प्रकार का प्रावधान करते हुए यह कहा गया है कि किसी राज्य में उत्पन्न होने वाली आन्तरिक अशांति को दूर करने के लिए केन्द्र सरकार उसी समय हस्तक्षेप करता है; जब उस राज्य की कार्यकारिणी की ओर से ऐसा अनुरोध किया जाए।[5]

आपातकाल की स्थिति में राष्ट्रपति नागरिकों को संविधान के भाग 03 द्वारा प्रदान किए गए सांविधानिक उपचारों के अधिकार को स्थगित करते हैं जिसके फलस्वरूप सरकार कोई भी कानून या आदेश बना सकती है अथवा कार्यकारिणी कोई आदेश दे सकती है, भले ही वह कानून/आदेश संविधान के भाग–3 में दिए गए मूलाधिकारों से विपरीत क्यों नहीं हो?

आपात–काल में नागरिकों के मूल अधिकार स्थगित हो जाते हैं। संविधान में यह व्यवस्था है कि ऐसे आदेश यथाशीघ्र संसद के समझ रखे जाने चाहिए; लेकिन इसके लिए कोई अधिकतम अवधि निश्चित नहीं की गई है। राष्ट्रपति महोदय से यह आशा की जाती है कि ऐसे आदेशों को एक विवेकयुक्त अवधि के भीतर संसद के समक्ष रखवाएगे। संविधान के 44वें संशोधन, 1978 द्वारा यह व्यवस्था की गयी है कि आपातकाल में अनुच्छेद 20 एवं अनुच्छेद 21 द्वारा प्रदान की गयी वैयक्तिक स्वतंत्रता से सम्बंधित मूलाधिकारों को स्थगित नहीं किया जा सकेगा।[6]

अनुच्छेद 358–359 में यह बताया गया है कि आपात–काल की घोषणा का मूलाधिकारों पर क्या प्रभाव पड़ेगा? संविधान के 44वें संशोधन, 1978 में

संशोधित किए जाने के पश्चात इसका परिणाम होता है–

1. संविधान के अनुच्छेद 358 में यह उपबंध है कि राज्य पर अनुच्छेद 19 द्वारा अधिरोपित मर्यादाऐं लागू नहीं होगी जिससे यह अधिकार आपात की उद्घोषणा के प्रवृत्त रहने के दौरान राज्य के विरुद्ध अविधिमान्य हो जाऐंगे। अनुच्छेद 359 के अधीन राष्ट्रपति के आदेश द्वारा इन अधिकारों को या उनमें से किसी को प्रवृत्त कराने के लिए न्यायालयों में अभ्यावेदन के अधिकार का निलम्बन किया जा सकता है।[7]

2. अनुच्छेद 352 में विनिर्दिष्ट आधारों में से किसी आधार पर घोषित उद्घोषणा को अर्थात् युद्ध, वाह्य आक्रमण या सशस्त्र विद्रोह को अनुच्छेद पर अनुच्छेद 359 लागू होगा; किन्तु अनुच्छेद 358 का लागू होना हैं ऐसे आपात तक ही सीमित है जो युद्ध या वाह्य आक्रमण के आधार पर घोषित किया है।

3. युद्ध का वाह्य आक्रमण के आधार पर आपातकाल की उद्घोषणा की जाती है वैसे ही अनुच्छेद 358 प्रवृत्त हो जाता है और अनु. स्वतः निलम्बित हो जाता है। किन्तु अनुच्छेद 359 का लागु करने के लिए राष्ट्रपति का आदेश किया जाना आवश्यक है, जिसमें वे मूल अधिकार विनिद्रिष्ट हो जिनके विरुद्ध निलम्बन लागू होता है।

4. अनुच्छेद 19 को अनुच्छेद 358 निलम्बिन करता है। अनुच्छेद 359 के अधीन अधिकार प्रवृत्त कराने का निलंबन ऐसे मूलाधिकारों के सम्बंध में है जो राष्ट्रपति आदेश में विनिद्रिष्ट है, भारत के संविधान का अनुच्छेद 20 एवं 21 को छोड़कर सभी मौलिक अधिकार निलंबित हो जाते हैं।

दूसरे शब्दों में कहे तो आपातकाल के दौरान नागरिकों के सभी स्वतंत्रताऐं निलम्बित हो जाती है।

भारत के लोकतंत्र में आपातकाल को ''काले अध्याय'' की संज्ञा दी जाती है। आपातकाल के दौरान जनता के स्वतंत्रताओं को निलम्बित कर दिया जाता है एवं प्रेस पर प्रतिबंध (अभिव्यक्ति की आजादी) को निलंबित कर दिया जाता है।[8]

वरिष्ठ पत्रकार **श्री राम बहादुर राय** जी ने लिखा है कि– ''वास्तविकता यह है कि 25 जून, 1975 को 12:30 बजे राष्ट्रपति महोदय से जबरदस्ती, दस्तखत करा लिया गया था। 26 जून, 1975 को कैबिनेट ने इसका अनुमोदन किया था। इस समयान्तराल के मध्य राष्ट्र के समस्त सम्मानित नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया था।''[9]

उद्देश्य

राजनीतिक व्यवस्था में आपातकाल की आवश्यकता क्यों महसूस हुई। इस प्रकरण का मापांक तात्कालीन परिस्थितियों, तात्कालीन परिस्थितियों के राजनीतिक वातावरण का अध्ययन करने से परिणाम महसूस होगा।

1971 के आम चुनाव के बाद श्रीमती इंदिरा जी को संसदीय दल के नेता के रूप में चुना जाना, यह दल के वरिष्ठ नेताओं के बीच गुटबाजी की भावना को जन्म दिया। भारत में बढ़ती महंगाई, बेरोजगारी, इंदिरा सरकार में संजय गाँधी का हस्तक्षेप, बेलगाम नौकरशाही ने आपातकाल के लिए पीठिका तैयार किया था। जनता लोकनायक जयप्रकाश नारायण के साथ लामबंद होने लगी थी।

आपातकाल के लिए उत्तरदायी कारक श्रीमती गाँधी की शासकीय विफलता, श्री यशपाल कपुर नौकरशाह होते हुए भी श्रीमती गाँधी का वैयक्तिक सहायक के तौर पर काम करना, इलाहाबाद हाईकोर्ट ने श्रीमती गाँधी के चुनाव को असंवैधानिक करार दिया था।[10]

1971 में हुए लोकसभा चुनाव में श्रीमती गाँधी रायबरेली सीट से विजयी हुई थी; लेकिन उनके प्रतिद्विन्द्वी श्री राजनारायण जी ने इंदिरा गाँधी के चुनाव परिणाम को इलाहाबाद उच्च न्यायालय में चुनौती प्रदान किया।

1. सरकारी मशीनरी का दुरुपयोग;
2. सत्ता के दबाव के कारण चुनाव के परिणाम को प्रभावित करने का आरोप लगाया था।

इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने श्रीमती इंदिरा गाँधी के निर्वाचन को रद्द कर दिया; एवं उनको 6 साल तक चुनाव लड़ने पर प्रतिबंध लगा दिया था। श्रीमती इंदिरा गाँधी ने सर्वोच्च न्यायालय में अपील दायर किया , 24 जून 1975 को उच्चतम न्यायालय का निर्णय आया;

1. निर्वाचन रदद् को बरकरार रखा गया;
2. 6 साल के चुनाव लड़ने के प्रतिबंध को बरकरार रखा गया;
3. प्रधानमंत्री के पद पर बने रहने को उच्चतम न्यायालय ने आदेश दिया; वह संसद में मतदान प्रक्रिया में भाग नहीं ले सकती है।[10]

लोकनायक जयप्रकाश नारायण ने दिल्ली के रामलीला मैदान से श्री रामधारी सिंह दिनकर के कविता के वाक्य को पढ़कर कहा कि '' सिंहासन खाली करों कि जनता आती है'' उन्होंने कहा कि ''मुझे गिरफ्तारी का डर नहीं है और मैं इस रैली में भी अपने उस आह्वान को दोहराता हूँ ताकि कुछ दूर

संसद में बैठे लोग भी सुन सके। मैं आज फिर सभी पुलिसकर्मियों और जवानों को आह्वान करता हूँ कि इस सरकार के आदेश नहीं माने क्योंकि इस सरकार ने शासन करने की अपनी वैधता खो दी है।''[11]

प्रभाव

संविधान के भाग–18 में आपातकाल का उपबंध किया गया है। सभी विरोधियों को डैप्। (Maintenance to Internal Security) के अन्तर्गत गिरफ्तार की गयी थी। ''देशभर में क्या हो रहा है, चन्द्रशेखरजी कैसे डायरी रखते थे, जार्ज फर्नाडीस कब गिरफ्तार होगे?''[12]

आपातकाल घोषित होने के पश्चात् मूलाधिकार निलम्बित हो जाते हैं। आपके साथ 'अमानवीय व्यवहार होगा, उसके लिए आप न्यायालय नहीं जा सकते हैं।[13]

1. अखबारों और समाचार पत्रों के नियंत्रित करने के लिए कठोर कानून बनाए गए;
2. पीटीआई, यूएनआई, हिन्दुस्तान समाचार और समाचार भारती को समाप्त करके ''समाचार एजेन्सी'' का गठन किया गया था;
3. प्रेस के लिए 'आचार संहिता' की घोषणा कर दी गई थी;
4. संपादको को सरकार विरोधी लिखने, मुद्रित के कारण गिरफ्तार कर लिया गया था;
5. अमृत नहाता (Amrit Nahata) की फिल्म 'आँधी' पर पाबंदी लगा दी गई थी;
6. आर्थिक मोर्चे पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा।

आपातकाल के कारण 'परिवार नियोजन एवं सुन्दरीकरण' कार्यक्रम पर अत्यधिक नकारात्मक प्रभाव पड़ा था। 42 वें संविधान संशोधन द्वारा व्यापक बदलाव किया गया एवं संवैधानिक लोकतंत्र को 'नियंत्रित लोकतंत्र' (Guided Democracy) के रूप में बदल दिया गया था। इसीलिए 42वें संविधान संशोधन को 'लघु संविधान' कहा जाता है। 39वें संविधान संशोधन से 42वें संविधान संशोधन के द्वारा राष्ट्रपति को सर्वोपरि बना दिया गया था; जबकि लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था में जनता का सदन (संसद) सर्वोपरि होती है।[14]

शोध प्रणाली

उपर्युक्त शोध पत्र के लेखन में तुलनात्मक उपागम, कानूनी संस्थागत उपागम, साक्षात्कार विधि एवं Case Study का अनुप्रयोग किया गया है।

डाटा–अन्वेषण

सितम्बर 1962 में चीन ने भारत पर आक्रमण किया। 26 अक्टूबर, 1962 को अनुच्छेद 352 के अन्तर्गत राष्ट्रपति ने यह उद्घोषणा की कि गम्भीर आपात विद्यमान है जिससे वाह्य आक्रमण से भारत की सुरक्षा संकट में हे। यह आपात स्थिति 10 जनवरी, 1968 तक चली। सन् 1971 में पाकिस्तान ने भारत पर आक्रमण किया था तो आपात स्थिति की घोषणा पुनः की गई थी। यह आपात–स्थिति 1977तक प्रवर्तन में रही थी। 3 नवम्बर, 1962 को राष्ट्रपति ने अनुच्छेद 359 (1) के अन्तर्गत प्रदत्त शक्ति के प्रयोग में राष्ट्रपति यह घोषित करता है कि किसी व्यक्ति के अनुच्छेद 14,21 और 22 में दिए गए अधिकारों के प्रवर्तित कराने के लिए जब तक अनुच्छेद 352 (1) के अन्तर्गत जारी की गयी आपात उद्घोषणा प्रवर्तन में है, किसी न्यायालय के प्रचालन का अधिकार निलम्बित रहेगा, यदि ऐसे व्यक्ति को भारत प्रतिरक्षा विधेयक, 1962 या उसके अधीन किसी नियम का आदेश द्वारा उक्त अधिकारों से वंचित कर दिया गया है।''[15]

माखन सिंह टै पंजाब राज्य[16] के मामले में भारत प्रतिरक्षा अधिनियम की विधिमान्यता को चुनौती दी गयी थी। इस मामले में माखन सिंह एवं कुछ अन्य व्यक्तियों को भारत प्रतिरक्षा अधिनियम, 1962 की धारा 3 और उसके अधीन बनाए गए नियम 30 के अधीन बंदी बनाया गया था। पंजाब उच्च न्यायालय में बंदी प्रत्यक्षीकरण की याचिका दाखिल की, जिसमें उसने अपने निरुद्ध किए जाने को इस आधार पर चुनौती दी कि भारत प्रतिरक्षा अधिनियम और उसके अधीन निर्मित नियम अनुच्छेद 14, 21 और 22 में दिए गए उसके मूल अधिकारों का अतिक्रमण करते हैं उच्च न्यायालय ने उसकी याचिका खारिज कर दी, क्योंकि अनु. 359(i) के अधीन जारी किया गया राष्ट्रपति का आदेश दण्ड संहिता की धारा 491 (ख) के अधीन उच्च न्यायालय को प्रचालित करने के अधिकार को निलम्बित करता है।[17]

उपसंहार

आपातकाल के दौरान नागरिकों के सभी स्वतंत्रताऐं निलम्बित हो जाती हैं भारत संसार का सबसे बड़ा लोकतंत्र है। भारत संसार का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक राज्य हैं। लोकतंत्र को जनता का, जनता के लिए एवं जनता के द्वारा किया जाने वाला शासन कहलाता है। भारत के लोकतंत्र में आपातकाल को ''काले अध्याय'' की संज्ञा दी जाती है। जनता के मौलिक अधिकार (स्वतंत्रा का अधिकार) निलंबित कर दिए; एवं प्रेस पर प्रतिबंध (अभिव्यक्ति की आजादी) को निलंबित कर दिया गया था।

आपातकाल घोषित होने के बाद आपके मूलाधिकार निलम्बित हो जाते हैं। जनता के साथ अमानवीय व्यवहार होने लगता है। समाचार पत्रों, अखबारों को नियंत्रित करके जनता के मौलिक अधिकारों को निलंबित कर दिया जाता हैं। जनता के रचनात्मक संस्कृति पर कुठाराघात कर दिया जाता है।

सुझाव

लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था में स्वतंत्रता एक ऐसा अवयव है; जिससे व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास होता है। शोध पत्र का लेखन एवं विश्लेषित करने पर निम्न बाते कही जा सकती है :

1. राष्ट्रपति महोदय आपात की उद्घोषणा तभी कर सकते हैं जब युद्ध या वाह्य आक्रमण या सशस्त विद्रोह द्वारा भारत या उसके किसी भाग की सुरक्षा संकट में है। राष्ट्रपति संवैधानिक तंत्र की घोषणा ठोस कारणों के आधार पर कर सकते है;

2. आपातकाल के विषय पर संविधान सभा में डॉ. अम्बेडकर ने इस उग्र शक्ति के उपबंध के पक्ष में दलील दिया है कि ''हम यह आशा करते हैं कि इन अनुच्छेदों के प्रयोग की आवश्यकता नहीं होगी और ये पुस्तक में ही बने रहेंगे। यदि इन्हें कभी प्रवृत्त किय जाता है तो मैं आशा करता हूँ कि राष्ट्रपति किसी प्रांत के प्रशासन को निलम्बित करने से पहले सभी उचित पूर्वावधानी बरतेंगे।''[18]

संदर्भ

1. *Prof C.B. Gena, Comparative Politics and Government, Vikas Publishing House, Page No. 8*
2. *Dr. D.D Basu, An Introduction of Indian Constitution, Wadhva Publication.*
3. *प्रोफेसर, जे.एन. पाण्डेय, भारत का संविधान, सेण्ट्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद*
4. *अमेरिका का संविधान, अनुच्देद 4, अनुभाग–4*
5. *The Constitution act of the Australiya, Sec 119.*
6. *Prof. S.M said, Bhartiya Shasan Pranali, Bharat Book Center, Lucknow.*
7. *आचार्य दुर्गा दास बासु, भारत का संविधान एक परिचय, 12वाँ संस्करण*
8. *Sansad TV Special Report : The Emergency - vkikr dky ds lcd*
9. *श्री रामबहादुर राय, संसद विशेष रिपोर्ट– आपातकाल के सबक*
10. *Prof Makhan Lal, Eminent Historian, Sansad TV Report.*
11. *J.P. Narain, 25 June, 1975*
12. *श्री हरवंशजी, उप सभापति, राज्य सभा*

13. *Prof Makhan Lal, Eminent Historian, Sansasd TV Report*
14. *Poof Makhan Lal, Eminent Historian, Sausad TV Report.*
15. *प्रोफेसर जे.एन. पाण्डेय, भारत का संविधान, सेण्ट्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद*
16. *Makhan Singh vs. State of the Punjab AIR 1964, SC 382*
17. *Makhan Singh vs. State of the Punjab AIR 1964, SC 382*
18. *Dr. B.R. Ambedkar, Debates of Constituent assemblyc*

मङ्गलम् -वर्ष 13 (02) भाग-XXV,अगस्त 2022
ISSN-0976-8149 पृ.-217-223

भारतीय संस्कृति में गृहस्थाश्रम का आधार दाम्पत्य – जीवन

(स्वप्नवासवदत्तम् के परिप्रेक्ष्य में)

*रचना गुप्ता **
*डॉ० दीप्ति विष्णु ***

सारांश

मानव जीवन क`विकास के लिए आश्रम – व्यवस्था महत्वपूर्ण अंग मानी गयी है। इस व्यवस्था में आयु, जीवन का उद्देश्य, कर्तव्य तथा उसकी आवश्यकता के परिप्रेक्ष्य में जीवन को चार भागों में विभक्त किया गया है।इन चारों आश्रमों में गृहस्थाश्रम महत्वपूर्ण माना गया है, क्योंकि यह समाज का वर्णन करता है। मनु का कहना है जिस प्रकार सभी प्राणियों का जीवन वायु (ऑक्सीजन) पर आधृत है उसी प्रकार अन्य सभी आश्रम गृहस्थाश्रम पर अवलम्बित हैं। गृहस्थाश्रम का आधार दाम्पत्य – जीवन है, जिसकी नींव पति –पत्नी का प्रेम है। संस्कृत साहित्य के प्रथम नाटककार भासने स्वप्नवासवदत्तम् में उदयन एवं वासवदत्ता के माध्यम से दाम्पत्य प्रेम का वर्णन किया है। महाकवि भास भारतीय संस्कृति एवं उसमें निहित मूल्यपरक सम्पत्ति के प्रवर्तक एवं प्रचारक है।उन्होंने अपने नाटकों में कथानक को प्रस्तुत करने के लिए चार मुख्य आधार निर्धारित किए हैं रामायण– महाभारत– लोककथाएँ – कल्पनाउद्भुत विषयवस्तु। इन सभी स्थलों से ग्रहीत कथावस्तु में कवि ने अपनी प्रतिभा कौशल से विशेष चमत्कार उत्पन्न किया है। महाकवि भास के नाटक जीवन के विविध क्षेत्रों से सम्बन्धित हैं, जिसका प्रस्तुत प्रपत्र में सारगर्भित विवेचन करने का मेरे द्वारा प्रयास किया गया है।

कूटशब्द– गृहस्थाश्रम, दाम्पत्य–जीवन, स्वप्नवासवदत्तम्, भास,श्रृंगार रस,

प्राचीन भारतीय संस्कृति में आश्रम व्यवस्था का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान था। मानव जीवन के सर्वांगीण विकास के उद्देश्य से यह व्यवस्था की गयी है। इसका उद्देश्य मानव जीवन की नैतिक अभिवृद्धि, कर्मनिष्ठा, आध्यात्मिक विकास तथा पुरुषार्थ – चतुष्टय की प्राप्ति था। इस व्यवस्था के प्रथम भाग में ज्ञानार्जन, द्वितीय भाग में अर्थ और काम का अर्जन, तृतीय भाग में धर्ममूलक मोक्ष की तैयारी और चतुर्थ भाग में मुमुक्षु बनकर अध्यात्म की साधना करना था। वर्णव्यवस्था के समान यहव्यवस्था भी मनुष्य को सच्चे अर्थ में मनुष्य बनाकर समाज को उन्नत करने वाली थी। इस व्यवस्था में आयु, जीवन का उद्देश्य, कर्तव्य तथा उसकी आवश्यकता के परिप्रेक्ष्य में जीवन को चार भागों में विभक्त किया गया है ब्रह्मचर्याश्रम – गृहस्थाश्रम –वानप्रस्थाश्रम – सन्यास आश्रम । इन चारों आश्रमों

**शोध छात्रा संस्कृत विभाग, सी० एम० पी० डिग्री कॉलेज, प्रयागराज (उ०प्र०)*
***शोध पर्यवेक्षिका संस्कृत विभाग, सी० एम० पी० डिग्री कॉलेज, प्रयागराज (उ०प्र०)*

में गृहस्थाश्रम अत्यधिक महत्वपूर्ण माना गया है, क्योंकि यह समाज का निर्माण करता है। जीवन से सम्बन्धित सभी महत्वपूर्ण कार्य इसी गृहस्थाश्रम में पूर्ण किए जाते हैं। इसी आश्रम में 'सर्जन' यानि नव निर्माण सम्भव है। वेदाध्ययन करने के पश्चात् ब्रह्मचारी स्नातक बनकर गुरु की आज्ञा प्राप्त कर अपने सामान वर्ण वाली और सुलक्षणों से युक्त कन्या के साथ विवाह करता था तथा गृहस्थाश्रम में प्रवेश करता था जैसा कि मनुस्मृति में कहा गया है –

गुरुणौनुमतः स्नात्वा समावृत्तो यथाविधिः ।
उद्वहेत द्विजो भार्यांसवर्णां लक्षणान्विताम् म (3/4)

युवावस्था में ऋषि–मुनियों ने विवाह का प्रावधान किया है। स्त्री और पुरुष एक–दूसरे के बिना अपूर्ण हैं। उन्हें शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक स्तर पर एक –दूसरे का साथ चाहिये। कोई भी यज्ञ, धार्मिक कार्य बिना पति– पत्नी के पूर्ण नहीं होता है । यहाँ तक कि भगवान को भी पत्नी के बिना यज्ञ करने का अधिकार प्राप्त नहीं है। जब श्री राम अश्वमेध यज्ञ कर रहे थे तो सीता की अनुपस्थिति में उनकी प्रतिमा स्थापित की गयी थी, ताकि यज्ञ में पूर्णाहुति सपत्नीक दी जा सके। दाम्पत्य जीवन एक अदृश्य बन्धन है जिसमें अधिकतर अधिकार एवं कर्तव्य अलिखित अवस्था में पाये जाते हैं। दाम्पत्य जीवन को दीर्घकालिक एवं सुखी, सम्पन्न बनाने में संयम – सन्तुष्टि – सन्तान– संवेदनशीलता– संकल्प – सक्षमता (शारीरिक, मानसिक)– समर्पण आदि सहायक हैं।

परमपुरुषार्थ मोक्ष की साधना के लिए अत्यावश्यक ऋणत्रय से मुक्ति या मोक्ष के साधन भूतत्रिवर्ग धर्म, अर्थ, काम का सम्पादन गृहस्थाश्रम ही होता है। इसलिए गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने कर्मसन्यास की अपेक्षा निष्काम कर्म पर बल दिया है। योगियों की गणना में महाराज जनक को अग्रणी माना गया है तथा ईशावास्योपनिषद् में कार्यरत रहते हुए शतायु होने की प्रेरणा दी गई है–

कुर्वन्नेवेहकर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः म (ईशावास्योपनिषद्–2)

इन समस्त बिन्दुओं को ध्यान में रखते हुए ही संस्कृत साहित्य के प्रथम नाटककार भास ने स्वप्नवासवदत्तम् में उदयन एवं वासवदत्ता के दाम्पत्य– प्रेम का वर्णन किया है। नाटककार का समस्त नाट्य रचना संसार ही प्रभावोत्पादक, प्रतिभा – प्रकर्ष को प्रस्तुत करने वाला है। इनके नाटकों में मानव जीवन के विविध रूपों का पर्यवेक्षण करने का अवसर उपलब्ध होता है। भास के तेरह नाटक प्राप्त होते हैं, किन्तु स्वप्नवासवदत्तम् के लघु कलेवर में उन्होंने जिस अप्रतिम प्रावीण्य एवं नाट्य कौशल का दिग्दर्शन कराया है, वह अपने आप में अतुलनीय है। छः अङ्कों से समन्वितयह नाटक उदयन एवं वासवदत्ता की

विचित्र एवं रोमाञ्चक कथा से परिपूर्ण है। स्वप्नवासव दत्तम्भास का उत्कृष्ट नाटक माना जाता है। जैसाकि राजशेखर के कथन से स्पष्ट है –

भासनाटकचक्रैपिच्छेकैः क्षिप्रे परीक्षितुम्।
स्वप्नवासवदत्तस्यदाहकौभून्नः पावकः ।।

भास के नाटकों में भारतीय भावों और आदर्शों का सुन्दर समन्वय मिलता है। पितृभक्ति,पातिव्रत्य, भ्रातृप्रेम, क्षमाशीलता आदि गुणों का अनेक स्थानों पर वर्णन है। भास के नाटकों में मुख्यतः श्रृङ्गार, वीर रसों का वर्णन है साथ ही करूण, रौद्र, हास्य, बीभत्स आदि रसों का भी विस्तृत रूप में प्रयोग किया गया है। इनके नाटकों में श्रृङ्गार के संयोग एवं वियोग दोनों ही पक्षों का हृदयग्राही वर्णन प्राप्त होता है, जो दाम्पत्य प्रेम का मूलाधार है। महाकवि भास मनोविज्ञान के परम ज्ञाता थे । उन्होंने अपने ग्रन्थों में जितने भी पात्रों को प्रस्तुत किया है, वे सभी मनोवैज्ञानिक ताने–बाने से सुगुम्फित हैं। वे केवल कल्पना में ही नहीं उलझते, अपितु यथार्थ की भूमि को भी स्पर्श करते हैं। उपर्युक्त नाटक का संक्षिप्त कथासार इस प्रकार है–

स्वप्नवासव दत्तम्भास की अमर कृति है। इसमें उदयन एवं वासवदत्ता की प्रणय कथा को पल्लवित किया गया है। उदयन की कमनीय कथा प्राचीनकाल से ही भारतीय परिवारों में प्रचलित रहीहै ।"प्राप्यावन्ती मुदयन कथा को विदग्रामवृद्धान" उज्जयिनी के राजा प्रद्योत राजकार्यो की ओर ध्यान नहीं देते है। इससे उसके शत्रु आरूणि को आक्रमण करने का अवसर मिल जाता है पर उदयन का मन्त्री यौगन्धरायण सचेष्ट रहता है। वह आरुणि को पराजित करने के लिए मगध के राजा दर्शक की सहायता लेना चाहता है। वह वासवदत्ता के साथ मिलकर लावाणक में उसके अग्नि में जलकर मरने का समाचार फैला देता है और वासवदत्ता को लेकर मगधराज दर्शक की बहन पद्मावती के पास न्यास रूप में छोड़कर आता है। बाद में उदयन का पद्मावती के साथ विवाह हो जाता है। एक दिन स्वप्न में उदयन को वासवदत्ता की स्मृति उद्दीप्त हो जाती है। नाटक के अन्त में वासवदत्ता का उदयन से मिलन हो जाता है। इधर उदयन का सेनापति रूमण्वान आरुणि को पराजित करता है। स्वप्नवासव दत्तम्नाटक में छः अंक हैं किन्तु नाटक के प्रथम अङ्क में ही भास दाम्पत्य प्रेम की पराकाष्ठा को प्रस्तुत करते हैं। किसी भी पतिव्रता स्त्री के लिए अपने पति का विवाह किसी और से होते हुए देखना सामान्यतः असम्भव होता है, किन्तु वासवदत्ता, जिसे महाराज उदयन अत्यधिक प्रेम करते है। वह अपने पति को चक्रवर्ती सम्राट बनाने के लिए अपनी सपत्नी के रूप में पद्मावती का विवाह उदयन से कराने के लिए सहमत हो जाती है। वह न केवल सहमति देती हैं,

अपितु उसके लिए स्वयं को मृत भी घोषित करवा लेती हैं। वासवदत्ता द्वारा अपने पति के लिए किया गया समर्पण वास्तव में एक महनीय कार्य है। इसी प्रकार महारानी वासवदत्ता के जलकर मरने की सूचना जब महाराज उदयन को प्राप्त होती है, तो वह भी उस वृतान्त को सुनकर महारानी वासवदत्ता के वियोग से सन्तप्त होकर प्राण त्यागने की इच्छा करते है, किन्तु मन्त्रियों के द्वारा उनके प्राणों की रक्षा होती है। राजा उदयन वासवदत्ता के आभूषणों को हृदय से लगाकर मूर्छित हो जाते है, इस प्रसंग में ब्रह्मचारी राजा उदयन के दाम्पत्य प्रेम पर मुग्ध होकर कहता है–

नैवेदानीं तादृशाश्चक्रवाकाः,
नैवाप्यन्ये स्त्रीविशेषैर्वियुक्ताः।
धन्यासास्त्री यां तथावेत्ति भर्ता,
भर्तृस्नेहात सा हिदग्धाप्यदग्धा।। (1/13)

चक्रवाक पक्षी भी उस राजा उदयन के समान वियोगी नहीं है, श्रेष्ठ स्त्रियों से वियुक्त हुए अन्य भी नहीं हैं। वह स्त्री धन्य है, जिसे पति इस प्रकार से मानता है, क्योंकि वह जलकर भी वस्तुतः पति स्नेह के कारण न जली हुई है। प्रस्तुत स्थल पर स्वप्नवासवदत्तम् में श्रृङ्गार के संयोग एवं वियोग दोनों पक्षों का वर्णन प्राप्त होता है, जोकि दाम्पत्य प्रेम का मूलाधार है।

इसी प्रकार स्वप्नवासवदत्ता के तृतीय अङ्क में वासवदत्ता द्वारा कथित' अयुक्तं पर पुरूष संकीर्त्तनम् श्रोतुम' अर्थात परपुरुष का गुणानुवाद सुनना उचित नहीं है। वासवदत्ता अपने पति के अतिरिक्त किसी अन्य पुरुष की वार्ता को सुनना भी पसन्द नहीं करती है। यहाँ पर आदर्श एवं मर्यादित दाम्पत्य प्रेम के दर्शन होते हैं।

चतुर्थ अङ्कमें जब विदूषक राजा से पूछता है–

का भवतः प्रिया?

राजा विदूषक की बात का उत्तर देते हुए कहते हैं–

पद्मावतीबहुमता मम यद्यपि रूपशीलमाधुर्यैः
वासवदत्ताषबद्धं न तु तावन्मेमनोहरतिम (4/5)

रूपशील और माधुर्य से यद्यपि पद्मावती मुझे प्रिय लगती है, परन्तु वह वासवदत्ता में आसक्त मेरे मन को आकृष्ट नहीं कर पा रही हैं। उदयन वासवदत्ता को पुनः स्मरण करते हुए कहते हैं –

दुखंत्यक्तुं बद्धमूलौनुरागः,
स्मृत्वास्मृत्वा याति दुःखंनवत्वम्स

यात्रात्वेषायद्विमुच्येहवाष्पं
प्राप्तौनृण्यायातिबुद्धिः प्रसादम्।। (4/6)

दृढ़मूल वाला अनुराग त्यागना दुष्कर है। स्मरण करके दुःख नवीनता को प्राप्त होता है। यह तो व्यवहार है, कि यहाँ रोकर, आँसू बहाकर मनुष्य ऋण से मुक्त हो जाता है, और दुःख कम हो जाने से चित्त प्रसन्नता को प्राप्त होता है। निर्मल हो जाता है। राजा उदयन दिवंगत वासवदत्ता को स्मरण करके व्यथित होते हैं, तथा उनके नेत्रों से आँसू निकलने लगते हैं। तभी पद्मावती के द्वारा उनके नेत्र गीले होने का कारण पूछने पर राजा उनके प्रश्न का उत्तर बहुत ही संयम से देते हैं

शरच्छशाङ्कगौरेणवाताविद्धेन भामिनि।
काशपुष्पलवेनेदंसाश्रुपातं मुखं मम।।(4/8)

शरदकालीन चन्द्र के सदृश शुभ्रवर्ण वायु के द्वारा उड़ाये गये काश पुष्पों के पराग नेत्रों में गिर जाने से यह मेरा मुख अश्रुओं से गीला हो गया है। उपर्युक्त उदाहरण द्वारा स्पष्ट है कि जिस प्रकार महाराज उदयन रानी वासवदत्ता के प्रति दाम्पत्य प्रेम का निर्वाह कर रहे थे, उसी प्रकार वासवदत्ता के दिवंगत होने का प्रसंग जानकर पद्मावती से विवाह होने पर उनके प्रति भी अपने दाम्पत्य प्रेम का निर्वाह कर रहे थे । इसलिए राजा उदयन वासवदत्ता को स्मरण करके व्यथित होने पर भी पद्मावती से झूठ कहते हैं कि मेरे नेत्रों में काश पुष्प के पराग गिर गये हैं। अतः स्पष्ट है कि राजा उस स्थिति में भी अपने दाम्पत्य प्रेम का सम्यक्निर्वाह कर रहे थे।

पञ्चम अङ्क में विदूषक के मुख से पद्मावती के शिरोवेदना वृतान्त को सुनकर राजा व्यथित हो जाते हैं, और विचार करने लगते हैं–

रूपश्रिया समुदितां गुणतश्च युक्तां
लब्ध्वा प्रियांममतु मन्द इवाद्यशोकः ।
पूर्वाभिघातसरूजौप्यनुभूतदुःखः
पद्मावतीमपि तथैव समर्थयामि।। (5/2)

सौन्दर्य सम्पदा से युक्त, गुणों से सम्पन्न पद्मावती को प्राप्त कर आज मेरा शोक सन्ताप कुछ कम सा हो गया है। पहले भाग्य के प्रहार से पीड़ित होकर दुःख का अनुभव करने के कारण उसी वासवदत्ता के समान इस पद्मावती की भी वैसी सम्भावना कर रहा हूँ। महाराज उदयन पद्मावती के स्वास्थ्य को लेकर चिन्तित हो जाते हैं तथा विदूषक से शीघ्र पद्मावती के पास पहुँचने के लिए कहते हैं। विदूषक और राजा उदयन शीघ्र ही उस स्थान पर पहुँचते हैं

जहाँ पद्मावती की शय्या बिछाई गयी थी। यद्यपि वह वासवदत्ता को स्मरण करके आज भी व्याकुल हो जाते हैं, किन्तु पद्मावती के प्रति भी अपना दाम्पत्य प्रेम निर्वाह करने में पीछे नहीं हटे स वह पद्मावती का भी उतना ही आदर–सत्कार करते थे, जितना कि महारानी वासवदत्ता का अपनी पत्नी के रूप में करते थे।

भारतीय संस्कृति से प्रेरित भावनाएँ भास के नाटकों में विद्यमान हैं। भारतीय संस्कृति की वर्णाश्रम व्यवस्था में गृहस्थाश्रम का आधार ही दाम्पत्य जीवन है, जिसकी नींव पति–पत्नी का प्रेम है। किन्तु हम वर्तमान भौतिकतावादी युग में पाश्चात्य संस्कृति से प्रेरित होकर समाज में विवाह– विच्छेद, एकल परिवार तथा नैतिक मूल्यों का ह्रास आदि स्थितियों को देख रहे हैं। इस सन्दर्भ में महाकवि भास के नाट्यों में वर्णित आदर्श दाम्पत्य प्रेम से प्रेरणा लेकर समाज को इस प्रकार की विसंगतियों से बचाया जा सकता है। जो भारतीय संस्कृति के श्रेष्ठ आदर्शों को पुनः स्थापित करने में सक्षम है। पतिवृत धर्म का आदर्श उपस्थित करते हुए कवि का कथन है कि स्त्रियों का पति ही स्वामी है, और प्रत्येक दशा में उन्हें उनका अनुसरण करना चाहिए जैसा कि प्रकृत श्लोक में वर्णित है–

अनुचरतिशशाङ्कंराहुदोषैपितारा,
पतति चवनवृक्षे याति भूमिंलताच।
त्यजतिन च करेणुः पङ्कलग्नंगजेन्द्रं,
व्रजतु चरतु धर्म भर्तृनाथां हि नार्यः।।(1/25)

भास के नाटकों में ही नहीं, अपितु दम्पत्ति के सुन्दर सम्बन्धों एवं समन्वयात्मक सम्पर्क की अभिव्यक्ति महाकवि कालिदास द्वारा रचित 'रघुवंशमहाकाव्य' के अज–विलाप में भी परिलक्षित होती है। अज के लिए इन्दुमती न केवल गृहिणी थी, अपितु मित्र, सचिव और ललितकलाविद् शिष्या थी। उसका वियोग अज का सर्वस्व हरण है ऐसा दाम्पत्य प्रेम दुर्लभ है –

गृहिणी सचिवः सखीं मिथः
प्रियशिष्याललितेकलाविधौ।
करुणा–विमुखेन मृत्युना,
हरतात्वांवदकिं न मे ह्रतम्म (8/67)

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि जिस प्रकार सृष्टि का आधार स्त्री और पुरुष है, उसी प्रकार समाज का, परिवार का आधार दाम्पत्य जीवन है। यदि हम स्वयं इसका निर्वहन सही प्रकार से करेंगे तथा दूसरों को ऐसा करने

की शिक्षा प्रदान करेंगे एवं स्वयं के आचरण से उदाहरण प्रस्तुत कर अपनी आने वाली पीढ़ी को ऐसा करने की शिक्षा और अभिप्रेरणा देंगे तो आने वाला समाज हर दृष्टि से सुरक्षित होगा तथा नव भारत के निर्माण में अपना सक्रिय सहयोग प्रदान करेगा।

सन्दर्भ

1. *भारतीय संस्कृति – डॉ० शिवबालक द्विवेदी, ग्रन्थम, मेस्टन रोड, कानपुर*
2. *मनुस्मृति– डॉ० शिवबालक द्विवेदी, ग्रन्थम, मेस्टन रोड, कानपुर*
3. *काव्यमीमांसा– जयकृष्णदास हरिदासगुप्त, चौखम्बा संस्कृत सीरीज ऑफिस, बनारस,(1991)*
4. *संस्कृत आलोचना– बलदेव उपाध्याय, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ,(2009)*
5. *स्वप्नवासवदत्तम् – डॉ० गणेशदत्तशर्मा, साहित्य–भण्डार,मेरठ,(1975)*
6. *स्वप्नवासवदत्तम्– दिनेश प्रसाद तिवारी, महाकाली प्रकाशन, कानपुर*
7. *स्वप्नवासवदत्तम्– डॉ० राकेश शास्त्री, धर्म नीराजना प्रकाशन, दिल्ली*
8. *स्वप्नवासवदत्तम् – आचार्य शेषराजशर्मा 'रेग्मी', चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी,(2019)*
9. *प्रतिमानाटक–जगदीशचन्द्र मिश्र, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी,(2016)*
10. *रघुवंश महाकाव्य – महावीर शास्त्री, साहित्य – भण्डार, मेरठ*

मङ्गलम् -वर्ष 13 (02) भाग-XXV,अगस्त 2022
ISSN-0976-8149 पृ.-224-230

दल–बदल कानून की प्रासंगिकता ?

शताक्षी शर्मा*
डॉ० ऋचा बजाज **

सारांश

पिछले दिनों पाँच राज्यों गोवा, उत्तराखण्ड, पंजाब, उत्तर प्रदेश, मणिपुर में हुये विधान सभा चुनावों ने फिर एक बार दल बदल कानून की ओर ध्यान आकर्षित किया है। जैसा कि हर चुनाव से पहले होता है, दल बदलु नेता अपने लिये नयी जमीन की तलाश में दल बदल करने में व्यस्त रहे। सन् 1985 में आया दल बदल कानून, जिसका उद्देश्य दल–बदल को कम करना, संसदीय लोकतंत्र को मजबूत करना तथा राजनीति से धन के प्रभाव को कम करना था, ऐसे दल बदल को रोकने मे असफल रहा है। यह शोध पत्र सन् 2014 के बाद दल बदल के कारण राजनीतिक अस्थिरता से ग्रस्त रहे राज्यों की स्थिति का विश्लेषण करता है तथा साथ ही दल बदल कानून वर्तमान में कितना प्रांसगिक रह गया है, पर भी चर्चा करता है। शोध पत्र विभिन्न विद्वानों द्वारा दिये गये सुझावों को भी प्रस्तुत करता है।

भूमिका

'दल–बदल' जिसे भारतीय राजनीति में 'आया राम, गया राम' के नाम से जाना जाता है, भारतीय राजनीतिक प्रणाली की एक प्रमुख विशेषता बन गया है। चुनावों के समय व उसके उपरांत' दल–बदलुओं की एक लहर आती है, जो अब भारतीय राजनीति में 'नवीन सामान्य' बन चुका है। यद्यपि लोकतांत्रिक प्रणाली में दल–बदल एक स्वस्थ किया है जो लोकतंत्र को कियाशील बनाये रखती है, परन्तु 21वीं सदी के भारत में जिस प्रकार 'राजनीतिक नैतिकता'[1] का पतन हो रहा है वह चिंता का विषय अवश्य है।

दल–बदल' लोकतंत्रो में सदा से होता आया है, जिसका प्रारंभ ब्रिटेन में लोकतंत्र की स्थापना के साथ ही हो गया था।[2] भारत में भी दल बदल स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात प्रारंभ हुये राजनीतिक संस्थानीकरण के साथ ही आरंभ हो गया था।[3] परन्तु यह विकराल रूप में चतुर्थ आम चुनावों (1967) के साथ सामने आया, यदि ऑकडो की बात करें तो 1967–71 के बीच 142 सांसदो तथा 1969 विधायकों ने दल बदल किया जिनमें से 212 को मंत्री पद देकर पुरूस्कृत किया गया।[4] चतुर्थ आम चुनावों के बाद 16 महीने के भीतर 16 राज्यों मे सरकारें गिरी।[5] वहीं 1972–77 के दौरान दल बदल के कारण 10 राज्य सरकारें हटीं जिनमें गुजरात, मणिपुर तथा उड़िसा सरकारें शामिल थीं।

**शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, श्री वार्ष्णेय महाविद्यालय, अलीगढ़ (उ०प्र०)*
***सहायक प्राध्यापिका, राजनीति विज्ञान विभाग, श्री वार्ष्णेय महाविद्यालय, अलीगढ़(उ०प्र०)*

सन् 1977–80 के दौरान 11 राज्य सरकारों को इसी कारण हटना पड़ा। एक आंकड़े के अनुसार 1985–2009 तक संसद में 88 तथा राज्य विधायिकाओं में 268 विधायकों के खिलाफ शिकायतें हुईं जिनमें से 26 सांसदों तथा 112 विधायकों को अयोग्य घोषित किया गया।[6] 1980 में इंदिरा गाँधी को मिले बहुमत के कारण कुछ नेताओं ने यह सोच कर एक प्रकार के संस्थागत दल बदल की शुरूआत की कि राज्यों की गैर कांग्रेसी सरकारों को बर्खास्त कर दिया जायेगा[7] तथा उन्हें सत्ता से हाथ धोना पड़ेगा।

अतः इस अस्थिरता तथा दल–बदल पर रोक लगाने के लिये राजीव गाँधी सरकार ने सन् 1985 में संविधान में 52वाँ संशोधन किया, जिसे 'दल–बदल कानून' के नाम के जाना जाता है।[8]

क्या है दल–बदल कानून

52 वे संविधान 1985 के द्वारा संविधान के अनु 102 तथा 191 में संशोधन किया गया तथा एक नयी अनुसूची जोड़ी गयी।

दसवीं अनुसूची में चार प्रकार के मामलों में अयोग्य घोषित करने का प्रावधान किया गया है–

1. यदि कोई सांसद अथवा विधायक स्वेच्छा से दल की सदस्यता त्यागता है।[9]
2. यदि वह दल के निर्देशों से अलग जाकर मतदान से अनुपस्थित रहता है अथवा विरोध में मत डालता है।[10]
3. यदि निर्दलीय सदस्य किसी दल की सदस्यता ले लेता है।
4. यदि मनोनीत सदस्य मनोनयन के छः माह बाद किसी दल से जुड़ जाता है।[11]

संविधान में 'दल बदल कानून' जोड़ने के पीछे उद्देश्य था कि संसदीय लोकतंत्र को मजबूत बनाया जा सके व राजनीति में धन के प्रयोग को कम किया जाये।[12]

कानून अस्तित्व में आने के साथ ही इसके उपबंध 2 (1)(ब) को लेकर आलोचना की जाती रही है कि यह माननीयों के विचार व अभिव्यक्ति की स्वतत्रंता से खिलवाड़ करता है।[13] परन्तु यदि देखा जाये तो भारतीय राजनीति में ऐसे अवसर कम ही देखने में आये है जब किसी माननीय ने अपने दल से इतर जाकर विरोध में मतदान किया हो या अनुपस्थित रहा हो। भारत में अधिकाशतः दल बदल चुनाव से पहले अथवा चुनाव के तुरन्त बाद सत्ता का गणित लगाकर होते है। दल बदल कानून ने वास्तविक असहमतिपूर्ण आवाजों

को दबाने तथा दलों को अपने झुंड को साथ रखने में सहयोग का काम किया है जिससे आंतरिक दल–लोकतंत्र की हत्या हुई है।[14] पिछले कुछ वर्षो में हुये दल बदल पर गौर करें तो इसके कारण कई राज्यों में सरकारें गिरी। दल बदल के माध्यम से निर्वाचकों के निर्णयों को नकार दिया जाता है क्योंकि जिस दल को बहुमत नहीं मिला होता वह दल–बदल करवाकर सत्ता पर काबिज होते हैं तथा बहुमत प्राप्त दल इससे वंचित रह जाता है, जैसा कि गोवा, मणिपुर, आदि में देखने को मिला।[15]

अरूणाचल प्रदेश

2014 में हुये विधान सभा चुनावों में कांग्रेस को 60 में से 44 सीटें प्राप्त हुयी तथा उसकी सरकार बनी। परन्तु विधायक पेमा खांडू ने कांग्रेस से इस्तीफा देकर पीपल्स पार्टी ऑफ अरूणाचल प्रदेश बनायी तथा भाजपा द्वारा बनाये गये गठबंधन में शामिल हो गये। यही पेमा खांडू फिर जुलाई 2016 में कांग्रेस में शामिल हुये तथा मुख्यमंत्री पद से नवाजे गये। परन्तु सितम्बर 2016 में ही यह दोबारा अपने बनाये दल में गये तथा अपने साथ कांग्रेस के 44 में से 43 विधायकों को भी ले गये। एक महीने के बाद औपचारिक रूप से भाजपा से जुड़े तथा सरकार बनाने का दावा पेश किया।

मणिपुर

यहाँ 60 विधानसभा सीटों मे से 21 भाजपा तथा 28 कांग्रेस के खाते में गयी। भाजपा ने अपनी 'दल–बदल अभियांत्रिकी' के लिये केन्द्रीय मंत्री पियूष गोयल तथा प्रकाश जावड़ेकर को मणिपुर भेजा तथा काफी सौदेबाजी के बाद एन0पी0पी0 के चार, क्षेत्रीय दलों के पाँच तथा कांग्रेस के एक विधायक को अपने पाले में कर वहाँ खाटी कांग्रेसी नेता बीरेन सिंह के नेतृत्व में पहली भाजपा सरकार का गठन हुआ।

गोवा

दल बदल के लिये जाना जाने वाला गोवा[16] जिसमें भी 2017 के चुनावो में सबसे बड़ा दल सरकार बनाने में विफल रहा तथा दल बदल के माध्यम से 13 सीटें जीतने वाली भाजपा सरकार बनाने में सफल रही, इस कार्य में भाजपा का साथ दिया गोवा फॉरवर्ड ब्लॉक ने, जो चुनाव के दौरान भाजपा की कटु आलोचक रही।

कर्नाटक

224 सीटों वाली कर्नाटक विधानसभा में 2018 के चुनावों में भाजपा ने 105, कांग्रेस ने 78 तथा जद (एस) ने 34 सीटें जीती। भाजपा ने सरकार बनाने का दावा पेश किया परन्तु तीन दिन बाद बहुमत साबित न कर पाने के

कारण सरकार गिर गयी तथा कांग्रेस जद (एस) गठबंधन की सरकार बनी। 14 महीने बाद ही 17 विधायकों ने इस्तीफा दिया तथा सरकार अल्पमत में आ गयी। सदन अध्यक्ष ने 17 विधायकों को अयोग्य घोषित कर दिया जिससे सदन की संख्या 207 रह गयी तथा भाजपा ने सरकार बनायी।इन विधायकों ने उप चुनाव में भाजपा के टिकट पर चुनाव लड़ा जिनमें से 12 दोबारा जीतकर सदन पहुँचे।[17]

मध्य प्रदेश

मुख्यमंत्री पद न मिलने से असंतुष्ट चल रहे सिंधिया ने 22 विधायकों के साथ सदन से इस्तीफा दिया जिससे सरकार गिर गयी। सिंधिया ने भाजपा का दामन थामा तथा शिवराज सिंह चौहान के नेतृत्व में सरकार बनी, सिंधिया के साथ आये विधायकों में से कुछ को मंत्रीपद पर बैठाया गया तथा स्वयं सिंधिया केन्द्रीय कैबीनेट का हिस्सा बने।[18]

इस्तीफा तथा दल–बदल कानून

इन विभिन्न राज्यों में हुये दल–बदल का विश्लेषण करें तो ज्ञात होता है कि माननीयों ने कानून को निष्प्रभावी करने का मार्ग खोज लिया है और वह मार्ग है–इस्तीफा। इस्तीफा दल–बदल कानून को धता बताने की नयी विधि बन गयी है जिसके विषय में कानून में कोई वर्णन नहीं है।[19] वरिष्ठ वकील विराग गुप्ता कहते है कि 'देश व्यापी कोई बहुत बड़ी वजह हो, आदर्शों की बात हो या कोई बहुत उसूल की बात हो तब तो ठीक है लेकिन बिना वजह त्यागपत्र देने के बाद अगला चुनाव आप फिर से लड़ रहे है तो ये तकनीकी तौर पर तो सही है लेकिन व्यवहारिक तौर पर ये सारे माननीय कानून में बारूदी सुरंग लगा रहे है।[20] राजस्थान सरकार में राज्य मंत्री राजेंद्र गूढ़ा ने कहा था कि मैं चुनाव बसपा से जीतता हूं फिर मैं कांग्रेस में जाकर मंत्री बन जाता हूँ। जब कांग्रेस में दरी उठाने का वक्त आता है तो कहता हूँ कि भाई कांग्रेस अब तुम संभालों फिर दोबारा चुनाव में बहन जी से टिकट ले आया, बसपा से कांग्रेस में आ गया, मंत्री बन गया, मेरे खेल में कोई कमी है क्या?[21]

संसदीय लोकतंत्र तथा कानून

जैसा कि पहले बताया जा चुका है कानून निर्माण के पीछे उद्देश्य संसदीय लोकतंत्र को मजबूत करना था। भारतीय संविधान के अनु0 75(3) के अनुसार 'मंत्रीपरिषद सामूहिक रूप से लोकसभा के प्रति उत्तरदायी होगी।''[22] परन्तु दल–बदल कानून के कारण सदन में किसी भी विधेयक को लेकर खेमों का निर्माण हो जाता है जैसा कि 2012 में मल्टी ब्रांड रिटेल में 51% FDI के मुद्दे पर देखने को मिला, कांग्रेस के सभी विधायकों ने नीति के पक्ष में तथा

भाजपा के विधायकों ने विरोध में मतदान किया।[23] इसी प्रकार तीन कृषि कानूनों की स्थिति रही विधेयक बहुमत से पास हुआ तथा ध्वनि मत से 4 मिनट के भीतर वापस भी हुआ।[24] इस कानून के लागू होने के बाद मतभेद रखने वाले माननीय कानून को बनने से रोकने के लिये अधिक कुछ कर नहीं सकते क्योंकि दल अनुशासन के नाम पर उनसे मतभेद का अधिकार छीन लिया गया है। ऐसी स्थिति में संसद कार्यपालिका पर नियंत्रण रख पायेगी? यह विचार योग्य है। जहाँ एक तरफ संसदीय लोकतंत्र में दल–बदल आवश्यक है वहीं दूसरी तरफ यह लोकतंत्र के सार को नष्ट करने का माध्यम बन गया है। तथ्यों के माध्यम से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि दल–बदल के पीछे कारण मंत्रिपद का लालच है न कि कोई लोकतांत्रिक इच्छा।

धन का प्रभाव तथा कानून

कर्नाटक में भाजपा ने दल–बदल करवाने के लिये भारी मात्रा में अवैध धन तथा मंत्रीपद का लालच दिया। वहीं मध्यप्रदेश में 10 कांग्रेस विधायकों को गुरूग्राम के एक बड़े रिसोर्ट में रखा। कांग्रेस ने आरोप लगाया कि भाजपा ने बंगलुरू में 19 विधायकों को जिनमें 6 मंत्री शामिल है, कैद किया हुआ है।[25]

ध्यान देने योग्य बात यह है कि दल अब सरकारी मशीनरी का प्रयोग भी करने लगे है। चुनाव कार्यक्रमों की घोषणा के बाद एक महीने के अंदर 84 स्थानों पर छापा पड़ा, सभी विरोधी दलों से संबंधित स्थान थे। मध्य प्रदेश में अकेले 300 से ज्यादा आयकर विभाग के अधिकारियों ने 52 से ज्यादा स्थानों पर जांच की जो सभी मुख्यमंत्री के सहयोगी प्रवीण कक्कर तथा राजेन्द्र कुमार से संबंधित थे। भाजपा से जुड़ते ही इन नेताओं पर लगे आरोप खत्म हो गये।[26]

निष्कर्ष

द प्रिंट' के सर्वे के अनुसार राज्यों में 29% मंत्री दूसरे दलों के आये हुये माननीय है।[27] यदि देखा जाये तो त्रिशंकु विधानसभा की स्थिति में अब दल–बदल कुछ हासिल करने तथा नेताओं के रातों–रात अमीर बनने का रास्ता बन चुका है।[28] शक्ति तथा लालच का यह मिश्रण अमर, अजेय तथा विनाशकारक बन चुका है। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि अधिकांश दल बदल स्वार्थ कारणों से होते हैं जो कल्याण प्रेरित नहीं वरन् सत्ता प्रेरित होते है। इस पर नियंत्रण का कोई संकेत दिखाई नहीं देता, सत्ता की चाह ही प्रचलन में हैं। यह प्रतिनिधिक सरकार की सच्ची आत्मा को खंडित करता है तथा निर्वाचकों के खिलाफ धोखेबाजों की समिति जैसा दिखता है। यह कानून इस बीमारी की दवा करने में असफल रहा है।[29] ठीक चुनाव के पहले अपना दल त्याग कर गये तथा दूसरे

दल से टिकट लेकर लड़े नेताओं को दल द्वारा एक निश्चित समय तक चुनाव का टिकट नहीं दिया जाना चाहिये। यह कानून दल बदलुओं के लिये दण्डात्मक कार्यवाही का प्रावधान करता है जबकि इसे प्रोत्साहन देने वाले दलों के लिये कोई प्रावधान नहीं है। विधि आयोग की 170वीं रिपोर्ट में कहा गया है कि राजनीतिक दल सरकार बनाते हैं, विधायिका में बैठते हैं तथा शासन चलाते हैं इसलिये यह आवश्यक है कि इनमें आन्तरिक लोकतंत्र, पारदर्शिता तथा जवाबदेही हो। सत्ता की चाह में होने वाले दल–बदल के मामलों में न केवल मंत्रीपद से रोका जाना चाहिये। वरन् विशेष समय तक दोबारा चुनाव में खड़े होने से भी रोक देना चाहिये।

सन्दर्भ

1. *Prakash, Satya, 'Political Defection: Law can't be a substitute for ethics', the tribune, Feb, 3, 2021 available at m.tribuneindia.com*
2. *फड़िया बी0एल0, भारतीय शासन तथा राजनीति, पेज 629ए ISBN 978.33. 84.885.85.4*
3. *Ibid*
4. *'How Politicians normalized defections, March 25, 2019, Livemint, available at www. livemint.com*
5. *फाडिया, बी0एल0, 'भारतीय शासन एवं राजनीति, पेज 628, ISBN 978] 93–84'885–86&4*
6. *कुमार, प्रदीप, 'Politics of Defection in Indian Political system' journal of Global Research & Analysis, vol.5(1), ISSN 2278-67759*
7. *झा, अजय, 'अवसरवादियों के लिये राजनीति आखिरी सहारा, यह साबित कर रहे दल बदल नेता', tv9 hindi, available at www. tv9hindi.com*
8. *इस संशोधन द्वारा सविधान में 10 वीं अनुसूची जोड़ी गयी।*
9. *अनुच्छेद 2 (1) (a)*
10. *अनुच्छेद 2 (1) (b) हालंकि इस प्रकार का दल–बदल भारतीय राजनीति में कम देखने को मिलता है।*
11. *सिन्हा, रोशनी और कौर, प्राची , 'Anti Defection Law: Intent and Impact' PRS Legislative Research, Dec 2019*
12. *S.Kumar ;2016), ' Threatening Indian Democratic System: Case of Anti Defection Law' Round Table India: for an informed Ambedkar Age, roundtableindia.com.*
13. *Chaudhary Jeet Whether Dissent Equals Defection in the Indian Parliaments ?, May 27, 2010,available at SSRN: http:ècomèabstract = 1616520*
14. *Prakash, Satya,'Political Defection : Law can't be a substitute*

for ethics' The Tribune, Feb 3, 2021 available at m.tribuneindia.com.

15. *सरकार, दिया तथा मिश्रा, प्रफुल्ल 'An Analytical study on the politics of Defection in India' International Journal of Law and Political Science, Vol 12, Nov 2018.*
16. *The New Indian Express, Jan 23,2022 www. newindianexpress.com*
17. *'How BJP has been outplaying Congress to govt. in states where it lacked majority. The Print, March 13,2020 available at theprint.in.'*
18. *'Jyotiraditya Scindia rewarded for delivering Madhya Pradesh to BJP', The Tribune, July 7, 2021 www. m.tribuneindia.com*
19. *राज, कालीश्वरम','Defection, Corruption and Law,' The New Indian Express, April 12,2021 available at newindianexpress.com*
20. *मध्य प्रदेशः दल बदल कानून कैसे हुआ बेमानी',BBC News Hindi,ekpZ 11,2020 available at bbc.com*
21. *आजतक, 18 जनवरी 2022, Available at www.aajtak.in*
22. *कुमार, एस (2016) 'Threatening Indian Democratic System: Case of Anti Defection Law' Round Table India: for an informed Ambedker age, roundtable.com*
23. *सिन्हा, रोशनी और कौर, प्राची,'Anti-defection Law: Intent and impact' PRS Legislative Research, दिसम्बर 2015*
24. *Parliament Parsses bill to cancelthree farm Laws' Livement, uoEcj29,2021 available at www.livement.com*
25. *Singh, Ashwin, 'Law to Deal with Horse Trading of Legislators, March 15. 2021 available at SSRN:https:èèssrn.comèabstract=3804523*
26. *Christophe Jaffrelot & Gilles Verniers (2020),'ANew Party system or a new Political system?' ContemporarySouth Asia, 28P:2, 141-154, Doi:10 1080è0955 2020.1765990*
27. *'BJP no more party with a difference over 25% of its ministers in states are defector.' The Print, March 22,2019 , available at theprint.in*
28. *झा, अजय, 'अवसरवादियों के लिये राजनीति आखिरी सहारा साबित कर रहे हैं' दल–बदलू नेता', जनवरी 21, 2022 available at www.tv9hindi.com*
29. *सरकार, दिया तथा मिश्रा प्रफुल्ल 'An Analytical study on the politics of Defection in India' International Journal of Law and Political Science, Vol 12, Nov 2018. www.tcshindi.com*

मङ्गलम् -वर्ष 13(02) भाग-XXV, अगस्त 2022
ISSN-0976-8149 पृ.-231-238

बंदियों के अधिकारों की रक्षा में राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग की भूमिका

*डॉ० अखिलेश्वर शुक्ला **
*राज शेखर शुक्ला ***

सारांश

मानव अधिकार शाब्दिक रूप से वे अधिकार है जो व्यक्ति को मानव होने के नाते प्राप्त है जहां लोगो को योजनाबद्ध तरीके से वंचित किया जाता है वहां मानव अधिकार हासिल करने के लिए लोगो को निश्चित रूप से क्रांतिकारी बनना होता है।किसी भी सभ्य समाज में रहने वाले व्यक्ति को यह मौलिक अधिकार प्राप्त है कि उसके प्राण,स्वतंत्रता और समता तथा गरिमा को अक्षुण रखा जाए। मानव अधिकार किसी भी सभ्य समाज के बंदियों के विकास के मूल आधार होते है ।

जिस समाज में मानवाधिकारों का सम्मान नही होता है वे समाज सभ्यता की दौड़ में काफी पीछे रह जाते है और जो अधिकार मानव गरिमा को बनाए रखने के लिए आवश्यक है उन्हे मानवाधिकार कहा जाता है।1945 में सयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना के लिए अनेक प्रतिनिधियों ने चार्टर की प्रस्तावना में मानव के मौलिक अधिकारों,मानव के व्यक्तित्व के गौरव तथा महत्व में,पुरुष एवम् स्त्री के समान अधिकारों में विश्वास प्रकट किया गया है अनुच्छेद एक के अनुसार सयुक्त राष्ट्र संघ का मुख्य कार्य "जाति ,लिंग,भाषा या धर्म के आधार पर भेदभाव किए बिना सभी के मानवाधिकारों और मूल स्वतंत्रताओ को समान करने को बढ़ावा देना है।सयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा द्वारा 10 दिसंबर 1948 को इसे सर्वसम्मति से पारित किया गया मानवाधिकार की वैश्विक घोषणा के अनुच्छेद एक और दो में कहा गया है कि " सभी मनुष्य अधिकार और सम्मान लेकर जन्म लेते है। और उन्हें वैश्विक घोषणा में वर्णित सभी अधिकार और स्वतंत्रा, जाति ,रंग,लिंग ,भाषा ,धर्म ,राजनीतिक या अन्य विचारधारा राष्ट्रीय या सामाजिक ,मूलसंपत्ति जन्म या अन्य स्थितियों के किसी भेदभाव के बिना स्वतः मिल जाते है।"

शोध शब्द– अधिकार, सयुक्त राष्ट्र संघ सुरक्षा, अपराध, न्यायालय, जाति,धर्म,भाषा।

प्रस्तावना

मानव अधिकार और बंदियों के अधिकारों की रक्षा एक सार्वभौमिक तथ्य है।बंदियों के संरक्षण,उनके प्रति चिंता आज के समय की मांग है।बंदियों के अधिकारों की रक्षा की एक मात्र गारंटी परस्पर सद्भाव ही है। जहां यह सद्भाव नही रहता है तथा समाज में रहने वाले लोग एक दूसरे वर्ग के प्रति

**एसोसिएट प्रोफेसर राजनीतिविज्ञान विभाग, राजा श्रीकृष्ण दत्त पी जी कालेज जौनपुर (उ०प्र०)*
***शोध छात्र राजनीति विज्ञान विभाग, वी बी एस पूर्वांचल विश्वविद्यालय जौनपुर (उ०प्र०)*

असहिशुंता का व्यवहार करने लगते है वही सरकारों को हस्तक्षेप करने की आवश्यकता करनी पड़ती है यह हस्तक्षेप आमतौर पर पुलिस वर्ग के रूप मे सामने आता है इसी लिए आयोग और पुलिस प्रशासन का पहला कर्तव्य है कि वे बंदियों के अधिकारों की रक्षा करे।

बंदी वे व्यक्ति होते है जिन्हे जेल में रखा जाता है,चाहे वे व्यक्ति किसी भी अपराध के दोषी हो या न हो,अपराध किया हो या न किया हो फिर भी अन्य अपराधियों के साथ दोषी बन जाते है ।इनमे अधिकांश व्यक्ति ऐसे है जो जमानत पोस्ट करवाने के लिए पर्याप्त धन भी नहीं जुटा पाते है और इसी लिए आपराधिक आरोपों पर मुकदमा चलने तक उन्हें जेल से रिहा नही किया जाता है।

बंदियों को उनकी पसंद के अनुसार आने जाने के अधिकार के अलावा किसी भी अधिकार से वंचित नही किया जा सकता है न्यायालय द्वारा निचली संघीय अदालतों की गई जिन्होंने जेल प्रशासकों विस्तृत आदेश दिए थे कि उन्हें अपना काम कैसे करना चाहिए जेल में केवल दोषसिद्ध से पहले बंदियों को दंडित करने के लिए डिजाइन किए तरीको को नियोजित नहीं कर सकते है वे सुरक्षा और अनुशासन के उद्देश्य के लिए उपयुक प्रक्रियाओं का ही प्रयोग कर सकते है।,बंदियों के अधिकारों से संबंधित कानून 1970 के दशक में उभरा।बेल बनाम वोल्फिश में441,यू एस 520,99 एस सीटी, 1861, 60एल एड 2क ,447(1979) सुप्रीमकोर्ट द्वारा इन सिद्धांतों को खारिज कर दिया गया और कहा गया कि प्री ट्रायल बंदियों को उनके पसंद से आने जाने के अधिकार के अलावा किसी भी अधिकार से वंचित नही किया जा सकता है। हडसन बनाम पामर,468 यू एस 517,104 एस सीटी में 3194,82 एल एड ,393(1984) में सुप्रीम कोर्ट ने घोषणा की थी कैदियों को अनुचित खोजो और उनकी संपत्ति की जब्ती से मुक्त होने का चौथा संशोधन अधिकार नही है अभी तक चौथा संशोधन उनके लिए लागू नही है।

आज भी दुनिया भर में बंदी महिलाओं और बच्चों के साथ हो रहे अवैध व्यापार को रोकने के लिए मानवाधिकार संगठनों के प्रयासों को महत्व देना बहुत आवश्यक है। समय समय पर बंदियों में को शारीरिक रूप से अशक्त लोगों के अधिकारों और सम्मान की रक्षा करने के विषय मे विश्वस्तरीय वार्ताओं से भी अपेक्षित परिणाम नही निकले है।आज भी अनेक देश ऐसे है जहां बंदियों मानवाधिकारों के हनन के लिए कोई दंडात्मक कार्रवाई नहीं की गई जाने कितने ऐसे बंदी है जो अभी तक बिना मुकदमों के जेल में पड़े है।।अनेक देशों में सरकारी संस्थाएं,व्यक्तियों,समूह द्वारा व्यापक पैमाने पर मानवाधिकार का हनन एक वास्तविकता है। अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार संगठन एमनेस्टी इंटरनेशनल

ने बार बार इस ओर विश्व जनमत का ध्यान आकृष्ट करने का प्रयास किया कि सभी बंदियों के अधिकारों की रक्षा की जाए।रूस,,चीन, अमेरिका,,ईरान,सऊदी अरब, पाकिस्तान और भारत जैसे महत्वपूर्ण देशों में आज फासी जैसी सजा को समाप्त नही किया गया जबकि अधिकांश देशों मे बंदियों के अधिकारों की रक्षा के लिए इसे समाप्त कर दिया गया था। जिससे देश के सभी नागरिकों के अधिकारों की रक्षा की जा सके।

बंदियों को जेल की सेटिंग में गोपनीयता की अपेक्षा करने का अधिकार नही है अदालत के फैसले ने स्थापित किया कि जेल अधिकारी बंदियों की बात चीत की निगरानी और रिकार्ड रख सकते है ,बंदी और आगंतुक को चेतावनी दी जाए कि ऐसा किया जायेगा कि बंदी और बंदी के वकील या पति ,पत्नी के बीच कानूनी रूप से गोपनीयता प्रदान करने बाली बात चीत में जेल अधिकारी कोई दखल नहीं दे सकता है।

बंदियों के अधिकारों पर एक कानून विकसित हुआ है परंतु आज भी भारत में बंदियों के अधिकारों पर कोई सहिंताबद्ध कानून नही है बंदियों के अधिकारों से निपटने और जेल में उनके आचरण को विनियमित करने के लिए कोई व्यापक कानून नही बनाया गया है। न्यायपालिका द्वारा दोषियों को उचित मान्यता तो दी गई ,साथ ही उनके अधिकारों को भी बार बार दोहराया गया परंतु सम्पूर्ण कानून के अभाव में भी यह बंदियों के विभिन्न अधिकारों को कायम रखने बाली मिसालें और सिद्धांत स्थापित करने में कामयाब रहा है जो बंदियों में न केवल मारदर्शन करते है बल्कि भारत में भी सभी अदालतों को बांधते है। मौलिक अधिकार भारत में मानवाधिकारों के मूल में है।यही नागरिकों के मूल अधिकार भी है जिन्हे किसी भी परिस्थिति में नागरिकों से छीना नही जा सकता है।हमारे देश के कानून इनमे से कुछ अधिकारों की गारंटी बंदियों को देता है अनुच्छेद 14,19,21 यह कैदियों को लाभ के लिए मौलिक अधिकारों को पूरी तरह से लागू नही कर सकता लेकिन यह बंदियों को निष्पक्ष प्रक्रिया का अधिकार प्रदान करता है।

अनुच्छेद 21 किसी भी प्रतिबंध में तर्कसंगतता लागू करना,अनुच्छेद 19(5) बंदियों के व्यापक विवेकाधिकार को मनमाने ढंग से भेदभाव में बदलना।

एक मनुष्य का दृण विश्वास उसे गैर मानव भी नहीं बनाता ,अभी भी वह एक इंसान है जिसके साथ जैसा व्यवहार किया जाए उसे पृथ्वी पर रहने और चलने के लिए हर बुनियादी अधिकार उपलब्ध कराए जाने चाहिए उसे पूर्ण अधिकार और विलासिता के साथ एक स्वतंत्र व्यक्ति के रूप में नही माना जाना चाहिए। उस मनुष्य की स्वतंत्रता कुछ सीमाओं और कानूनी प्रतिबंधों के

अधीन होने चाहिए साथ ही इनके प्रतिबंध उचित भी होने चाहिए।

डीबी एम पटनायक बनाम आंध्र प्रदेश राज्य और सुनील बत्रा बनाम दिल्ली प्रशासन में कहा गया कि "हमे यह महसूस करना चाहिए कि एक बंदी एक इंसान होने के साथ साथ एक प्राकृतिक व्यक्ति , कानूनी व्यक्ति भी है।"

1. जानसन बनाम एवरी के मामले में बंदियों के अधिकारों को मान्यता दी गई थी, जो अधिकार काफी परिवर्तन प्रगतिशील रहे है।भारतीय क्षेत्र में देश की न्यायपालिका ने कैदियों के बचाव के लिए बार बार संविधान के मौलिक अधिकारों का आह्वान किया है

2. मैरी आंद्रे बनाम द सुप्रिटेंडेंट तिहाड़ जेल के माध्यम से सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश न्यायमूर्ति कृष्ण अय्यर ने चार्ल्स सोबराज के प्रसिद्ध मामले में कहा कि " कैद मौलिक अधिकारों के लिए विदाई नही है,वल्कि एक यथार्थवादी पुनर्मूल्यांकन द्वारा ,अदालतें एक स्वतंत्र नागरिक द्वारा आनंदित भाग तीन की पूरी तरह से मान्यता देने से इंकार कर देगी।"

3. आंध्र प्रदेश राज्य बनाम चल्ला रामकृष्ण रेड्डी के मामले में अदालत ने माना कि एक बंदी सभी मौलिक अधिकारों का हकदार है जब तक कि संविधान द्वारा कटौती नही की जाती है।

4. महाराष्ट्र राज्य बनाम प्रभाकर पांडुरंग सांजगीर में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि यदि किसी को हिरासत में लिया गया है तो वह मौलिक अधिकारों से वंचित नही हो सकता है प्रत्येक बंदी ऐसे सभी अधिकार का हकदार है जो एक स्वतंत्र नागरिक को प्राप्त है सिवाय इसके जो कारावास की घटना के रूप में आवशयक रूप से खो जाता है।

5. चार्ल्स सोबराज बनाम अधीक्षक सेंट्रल जेल तिहाड़ में फैसला सुनाया गया था कि अनुच्छेद 14,19,21 के तहत बंदियों के लिए सभी अधिकार सीमित है लेकिन उन्हें स्थिर नहीं कहा जा सकता है, चुनौती पूर्ण परिस्थितियां उत्पन्न होने पर प्राप्त किए जा सकते है।–

एकांतता का अधिकार

निजता का अधिकार भारत के नागरिकों के लिए उपलब्ध महत्वपूर्ण अधिकारों मे से एक है।वे भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 के त्तहत जीवन के अधिकार और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का एक आंतरिक हिस्सा है।वर्षो से अदालतों द्वारा पारित विभिन्न निर्णयों के माध्यम से बंदियों और दोषियों पर भी लागू किया गया है। भारत में इस अधिकार का शायद सबसे अधिक उल्लघन किया जाता है तलाशी और जब्ती के संबंध में निजता का अधिकार पहली

बार 1950 के दशक में उठाया गया था भारतीय संविधान के अनुच्छेद 19(1) एफ में तलाशी और जब्ती को उल्लघंन के रूप में नही देखा जा सकता है किसी भी नागरिक की संपत्ति के अधिकार को समाप्त या नुकसान नहीं पहुंचाता है यदि तलाशी या जब्ती से ऐसे अधिकार को प्रभावित किया गया तो इसका प्रभाव अस्थाई माना जायेगा और इसे नागरिकों के अधिकारों के उचित प्रबंध के रूप में माना जायेगा।

मानवीय गरिमा के साथ जीने का अधिकार

नागरिकों को सम्मान के साथ जीने का अधिकार संविधान द्वारा संरक्षित है यह अधिकार बंदियों को भी दिया जाता क्योंकि वे सजा मात्र से हीं अमानवीय नही हो जाते है यह अधिकार भारत के संविधान के तहत गारंटी से जीवन जीने के अधिकार का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है,प्रत्येक नागरिक का जीवन अनमोल होता है और वह परिस्थितियों के बाबजूद भी उसे जीने में मदद करने के लिए उसे सम्मान की भावना दी जानी चाहिए ।अदालतों ने इस अधिकार को शामिल करने के लिए अनुच्छेद 21 के दायरे को बढ़ा दिया है ।ऐसी बंदियों की घटनाओं को कई मामलों में नोट किया जा सकता है ।

गांधी जी ने बंदीग्रहों को सदैव सुधारलय बनाने की अनुशंसा की थी उनका मानना था कि अपराध ऐसे व्यक्तियों द्वारा किए जाते है जो बीमार मानसिकता के शिकार होते है । बंदियों को सुधार की आवश्यकता है न कि दंड की। आधुनिक युग में कारागार एक महत्वपूर्ण शक्तिशाली सुधारात्मक संस्था के रूप में उभरकर सामने आए। बंदियों के पुनर्समाजीकरण का महत्वपूर्ण कार्य कारागारों के माध्यम से हो रहा है आज कारागार सामाजिक परिवर्तन का महत्वपूर्ण एवम शक्तिशाली इकाई बन गए है जहां एक व्यक्ति अपूर्ण सामाजिक व्यक्तित्व से आत्मनिर्भर,अनुशासित व्यक्तित्व बनकर समाज में समाहित होता है।आज कारागार प्रशासन का उद्देश्य बंदी को मात्र दंड देना नही है बल्कि उसे आत्मनिर्भर बनाकर समाज में पुनर्वासित करना है।जहां बंदियों को नैतिक ,धार्मिक सामाजिक, व्यवसायिक शिक्षा दी जाती है,वही उन्हें रोजगार के अवसर भी उपलब्ध कराए जाते है।भारतीय जेल प्रशासन बंदियों को पुनर्वासित करने के उद्देश्य में उतना सक्षम नही है,फिर भी एन सी आर बी के आंकड़ों के मुताबिक ऐसे बंदियों का बाहुल्य है जो प्रथमतः अपराधी है ।बंदियों के समूह एक समान नही होते अधिकांश निर्धन एवम अशिक्षित भी होते है,जिन्हे रोजगार के अवसर उपलब्ध भी नही होते है।महिला बंदियों में कमजोर पृष्ठ भूमि सामने आई है। अधिकतर बंदी ग्रामीण परिवेश से संबंध रखते है राष्ट्रीय एवम अंतर्राष्ट्रीय कानून इस बात के लिए राज्य एवम केंद्र शासन को निर्देशित करती है यदि कोई व्यक्ति एक अपराधी के रूप में कारागार में परिरुद्ध किया जाता है तो

उसकी कारागार की अवधि का सृजनात्मक उपयोग किया जाना चाहिए ।जिससे उसकी अपराधिक प्रवृतियां सुधार सकें। बंदी व्यक्ति एक अनुशासित ,सामाजिक व्यक्ति के रूप में परिवर्तित हो सके।अंतर्राष्ट्रीय सामाजिक ,राजनैतिक अधिकार प्रसंविदा धारा 10(3) के अनुसार प्रत्येक कारागार प्रशासन का मुख्य उद्देश्य बंदियों का सुधार एवम पुनर्वास होना चाहिए बंदियों के लिए व्यवसायिक प्रशिक्षण एवम कार्य को दिनचर्या का महत्वपूर्ण अंग बनाया जाए। इन कार्यों को सुचारू रूप से करवाने के लिए निम्न उद्देश्य होने चाहिए –

1. बंदियों में अनुशासन एवम कार्य संस्कृति की आदत डालना।

2. बंदियों की कार्य के प्रति मनोवृत्ति, परिवर्तन विकास लाना उन्हें परिश्रम करने की गरिमा को समझना।

3. बंदियों में शारीरिक,मानसिक विकास विकसित करना।

4. सहयोगात्मक भावना का विकास एवम सामूहिक व्यवहार के साथ समायोजन करना।

5. जीवन यापन के लिए उनमें कड़े श्रम की आदत डालना। ताकि वे अपने अधिकारों को भी समझ सकें उन्हें उनके अधिकारों के प्रति जागृति करने

उनमें अपेक्षित सुधार की आवश्यकता है और ऐसे प्रयास भी किए जाएं जिससे बंदियों में सुधार लाया जा सके जैसे शिक्षा,व्यवसायिक शिक्षा, धार्मिक रीति नीतियों का पालन आदि है।

इतिहास में स्वतंत्रता आंदोलन कारियों का समय कारावास में एक काले अध्याय की तरह था जहां बंदियों को सुधार व अन्य किसी भावना के स्थान पर प्रताड़ित करने के लिए रखा जाता था कारावास ही बंदियों को रखने के एक स्थान मात्र होते थे जहां उनके लिए किसी भी प्रकार की मूल सुख सुविधाओं का आभाव होता था। गांधी जी का विचार था कि जेलों में बंदियों के लिए अस्पताल अस्पताल का वातावरण होना चाहिए न कि भय का,जिससे बंदी की मानसिकता का उपचार किया जा सके। आधुनिक काल में दंड के सिद्धांतों में परिवर्तन आया एवम कारागार प्रतिशोध एवम प्रतिकार के स्थान पर सुधारालय बनने लगे सर्वप्रथम सयुक्त राष्ट्र संघ के कारावास विशेषज्ञ वाल्टर रेकलेस ने बंदी ग्रहों के सुधारलयों में जोरदार अनुशंसा की बंदी के प्रमुख उद्देश्य निम्न है।

1. समाज में शांति व्यवस्था कायम रखना।

2. बंदी पुनर्समाजीकरण कर अनुशासित व्यक्ति के रूप में परिवर्तन करना।

3. आत्म निर्भर बनाकर समाज को पुनर्वासित करना।

4. आर्थिक एवम मनोवैज्ञानिक दृष्टि से स्वावलंबी बनाकर सुरक्षित रखना।

5. पुनः आपराधिता की दर कम करना ।

देश में होने वाले मानवाधिकार के उल्लघंन पर नजर रखने और उन पर विचार करने हेतु राष्ट्रीय मनवा अधिकार आयोग की स्थापना की गई ।यह आयोग एक स्वायत्त संस्था है जिसे अपने आप या पीड़ित बंदी व्यक्ति की तरफ से दायर मनवा अधिकार उल्लघंन संबंधी याचिका पर विचार करने का अधिकार है।यह अदालत की अनुमति से वहां लंबित मनवा अधिकार मामलों में हस्तक्षेप कर सकती है।आयोग जेल या अन्य संस्थाओं में रह रहे बंदियों की स्थिति पर विचार करने और सुधार करने के लिए किसी भी राज्य सरकार के नियंत्रण वाली किसी भी संस्था या जेल का दौरा कर सकता है,जहां बंदी को उपचार ,सुधार या रक्षा के लिए रखा गया है आयोग बंदियों के मानवाधिकार के संरक्षण हेतु संविधान के सुरक्षा के प्रावधानों की समीक्षा भी कर सकता है।

अधिनियम के तहत मनवा अधिकार उलंघन की शिकायतों की जांच करते समय आयोग के पास दीवानी अदालत के सभी अधिकार होते है। मानव अधिकार उलंघन की शिकायतें की तहकीकात करने के लिय आयोग के पास अधिकारी होते है साथ ही इस संदर्भ में वह केंद्र या राज्य के किसी भी अधिकारी की सेवा प्राप्त कर सकता है।

मानव अधिकार और उनकी रक्षा एक सार्वभौमिक तथ्य है। मानवाधिकारों मानवाधिकार के प्रति किसी व्यक्ति की उदासीनता का सबसे मुख्य कारण शिक्षा का अभाव। सरकार के अनेकों प्रयास के वावजूद भी देश मे आज दुनिया भर में बंदियों साथ हो रहे अत्याचार को रोकने के लिए मानवाधिकार संगठनों के प्रयासों को महत्व देना बहुत आवश्यक है।समय समय पर शारीरिक रूप से अशक्त लोगों के अधिकारों और सम्मान की रक्षा करने के विषय में विश्व स्तरीय वार्ताओं से भी अपेक्षित परिणाम नहीं निकले।आज भी अनेक देश है जहां मानवाधिकारों के हनन के लिए कोई दंडात्मक कार्यवाही भी नही की जाती है।जाने कितने लोग बिना मुकदमे के जेल में पड़े सड़ रहे है।कई देशों में सरकारी संस्थाओं व्यक्तियों,समूहों द्वारा व्यापक पैमाने पर मानवाधिकारों का हनन एक वास्तविकता है। अंतरराष्ट्रीय मानवाधिकार संगठन एमनेस्टी इंटरनेशनल ने बार बार इस ओर विश्व जनमत का ध्यान आकृष्ट करने का प्रयास किया है।रूस अमेरिका ,चीन,ईरान,सऊदी अरब,पाकिस्तान ,भारत जैसे महत्वपूर्ण देश में आज तक फांसी की सजा को समाप्त नही किया गया जबकि विश्व के अधिकांश देशों में इसे समाप्त कर दिया गया। विश्व में लगातार बढ़ रही हिंसा और दमन कारी नीतियों को ध्यान में रखते हुए मानवाधिकार आयोग को मजबूत

करना चाहिए । इसे पूरी तरह सक्रिय करने में सहायता देनी चाहिए। समस्त जटिलताओं और अंतर्विरोधों के वावजूद मानवाधिकार आयोग के महत्व का अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि इसे किसी देश के सभ्य और सुसंस्कृत होने की कसौटी माना जाता है और आयोग मानव को सर्वप्रथम मानव मानकर उसके अधिकारों की रक्षा के लिए उठ खड़ा होता है। हमारे संविधान निर्माताओं ने भारत के बहुधर्मी ,बहुलवादी समाज को ध्यान में रखते हुए ही ऐसे संविधान की रचना की थी जिसमे देश के सभी नागरिकों को समान अधिकारों की रक्षा हो सके। अंत में मैं इतना कहना चाहूंगी आज मानवाधिकार के हनन के मामलों को मुख्य रूप से सहिष्णुता की संस्कृति को विकसित कर रोका जा सकता है जो शिक्षा के प्रयास से ही संभव है । इसी के साथ कानून का परिपालन करवाने वाली सभी संस्थाओं को शिक्षित प्रशिक्षित करने की आवश्यकता है।जिससे विश्व में कहीं भी मानवाधिकारों का हनन नही होगा इस आदर्श स्थिति को प्राप्त करने के लिए हम सब को मिलकर प्रयास करने चाहिए। तभी हम अपने अधिकारों की रक्षा कर सकेंगे।

सन्दर्भ

1. *सी बुंच एंड एस फ्रेस्ट "द ह्यूमन राइट्स आफ बुमेन पब्लिश्ड इन रूजवेल्ट इंटरनेशनल इनसाइक्लोपीडिया विमेन वर्ष 2000प्र. स .38।*
2. *जे भाग्य लक्ष्मी – योजना मानवाधिकार संरक्षण द्वारा अधिकार,समानता अगस्त 2009 प्र. स .21।*
3. *लाल श्रीवास्तव मानव अधिकार उद्भव विकास यात्रा कुरुक्षेत्र मई 2004 प्र .स. 34।*
4. *जगजीत सिंह मनवा अधिकार संरक्षण वर्ष 2002प्र .स. 48 सन्मार्ग नई दिल्ली।*
5. *कुरुक्षेत्र मानवाधिकारों की रक्षा नवीन पंत नई दिल्ली वर्ष 2004 प्र. स. 32 ।*
6. *उमेश कुमार नेमा मनवा अधिकारों का मूल्यांकन वर्ष 2008 प्र. स.188 परपुखाना राजा पार्क जयपुर।*
7 *टाइम्स आफ इंडिया वर्ष 2020 प्र स.24।*
8 *योजना अनीता सिंह – मानवाधिकार मानवीय संवेदना का घोतक वर्ष 2006 प्र .स. 8–11 ।*

Manglam International Journal of Humanities & Social Sciences

Application for Membership

website:www.mangalamallahabad.com

Membership ID. No.- .....

(For Official Use)

PHOTO

1. Name (with title, e.g. Dr/Prof./Mr./Ms.) 2. Male/Female

2. Designation and Address-(If retired, Last address)

3. Mailing/Permanent Address-

4. Telephone (With STD code)-

Office:..... Residence:.....

Mobile No.:..... E-Mail :.....

Fax No. :.....

5. Type Of Membership

One Year :- Rs. 2000/- Three Year :- Rs. 5000/- Life Membership* :- Year:- Rs. 10,000/-

(*For Ten Year's)

New you may deposit the Membership fee directly in Maglam International Journal of Humanities & Social Scial Sciences (ISSN : 0976-8149) Account as per Following details :-

Name of Bank : State Bank of India Prayagraj Branch : Civil Lines Prayagraj
Account Holder : Manglam Sewa Samiti, Prayagraj A/c No. : 65024854963
IFC Code : SBIN 0018245 MICR Code : 211007003

Please return this form to

Dr. Dinkar Tripathi

Editor : Manglam International Journal of Humanities & Social Sciences
463/359G-2 Shivam Apartment, New Mumfordganj, Prayagraj (U.P.)- India, 211002
website:www.mangalamallahabad.com
e-mail : drdinkartripathi@gmail.com

Manglam International Journal of Humanities & Social Sciences

Subscription Order Form

website:www.mangalamallahabad.com

1. **Name : .....**
2. **Address : .....**

   .....

   Tel./ Mabile No. ..... e-mail .....
3. **Life Membership of Manglam Sewa Samiti- Yes/No (If Yes then I.D. No.....)**
4. **Tpe of Subscription : Individual / Institon**
5. **Period of Subscription : Annual / Three year's / Life time***
6. **Number of Copies Subscription : .....**

Dear Editor,

Kindly acknowledge the receipt of my Subscription and staet sending the issue (s) of Manglam International Journal of Humanities & Social Sciences (ISSN-0976-8149) at follwing Aeddres.

.....

.....

.....

The Subscription rates ars sa Follow : w.e.f. 31.08.21\012

India (Rs.)	Members of Manglam Sewa Samiti	Individuals	Institutions
Single Copy	Rs. 300/-	Rs. 600/-	Rs. 750/-
Anaual Copy	Rs. 500/-	Rs. 1100/-	Rs. 1500/-
Three Copy	Rs. 1500/-	Rs. 8000/-	Rs. 4500/-
Life time*	Rs. 500/-	Rs. 1100/-	Rs. 10,000/-
OTHER COUNTRIES	**Members of Sewa Samiti**	**Individuals**	**Institutions**
Single Copy	$ 65	$ 80	$ 120
Anaual Copy	$ 120	$ 150	$ 240
Three Copy	$ 360	$ 430	$ 720
Life time*	$ 3000	$ 5000	$ 10,000

(*For Ten Year's)

New you may deposit the Membership fee directly in Maglam International Journal of Humanities & Social Scial Sciences (ISSN : 0976-8149) Account as per Following details :-

Name of Bank : State Bank of India Prayagraj Branch : Civil Lines Prayagraj

Account Holder : Manglam Sewa Samiti, Prayagraj A/c No. : 65024854963

IFC Code : SBIN 0018245 MICR Code : 211007003

Please return this form to

Dr. Dinkar Tripathi

Editor : Manglam International Journal of Humanities & Social Sciences

463/359G-2 Shivam Apartment, New Mumfordganj, Prayagraj (U.P.)- India, 211002

website:www.mangalamallahabad.com

e-mail : drdinkartripathi@gmail.com